



# कुरुक्षेत्र

[सांस्कृतिक एव ऐतिहासिक सिंहावलोकन]

कुंभर घासकृष्ण 'मुचतर'



विश्वविद्यालय प्रकाशन गृह  
नवीन शाहदरा-दिल्ली-३२

प्रकाशक

विश्व विद्यालय प्रकाशन गृह

दिल्ली ३२



⊙ बासकण्ठ 'मुञ्जतर'



प्रथम संस्करण

अगस्त सन् १९६५



मूल्य १२ ५०



मुद्रक

रामाकृष्णा प्रेस

बटारा मीन, दिल्ली

## समर्पण

अपने श्रेय पिता  
पं० राजाराम मारद्वारा  
को

—वासुदेव

भ्रात कष्टमहो महास्य नृपति सामन्त षष्ठं च तत्  
 पादर्वे तस्य च सापि राजपरिपत्तादक्षद्र बिम्बानना ।  
 उद्रिष्टः स च राजपुत्र मिबहृस्ते वन्दिनस्ता मया  
 संव मस्य वधादयास् स्मृति पदं कासायत म्मनम ॥

—मत्तु हरि

पहले यहाँ कैसी सुन्दर नगरी थी, उसका राजा कैसा उत्तम था,  
 उसका राज्य कितनी दूर तक था, उसके निकट सभा बैसी  
 होती थी और चन्द्रमुखी स्त्रियाँ कसी सोभायमान  
 थीं राजपुत्रों का समूह कैसा प्रबल था,  
 जैसे वह बन्दीगण थे और बैसी मया  
 कहत थे । अब वह सब जिय  
 बाल के यम होकर मृत ही  
 गए उस काल को  
 ममस्वार है ।

## अपनी बात

कुरुक्षेत्र का सम्बन्ध आज के युग से नहीं अपितु इसका सम्यन्व सृष्टि के जन्म के साथ-साथ चलता है। कुरुक्षेत्र धार्मिक ऐतिहासिक पौराणिक, अथवा सांस्कृतिक दृष्टि से क्या महत्त्व रखता है, इस पर पूर्ण रूप से प्रकाश डालने का यत्न किया गया है और यदि संभव इस प्रयास में सफल हो गया है, तब इसका निरूपण पाठकगण ही कर सकते हैं तो यह अपने को धन्य समझेगा।

पुस्तक के निर्माण की कहानी भी अनोखी और ऐतिहासिक वस्तु बन गई। पुस्तक की रचना पंजाब के भूतपूर्व राज्यपाल श्री चन्द्रशेखरप्रसाद नारायणसिंह के आदेशानुसार की गई क्योंकि इस प्रकार की पुस्तक बाजार में उपलब्ध न थी। पुस्तक लिखी गई और यह आज प्रकाशित भी हो गई है। इस पुस्तक के निर्माण तथा प्रकाशित करने में श्री बरतारसिंह दलाल पुस्तकालयाध्यक्ष कुरुक्षेत्र विश्व विद्यालय पुस्तकालय का विशेष योग है। उनकी प्रमुख सहायता से ही यह पुस्तक आपके सम्मुख है।

प्रस्तुत पुस्तक आपके सम्मुख है। कसी है, इसका निरूपण विद्वान जन ही कर सकते हैं। प्रत्येक लेखक की अपनी शक्ति अथवा सगती है, अतः इसका मूल्यांकन मर द्वारा समुचित रूप से न हो सकेगा।

अन्त में मैं पुनः उन सभी साधियों सहयोगियों एवं वृद्ध कुरुक्षेत्र-वासियों का हृदय से कृतज्ञ हूँ जिनके सहयोग एवं परामर्श के द्वारा इस पुस्तक का निर्माण हो सका है।

राजमहन कुरुक्षेत्र

१ जनवरी सन् १९५५

बिनीत

लेखक



## विषय-सूची

क्रमांक	विषय	पृष्ठ
१	समूहगत सत्य	९
२	कुक्षेत्र में प्रसिद्ध बन और नदियाँ	२०
३	कुक्षेत्र का सांस्कृतिक महत्त्व	३०
४	कुक्षेत्र एक विवाद	५१
५	महामारुत का कुक्षेत्र	५४
६	कुक्षेत्र का ऐतिहासिक महत्त्व	६३
७	यवन और कुक्षेत्र	८४
८	जिसा पानेघर	९५
९	रायरंग में झूठा हुमा कुक्षेत्र	१०४
१०	कुक्षेत्र रक्षार्थ प्रप्रेजों द्वारा दिए गए फर्मान	११३
११	कुक्षेत्र एक सामान्य परिचय	१२२





## सनातन सत्य

यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि यूनान और मिस्र को प्राचीन सभ्यताओं की उन्नति किलों की दिवारों में हुई। प्रायः की यूरोपीय सभ्यता ने भी परतों और इंटों के सख्त सुर हरे और बड़ बाठाबरण में गेह जोते और पुका हुई। संसार के सभ्यत दासनिर्कों का मत है कि बाठाबरण की गहरी और समित छाप प्राणियों पर धरदय पड़ती है। अत यूनान, मिस्र और यूरोपीय सभ्यता पर और उध सभ्यता में अन्य सेने धमका पसने वालों क बाजार बिचार, उहन सहन मन और बुद्धि पर अन्न सख्त दिवारों और पपरीसी किता बन्दियों का गहय प्रभाव पड़ा। अत इन सभ्यताओं और इनका अनुकरण करने वालों क चिन्तन का रूप उधार न रहकर संकीर्ण हा गया। जिस प्रकार किलों में दिवारें होती हैं, उसी प्रकार युरप के लोगों में भी यत्नमाय की प्रकृति है। एक राष्ट्र से दूसरे राष्ट्र को एक ज्ञान से दूसरे ज्ञान को और ब्यक्ति से प्रकृति को धसय देखने के वे लोग धम्यासी हो गए हैं। सोचने की यह प्रणाली हमारे चारों ओर एक ऐसी सुइड़ और धमिय दिवार बना देती है कि जिसकी थोड़कर प्रत्येक सत्य को हूद्यों तक पहुँच पाने में और और बिकट सधर्ष करता पड़ता है।

धायों ने इस देश में बसन्ताठी पुनपुनाठी नदियाँ हरे हरे बुर्बादस स बड़ी मजबमसी घाटियाँ बिघाल मैदान हिम की श्वेत चारर थोड़ हिमालय के मगमशुम्भी गिखर, पस फुलों से लये वृश मङ्गुर-मङ्गुर गाये चहचहाते पसी देखे। वे मुगमता से इस बाठाबरण में पुनमित गए। मूर्य की लीखी दूप से बचने के लिए हरे-हरे पत्तों वाली टहूणियों न उनको धपनी पोश में स्थान दिया और लीख लूकायी प्राणियों से उनकी रक्षा करके धपने कोमम बिकने और नर्म प्राँचल में धरण बी। उनके पमुर्षों को सत्य, रयामला चरापाहें और कन-मून कच्छे धरने मिले। यत्तों की धमि को प्रम्बलित रखने के लिए सधिया और मर्कटियाँ मिसी रहने के बासी कुटियाधों को बनाने का सामान मिला। इन धनेक मुबिधाधों के कारण धार्य निर्मय होकर धाम-धाम में धपने बनपद बना कर रहने लये।

इस प्रकार हमारी भारतीय सभ्यता और संस्कृति का उदय और बिकास कुमे बनों में हुआ। बिस्तृत क्षेत्र में अन्न न बिकास पाने के कारण हमारी सभ्यता और संस्कृति का बहय निबारा और उसमें एक महामता और बिधेयता धा गई। प्रकृति के फँसे हुए जीवन से हमें जीवन मिला प्रकृति हमारी माता बनी बसकी घोर में ही हमें प्रेरणा मिसी और हम पते। हमारी सभ्यता और संस्कृति पर प्रकृति की गहरी छाप स्पष्ट दिखाई देती है। प्रकृति माँ से हपने लीखा है कि सत्य की कोई सीमाएँ नहीं सपसत सवार सत्य की सीमा के भीतर है।



# सनातन सत्य

यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि यूनान और मिस्र की प्राचीन सभ्यताओं की उन्नति कितनी ही दिशाओं में हुई। धातु की पृथ्वीय सभ्यता ने भी पत्थरों और ईंटों के सख्त सुर-धरे और बड़े बातावरण में नेत्र खोले और युवा हुई। संसार के समस्त वास्तुशिल्पों का पथ है कि बातावरण की पहली धीरे धीरे प्रविष्टि प्राणियों पर प्रकृत्य पड़ती है। प्रथम यूनान, मिस्र और यूनानीय सभ्यता पर और उस सभ्यता में जन्म लेने प्रथम पत्थरों के धातु विचार, रत्न सहन मन और बुद्धि पर अन्त सख्त दिशाओं और पथरीली किताब बन्दियों का पहला प्रभाव पड़ा। पथ इन सभ्यताओं और इनका अनुकरण करने वालों के चिन्तन का बंग उदार न रहकर संकीर्ण हो गया। जिस प्रकार कितनी में दिवारें होती हैं उसी प्रकार यूनान के लोगों में भी धर्मपात्र की प्रकृति है। एक राष्ट्र से दूसरे राष्ट्र को एक ज्ञान से दूसरे ज्ञान को और व्यक्ति से प्रकृति को प्रथम देखने के वे लोग प्रत्यासी हो गए हैं। सोचने को यह प्रणाली हमारे चारों पार एक ऐसी मुहूर्त और प्रवेश दिवार बना देती है कि जिसकी शीर्षकर प्रत्येक सत्य को हृदयों तक पहुँच पाने में और और विकट संघर्ष करता पड़ता है।

प्राचीन ने इस देश में बलवादी पुनर्जाती नदियाँ हरे हरे दूर्बारन से बड़ी मजबूती पाटियाँ विपाल महान हिम की श्वेत चान्द छोड़े हिमालय के गगनशृङ्खली शिखर, फल-फूलों से सजे हुए मधुर-मधुर माठे बहुबहारी पसी देखे। वे सुगन्ध से इस बातावरण में पुनर्जात गए। मूर्ध की तीखी श्रुति से बचने के लिए हरे-हरे पत्तों वाली टहनियों ने उनको अपनी गोद में स्थापन दिया और तीखे शूक्रानी प्राणियों से उनकी रक्षा करके अपने कोयल चिकने और कर्म प्राणन में धारण की। उनके पशुओं को सत्य, दयापत्ता चरापाई और बन-मूल करते करने मिले। यज्ञों की धर्म को प्रवर्धित रखने के लिए समिधा और लक्ष्मियाँ मिलीं रखने के बास्ते बुट्टियाँ को बनाने का सामान मिला। इन धनक मुविचारों के कारण धर्म विभव होकर धाम-धाम में अपने अनवर बना कर रखने लगे।

इस प्रकार हमारी भारतीय सभ्यता और संस्कृति का अन्व और विकास जुने बनों में हुआ। विस्तृत क्षेत्र में जन्म व विकास पाने के कारण हमारी सभ्यता और संस्कृति का बहुधा विकास और उसमें एक महानता और विवेकता आ गई। प्रकृति के लिये हुए जीवन से हमें जीवन मिला प्रकृति हमारी भाषा बनी उसकी कोद में ही हमें प्रेरणा मिली और हम पले। हमारी सभ्यता और संस्कृति पर प्रकृति की पृथ्वी ध्यान स्पष्ट दिखाई देती है। प्रकृति की से हमने सीखा है कि सत्य की कोई सीमाएँ नहीं समस्त संसार सत्य की सीमा के भीतर है।

समय बीतता जाता गया युग पलटते चले गए, इतिहास करवटों सेता जाता गया धीरे धीरे का मासों मन जब बहकर समुद्र के गर्भ में सीग हो गया। उबड़ साबड़ परती पल्लसहाते घेत बन गई धीरे दुर्मन चनों के मीनारों का रूप धार लिया। साम्राज्य चने धीरे बिगड़े सम्राट् धाए धीरे समय के भँवर में विभीन हो गए। ऊँचे-ऊँचे प्रासाद बने धीरे रेत के बरौदों की मूर्ति बैठ गए, परन्तु राजमहलों में रहने वाले कई-कई परबनेज धीरे राज युग यज्ञ करने वाले महा प्रतापी धीरे घटिघासी सम्राट् भी जास-फुस की कुटियाओं में रहने वाले धीरे बस्करन बस्त्र धनवा धूम धर्म धारण करने वाले, सूखी हड्डियों धीरे तैब के चमकते हुए निर्मल मित्रों वाले ऋषियों के सामने नतमस्तक होकर उनकी चरण धूषि अपने मास पर अज्ञाप्युर्बक लयाते थे। उनके उपदेशामृत को पीकर अपना धीरे प्रजा का कस्याल करते थे। ऋषियों के प्रकृति धीरे जीव को एक बिन्दु पर केन्द्रित करके धमरत्न प्राप्त कर लिया था। उनके मत्तानुसार प्रकृति धीरे जीव एक बिन्दु के दो पहलू हैं। दोनों ही एक महान् सत्य के धरा हैं। जीव धीरे प्रकृति में सास मेस की भावना पक्की करना मास्वीम दार्शनिकों का ध्येय रहा है। भारत में महात्मा बिबेकी धीरे बीर धमी प्रकार के स्मृति हुए हैं बड़े-बड़े राजनीतिज्ञ महापुत्र धीरे सम्राट् भी हुए हैं। परन्तु इन सब क्यों के प्रतिनिधि सर्वथ ऋषि ही हुए।

“संप्राप्येनं ऋषयो ज्ञानं तृप्ताः कृतात्मनो वीतरागाः प्रदान्तां ते स्वर्गं सर्वतः प्राप्य धीराः युक्तमना सर्वमेवाविदन्ति।”

बहु ज्ञानी जिन्हें ज्ञान द्वारा धात्मा की धनुभूति हुई थी धीरे इस प्रकार बहु तत्त्व दर्शी बन गए थे। धात्मा में उसकी धम्नाबना जानकर अपने धात्तः स्व ‘स्व’ में जिन्होंने पूर्ण समता स्थिर करली थी। उपनिषदों की धिया का मही रहस्य है कि विरधात्मा को पाने के लिए सर्वमूर्तों में धात्मबल् दृष्टि रखो। संसार की प्रत्येक वस्तु में ईश्वर है इस भावना से ही उपनिषद् धारम्भ होते हैं।

ईशावास्यमिदं सब यत्किञ्चित् जगत्या जगत् ।

तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृथाः कस्य स्थिद्वनम् ॥१

इस धमाधमान संसार में जो कुछ धनता हुआ है, बहु सब ईश्वर से धाम्धारित है, इसलिये रथाग भाव से धीरे करो धीरे कृषी के धीरे धन का सासध मउ करो। धनवा बहु कटकर धनु को नमस्कार करना कि मैं उस देवता को प्रणाम करता हूँ जो धमि धीरे धन में है अितते सब धराधर विरधध्यास है जो धीरेधियों धीरे धनरधियों में है।

यो देवोऽज्ञो योऽन्धु यो विदबन्धुबनमा बिबेधः ।

यो धीपधीपु यो धनरधतिपु तस्मै देवाय नमो नमः ॥

हमारे दार्शनिकों के भारत के धियास धनरधे नीसाधर के धीरे राड़े होधर धनरध संसार का देवाधिधोर हृदय से स्वाधन किया। उन्होंने मानव की धया को प्रकृति में देना

घौर मनुष्य को सकीर्ण सीमाओं से ऊँचा उठकर विरह को भात्म भाव से देखने का अमर संदेश दिया। सारे विरह से प्रेम करने की इस भावना ने इसलिए उनके मन में अन्म दिया क्योंकि इस महान् देश की संस्कृति ने विद्यास प्रकृति की पौध में नेत्र खोल दिये। इस महान् देश में जहाँ-जहाँ उत्कृष्टी ऋषियों ने धाम्य बनाए, जहाँ-जहाँ प्रकृति ने शौर्य बखेरा जहाँ-जहाँ किसी पुष्पात्मा ने अन्म दिया, जहाँ-जहाँ तीर्थ बनते बसे गए। भारत के पूर्वजों की महानता का एक प्रमाण उनके तीर्थों से मिलता है जो समस्त भारतवर्ष में सर्वत्र फैले हुए हैं। मनुष्य अपने भोजन वस्त्र की आवश्यकता से भी अधिक अपनी धार्मिक मूल को ध्यात करने के लिए तीर्थ यात्रा करता है। तीर्थों पर जाकर उसे ध्यात्मध्याति का बहु बल प्राप्त होता है जिसके सामने सांसारिक धन और राज्यों का कोई मूल्य नहीं।

“अपि प्राज्यम् राज्यम् तृणमिव परित्यज्य सहसा”

एक वास के तिनके की भाँति राज्य का परित्याग करने वाले स्वामी इस देश में अनेकानेक हो गए हैं।

## जिस देश में सरस्वती बहती है

धर्म पर्वतों की उबड़-खाबड़ बरती की सीमा कर सतसुत्र को पार करके बस सरस्वती नदी के तट पर पहुँचे तो धर्मों में जो विद्या और ध्यात्मदर्शी ने उम्हने देखा कि यह सरस्वती तट का स्वान रमणीक एवं सुन्दर है जमी ज़पा वाले फलों से सबे बृष समूह मधुर बस कुसे मँदान और ध्यात बातावरण। पुष्पों से ढकी बरती गमते दिन की छाया में सरस्वती तट से टकराकर प्राता हुआ उनके द्वारा माया हुआ वैदमन्नों का मारक स्वर, इससे सूर्य का कोमल सुनहला स्फुल्लित सकार हरे भरे पुष्पवत् पर चरते हुए मृगों की चारों सरस्वती के घास-पास फैले बने बृशों की शीतल छाँह में विधाम भेटी उनकी जाएँ माँ बरती को अपने स्नेहस से मीठी करने वाले किठिब पर मञ्जराते बावतों के टुकड़े। तपस्वियों के रहने के लिए यह स्वान उपयुक्त है ऐसा सोचकर बहु धर्म ऋषि सरस्वती तट पर कुशले प्रवेश में ध्यात बनाकर संकड़ों चिप्यों के साथ यहाँ रहने लगे और बीच तथा प्रकृति को एक संगम पर साने का प्रयत्न होने लगा। वेद-मन्त्रों की ध्याति और मन्त्रों की सुपन् से सारा वायुमण्डल मुक्ति हो उठा। जो धर्म मुक्त कला में प्रवीण थे वे बड़े-बड़े साम्राज्यों की नींव रखने के लिए बसिख की धोर बड़ गए। परन्तु साम्राज्य बनाकर भी धर्म सम्राट इन ऋषियों के चरख कमलों की रज सेने के लिए प्रति वर्ष कुशले प्राटे रहे इसी प्रकार बहुवस्था में जनसमुदाय उनके पास उपवेशामृत पान करने प्राता रहा और धीरे धीरे सरस्वती तट का यह देश पावन पुनीत और संस्कृति तथा सम्मता का प्रकाय केन्द्र बन गया। विश्व की सम्भावनाओं का मौलिक स्वान होने के कारण इस प्रदेश का ध्याि नाम सृष्टिमन्ता ब्रह्मा के नाम पर ब्रह्मावर्ष या “सं वैवर्दिमर्त देशं ब्रह्मावत प्रचक्षते”

कुश्लेख उत्तरी भारत में वैदिक संस्कृति का केन्द्र और सहस्रों वर्ष तक भारत के धार्मिक और सांस्कृतिक क्षितिज पर उज्ज्वल लक्षण रहा है। इस देश भूमि के धर्मस में धार्मिकत्वता में नैत्र जोसे पसी और परमाण पड़ि। मनुमहाम् ने कहा है कि ससार के समस्त मानव अपने क्रियाकार्य कुश्लेख के नागरिकों के पद चिह्नों पर चर्से।

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशावग्र जन्मन ।

स्व स्वं चरित्र दिक्षेरन्पृथिव्या सर्वमानवा ॥१

कुश्लेख की पवित्रता तथा महागता धनेक कारणों से है। ऋग्वेद खतपय ब्राह्मण जाबामि उपनिषद्, पुराण, थीमद्भागवत्, गीता महाभारत और अन्य धर्मसास्त्रों में इस भूमि को धर्मपरामल कहा है। धृति तथा स्मृति अनुसार कुश्लेख ऋषियों तथा देवताओं का निवास स्थान है। कुश्लेख की जो प्राचीनता तथा पवित्रता भिन्न-भिन्न युगों में भिन्न रही है ऐसी अन्य धार्मिक स्थानों की नहीं रही। सृष्टि के रचना काम से ही सर्व धर्मतापे ऋषियों और मुनियों का सम्बन्ध कुश्लेख से रहा है। कुश्लेख में महर्षि व्यास ने पुराणों थीमद्भागवत् तथा महाभारत की रचना की और ऋषि पाणिनी ने अष्टाध्यायी लिखी। कुश्लेख के नेत्रों में कितनी ही कान्तिर्वा और कितने ही परिवर्तन देखे हैं। कुश्लेख के कानों में ऋषियों का देवतापन धर्मनाम्न धीहृष्य के मुख से यीतामृत और भीष्म विवामह के धर्मिम उपदेश जो उनके ज्ञान और अनुभव का निबोड़ हैं, का पाग किया है। महारथी होणाचार्य धर्जुन और कर्ण सरीसे योद्धाओं के पशुप की टंकार और गर्जना सुनी है। इसने सम्राट् कुक्ष को हम धर्मिमन्नु को धृष्ट्य जमाते गिहारा और बाण अट्ट जैसे धर्मर कवियों की नीरव गाथा सुनी। कुश्लेख की छाती पर महाभारत गुड हुआ और इसकी योद में अष्टारह अशोहृषी सेना-सोई। यहाँ का धाक्राज महापुत्र प्रमाकर धर्मन के यत्रों के पु ए से कासा हुषा और सम्राट् हर्ष के जय घोषों से गुषा। बड़ी बड़ी लड़ाइयाँ विभूति भारतीय इतिहास का भाग बरस आता यहीं पर लड़ी गई। मह बह प्रवेश है जहाँ भारतवर्ष की धर्मता का पतन हुआ। हूणों कुशाणों और मुस्लिमों की तीव्र तलवारों के बाध धाम भी इसके अर्द्धर खरीर पर बने हैं। जहाँ इस पुनीत भूमि पर मदारवा बुद्ध जगत् बुद्ध संकराचार्य और बाणभय के पद सरोज पड़ यहाँ दिस्तीपति पृथ्वीराज चौहान की पराजय भी हुई। तैमूर से लकर अहमदशाह अकबाली तक के सब धाश्रमलकारियों ने एक से सनी तलवारें इसके पवित्र तीर्थों के जल में धोईं। दल में से धृः सिध बुद्ध इस सांस्कृतिक तथा धार्मिक स्थान पर पधारे। कपोहों धर्मनिष्ठ दिवाभिसा 'धर्मदोषे कुश्लेखे के धर्मों से पीता पाठ धारम्भ करते हैं। कुश्लेख का नाम धाम ही एक अन्ने धर्मनिष्ठ के हृदय में अद्या, प्रेम तथा, गोरव का संचार कर देता है। इसी पुष्प स्थल पर देवामुर संघाम के समय मानव क्रियाकार्य महर्षि दयोधि ने अपनी धारिष्यो तक धाम कर बी। कुश्लेख में मानव समाज को संकीर्ण सीमाओं से ढँका उठाकर विश्व में धारमभाव का धर्मर प्रवेश दिया।

धार्मिकत्व से पूर्व सरलवृत्ती तट के इस प्रदेश पर धारिवातियों की बसिष्यो थीं।

घावों का इस प्रदेश पर छा जाना प्राप्तिपूर्वक नहीं हुआ। घावों और मूम निवासियों के संघर्ष का परिणाम ऋग्वेद में देवों और धमुरों के युद्ध की प्रतिष्पन्दि के रूप में मिलता है। इन घाति वातियों की धार्य द्राविड़ किरात हृष्य कामे धमुर, पत्ति, पाठ और दस्यु कहते थे। यह मोम वेहूँ नौ, पान, ठिस और मटर की खेती करते थे। दावों के राजा वृत्र धम्बर, दुप्य पिम्, वंयव, कंरज, पल्लव और बर्षी थे। घावों की दो बातियाँ सर्व प्रथम यहाँ घाई उन्हें पाँचजन कहते हैं वह पे पुत्र मधु, तुर्बस धामु और इन्द्र<sup>१</sup>। नाम देव से युद्ध में २० हजार कृप्यों (कामे धमुरों) के मारे जाने का उल्लेख किया है<sup>२</sup>। घाति वासी धायों से संघर्ष के परचाठ पूर्व और दक्षिण में भाय वद, जो रू मए उन्हें बिबैताधों ने दस्यु या दास या कमकर बना दिया। धार्य राजा दिबोदास ने ऋषि भरद्वाज की सहायता से दस्यु राजा धम्बर के साथ ४० वर्षों तक युद्ध किया और विजयी हुआ। दिबोदास तुलसी का राजा था उसने धार्यवर्षी पुरावों और तुरवसों के साथ भी युद्ध किया। उस समय जब पहले से निवास करने वाले धायों के साथ धायों का संघर्ष चल रहा था जिसे कि इतिहासकार कसहकाल कहते हैं, धार्यावर्त में जिसका नाम धमी कुबसेन नहीं हुआ था, पठित पावनी सरस्वती के किनारे जल नाम की धार्य जाति का प्रदेश था। भरतों की प्रतापी जाति के राजा विस्वामित्र ने देवों की हृषा से ऋषि वर प्रात करके विस्वामित्र नाम धारण किया। ऋषि विस्वामित्र ने राज पद छोड़कर सरस्वती के तीर पर धामम स्थापित किया जहाँ बीरे-बीरे सम्पूर्ण धार्यावर्त की विद्या, तप और धीर्य केन्द्रीभूत हो गए। राज पुत्र अनुविद्या और धरविद्या सीखते थे और इस धामम में धार्य तथा दस्यु रामु और मूलकर एकत्र हुआ करते थे। ऋषि विस्वामित्र के धाममे भूमि में य ह ऋषि जमरणि ने भी यहाँ धामम स्थापित किया। ऋषि जमरणि धयु और इन्द्र<sup>३</sup> जाति के पुरोहित थे। देवाविदेव वसु के ऋत का सर्वत्र वर्णन करने वाले जल य ह विस्वामित्र ऋषि ने ऋषि जमरणि के साहचर्य में रहकर धनेक यज्ञों के रचन किए और उन्होंने अपनी श्रैरणा से ही भरत तुल्य और भूमि की सेनाओं को धपुर्ब विजय प्राप्त करवाई। विस्वामित्र के ऋषि होने के वरचाठ जब सूर्य देवता सबह बार चकर रावि में संकाति कर चुके तब राजा दिबोदास यमलोक विभारे।

## सुदास

एक प्रतापी राजा के परचाठ उसका पुत्र बसते ही अधिक प्रतापी हो ऐसा इतिहास में कम देखा गया है। दिबोदास के परचाठ सुदास उसका उत्तराधिकारी हुआ। सुदास न केवल बोजा या बरन् वह विद्वान भी था और उसने बहुत से यज्ञों की सृष्टि भी की। बीरों में धमरिद्वय राजा सुदास ने तुल्युओं के प्रतापी सिंहासन पर धासीन होते ही ऋषि विस्वामित्र को धपना पुरोहित बनाया। ऋषि विस्वामित्र ने सुदास को भी विजय प्राप्त

(१) ऋग्वेद १।१०।१५, (२) ऋग्वेद १।१०।१५, (३) ऋग्वेद १।१०।१५



करवाई। उन्होंने भरत और तुलसुओं का बल बढ़ाया। इसी काल में विद्वामित्र और बधिरु में दो विभारवाचनों की टक्कर हुई। ऋषि विद्वामित्र धर्म और वस्तु के भेद को बुर करने के लिए प्रवरनचीस से और ऋषि बधिरु धर्मों की सहायता बुद्धि और विद्या के प्रतिनिधि से। इस समस्या को लेकर सरस्वती तट के इस प्रदेश में सम्मा संघर्ष बना। मुदास ने इस संघर्ष में ऋषि बधिरु के मत को ग्रहण किया और जब ऋषि विद्वामित्र राजा हरिश्चन्द्र का यज्ञ करवाने के लिए गए तो उसने बधिरु को अपना पुरोहित बनाकर वस्तु राजा भेद के विरुद्ध युद्ध धारम्भ कर दिया। हापर युग के धारम्भ में ही धर्मार्थी राज्य क्षयित्तों की सहायता काबीज होने लगी थी। किसी प्रदेश पर वहाँ के राजा का प्राधिकार्य उसके बल की मर्यादा पर न निर्भर कर पुणतवा उसके अपने सामर्थ्य पर ही निर्भर करता था। इसलिए किसी सामर्थ्यवान व्यक्ति के लिए इस काल में अपना राज्य विस्तार कर लेना अपेक्षाकृत आसान हो गया था। इस युग का भी समुचित मात्र सरस्वती तट के राजा सुम्भय के पौत्र और दिवोदास के पुत्र-मुदास ने उठाया। मुदास ने धारम्भ्य करके कौशल की सीमा तट के प्रदेश पर अधिकार बना लिया। हस्तिनापुर के पौरव राज्य पर भी उसने धारम्भ्य किया। उस समय वहाँ का राजा संवरण था। मुदास ने बल धर्मोद्देशी सेना लेकर हस्तिनापुर पर धारम्भ्य किया था<sup>१</sup>। संवरण को हस्तिनापुर छोड़कर भाग जाना पड़ा। मुदास ने उसे यमुना के किनारे शोकाच परास्त किया। तब संवरण सिन्धु नदी की ओर भाग गया। संवरण पुत्र प्राप्ति का राजा था। पुत्रों का वर्णन भी ऋग्वेद में मूहों, पुत्रवर्षों और पादवर्षों के साथ धारा है। पुत्रों का वस्तु और भरत वर्षों के साथ निरुद्ध का सम्बन्ध था। यह भी सरस्वती तट पर रहते थे<sup>२</sup>। सारे धर्मार्थी में युद्ध छिड़ गया। एक ओर बधिरु द्वारा प्रेरित मुदास और दूसरी ओर विद्वामित्र द्वारा प्रेरित बल राजाओं में परस्पर युद्ध छिड़ जाता है जिसे बघराज युद्ध कहा जाता है। बल राजाओं के युद्ध के अधिकार्य राजा प्राञ्जिक उत्तर प्रदेश पंजाब तथा पश्चिमोत्तर सीमांत प्रदेश के तत्कालीन पासक थे। मुदास ने इन सब राजाओं को परस्त्री (राजी) नदी के तट पर एकत्र करवा दी। इस विजय से मुदास समृद्धि के शिखर पर पहुँच गया और समस्त धर्मार्थी वर्त में ऋषि बधिरु का प्रयत्नकार होने लगा।

मुदास के परचास उसके उत्तराधिकारी उसका पुत्र सहदेव और उसके पौत्र सोमक थे। मुदास हापर के प्रथम चरण में हुआ है। इसलिए उसका काल ईसा से पूर्व थोड़ीसही सताब्दी होना जान पड़ता है।

धर्मार्थी के इतिहास में रामायण काल के परचास की दो सताब्दियाँ राष्ट्र के समने बड़ी विरुद्ध समस्याएँ से घाले बासी थीं। उस काल में राष्ट्रीय जीवन के विकास की परि बनाए रहने के लिए कई प्रकार के महान् कार्य पूरे करने की आवश्यकता थी। इनके लिए जन युग में सरस्वती तट कुसुम में बास करने वाला भरत बंध ही सबसे प्राये प्राया। राष्ट्र के महान् संकट के समय भरत बंध ने सन्धि एवं प्रदर्शक का कार्य किया था। इसलिए

मरतों की कीर्ति भी महान् बन गई। दशरथ ब्राह्मण में कहा गया है कि भारत बंध जैसी महानता न तो पहले कभी और न ही उनके पदवात् के ही लोगों ने प्राप्त की है।

## ब्रह्मावर्त से कुरुक्षेत्र

अब तक सरस्वती तट का यह प्रदेश वहाँ भारतवर्ष का राज्य या ब्रह्मावर्त कहा जाता था। परन्तु ब्रह्मावर्त का नाम पदवात् में कुदमीन किते हुआ? इसकी कथा बामन पुराण और महाभारत में विभिन्न प्रकार से प्रायी है। जैसा कि पीछे लिखा जा चुका है कि सुरासने पुद्यों के राजा संवरण को पराजित किया था और वह विष्णु की घोर भाग गया था। कुछ समय के पदवात् राजा संवरण ने अपने छोटे हुए राज्य को दोबाग प्राप्त किया। राजा संवरण की रानी तपती के मन से राजा कुव का जन्म हुआ। कुव ने पुद्यों के नाम को बहुत उम्मेद किया। वह इतना तेजस्वी था कि उसके पदवात् उसके पुत्र बंध का नाम कौरव पड़ गया। इसी कौरव बंध में घामे पतकर कौरव और पाण्डव हुए। उस समय पुद्यों से पुद्यों का नाम इस देश में अधिक बढ़ा। पुद्यों के राजा सर्वदमन ने जिसका नाम भरत भी था सरस्वती तट पर यह किए से और अपने राज्य को सरस्वती से बंगा तट तक विस्तृत कर लिया था। महाभारत युद्ध से पूर्व और उसके पदवात् पुत्र बंध के राजा हो इस देश पर राज्य करते रहे। अब राजा कुव वृद्ध हुए तो उनके मन में विचार घामा कि इस नरकर संसार में सर्व श्रेष्ठ बन्धु कीर्ति है क्योंकि धास्त्रकारों ने कहा है कि "कीर्तिर्व्यस्य स बीजति" जिसकी संसार में ययमाया होती है वह ही बीजित है। यह सोच कर राजा कुव ने समस्त पृथ्वी का भ्रमण किया। उसके मन में केवल एक ही सपना थी कि वह किस प्रकार कीर्ति प्राप्त करे। भ्रमण करते-करते उसने इत बत में प्रवेश किया। यहाँ पहुँचकर उसके पुत्रित्व हृदय को धामित मिली। उसने देखा कि पुष्य सखिमा पापमोचनी हरिभिक्षा बड़ा पुत्री सरस्वती अपने प्रवाह से पापों का नाश करती हुई पुष्य संभय कर रही हैं। उसके पुनीत तट पर करोड़ों पुष्य तीर्थ बने हैं। राजा कुव ने सरस्वती में स्नान करके ईश्वरोपासना की। यह वह स्थान था वहाँ सृष्टि रचना के निमित्त ब्रह्मा ने उत्तर बेदी में तपस्या की थी और जिसे समस्त पञ्चक भी कहते हैं। इस बेदी का विस्तार चारों दिसाओं में पाँच-पाँच कोस था। महाराज कुव ने निश्चय किया कि मैं इस पुष्य स्थल पर अपनी अभिजाप पूरी कर सकता हूँ कीर्ति प्राप्त करने के लिए ऐसा मोम्य स्थान और नहीं मिलेगा। राजा कुव महाबेन का भ्रमण तथा बर्मण्य का पांडुक महिषा हत में शोच कर पृथ्वी को शोचने लगा। राजा कुव का यह सुकार्य देख कर देवराज इन्द्र ने उसके पुत्र कि "राज्य वहाँ पर क्या शोच रहे हो?" कुव ने उत्तर दिया कि 'तप सरय नामा ददा

वीज दान योग और ब्रह्मचर्य बोल रहा है। इन्द्र ने पुन पूछा कि 'हे राजन् ! यह बीज कहाँ से आया ?' । राजा क्रुव ने कहा 'अपुत्र योग संज्ञक नामक बीज ग्रहण किया है।' इन्द्र के बसे जाने के परभाव राजा क्रुव प्रतिदिन साठ-साठ कोस दूध बताने लगे। उलका कर्म देखकर भगवान् विष्णु वहाँ आए और राजा क्रुव से पूछा कि 'हे राजन् ! यह क्या करता है ?' तब राजा क्रुव ने अपुत्र महावर्म प्राणामाम्, प्रत्याहार, पारणा ध्यान और समाधि का वर्णन किया। भगवान् ने पूछा कि तूय यह बीज कहाँ है ? राजा क्रुव ने उत्तर दिया कि वह बीज मेरे शरीर में स्थित है। भगवान् ने कहा 'राजन् बीज तो हमें दो हम बीयेगे और प्राय दूध बताने लगे। राजा क्रुव ने अपनी इच्छा मुझ पसार दी। भगवान् ने अपने जल के वेम से उल मुझ के सहस्र टुकड़े कर दिए। पुन राजा ने दान मुझ पसार दी। भगवान् ने जल द्वाय यह भी टुकड़े-टुकड़े कर दी। क्रमशः राजा क्रुव के अन्धाप प्राये करने पर, भगवान् ने उन्हें भी काट दिया। अन्त में जब राजा ने अपना विर भी अर्पण कर दिया तो भगवान् विष्णु ने उसके मन को स्थिर और बुद्धि को निश्चिन्त देखकर, अत्यन्त प्रसन्न होकर राजा क्रुव को बर मानने के लिए कहा। राजा क्रुव ने प्रार्थना की कि—

यावदेतमया कृष्ट धमक्षेत्रं तत्स्तु व ।  
 स्नातानां च मृदानां च महापुष्पफलेरिवह ॥  
 उपवासदध दान च स्नानं ज्ञाप्यं च माधव ।  
 होमयज्ञादिकं चायच्छुभं वाऽप्यधुमं विभो ॥  
 त्वत्प्रसादाद्दधिकेन सखचक्रगदाधर ।  
 प्रक्षय प्रवरे क्षेत्रे भवत्वत्र महाफलम् ॥  
 तथा भवान् सुरे सादृ समं दधत धूमिना ।  
 वसात्र पुण्डरीकाय मन्नामम्भस्त्रनेऽभ्युत ॥'

हे माधव ! जितनी दूर तक इस देश में मैंने हथ पताया है उतनी दूर तक यह धमक्षेत्र हो जाए। यहाँ स्नान करने वालों को महापुष्प फल मिले। प्राणकी दृष्टा से यहाँ उपवास ब्रत दान, जप स्नान होम और यज्ञ जैसे शुभ कार्य और अधुम कर्म भी प्रसन्न हों। हे पुण्डरीकाय ! प्राय सर्व देवताओं सहित इस स्थान में निवास करें। भगवान् ने उत्तर दिया कि हे क्रुव ! ऐसा ही होगा। धर्म राजा क्रुव की उपस्था के परभाव यह प्रदेश ब्रह्मचर्य के स्थान पर कुरक्षेत्र के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

## दो और दृष्टिकोण

बाधन पुराण की इस कथा में धर्मकारों का प्रयोग जैसा कि प्राचीन धार्मिक साहित्य कारों की वीली रही है अधिक है। अरु की कथा को समझने का यह भी संकेत ही सकता

कि महाराज क्रुड ने सरस्वती तट पर घोर तपस्या की। तपस्या के समय जब भगवान् ने क्रुड से पूछा कि यह तपस्या क्यों कर रहे हो ? तो क्रुड ने उत्तर दिया कि योग के घाठ क्यों पर बय पाने के लिए। भगवान् ने जब यह पूछा कि वह कहाँ है ? क्रुड ने उत्तर दिया कि मेरे शरीर में घोर उत्तम विकट तपस्या करके अपनी बाहिनी, बाईं भुजाएँ घोर जपाएँ मुझा बी। घाठ में महाराज क्रुड ने सिर डेकर मोल प्राप्त किया। क्योंकि क्रुड ने इसी क्षेत्र में तपस्या की थी इसलिये उसके नाम पर इस प्रदेश का नाम क्रुडक्षेत्र हो गया।

एक बात धीर भी हो सकती है कि महामातल घोर पुराणों के अनुसार क्रुड बड़े प्रतापी तथा तपस्वी राजा थे। उन्होंने अपने तप से क्रुडक्षेत्र को पवित्र बनाया, दूसरे घमों में उन्होंने ही सर्व प्रथम क्रुडक्षेत्र प्रदेश को कृपि योग्य बनाया था। पहले यहाँ मारी जयस था। क्रुड राजा ने हस्त बचाकर इसे धम्म पैदा करने योग्य बनाया और इसीलिए इस प्रदेश का नाम ब्रह्मावर्त से क्रुडक्षेत्र कहसामा जाने लगा। भौगोलिक दृष्टि से भी क्रुडक्षेत्र धार्यावर्त का सबसे अधिक महत्वपूर्ण भाग है। यहाँ पर ही हमारे देश के अनेक भाग निर्णायक युद्ध लड़े गए। पश्चिम में त्रिभु प्रणासी पूब में मंवा प्रणासी तथा दक्षिण पप इन तीनों का प्रथम क्रुडक्षेत्र में ही होता है। क्रुड द्वारा इस क्षेत्र के कृपि योग्य बना दिए जाने पर हमारे देश के एक किनारे से दूसरे घोर के बीच का यातायात माय बहुत सुविधाजनक हो गया। जब यह मार्ग केवल घोड़े से साहसी लोगों के ही नहीं बल्कि जन साधारण के लिए भी सुगम बन गए। इससे धार्यावर्त के विभिन्न प्रदेशों के विभिन्न प्रकृति वाले लोगों का एकत्रित हो पाना सुगम हो गया। यही धार्यावर्त के जन समूह के एकिकरण तथा उस समूह के उत्कर्ष की घोर प्रसर होने की बुनियाद बनी। राजा क्रुड का यह महान् कार्य एक ऐसे काल में हुआ जब इसकी हमारे देश की उन्नति के लिए निरान्त आवश्यकता थी। उनके इस कार्य में हम पराक्रम तथा तपस्या का वास्तव में ही अद्वितीय बंध का समावेश हो गया देखते हैं। उस तपस्या तथा पराक्रम के ही परिणाम स्वल्प सरस्वती से पश्चिम से लेकर पश्चिम तथा प्रथम के परे तक के केवल प्रदेश ही एक धार्यावर्त में नहीं घायए, बल्कि उन सुदूर सीमाओं के निवासी अपनी धार्यावर्त की गहरी एकता अनुभव करने लग गए। क्रुड ने जो महान् कार्य धार्यावर्त किया, उसके परिणाम इमें प्रकृति की विधा में बहुत दूर तक बीच से बाने बाने हुए। इसी कारण इस सरस्वती घोर उपरती के बीच के देश का नाम क्रुडक्षेत्र हुआ। महामातल में दिए गए स्मोर्कों से अजर की बात घोर स्पष्ट हो जाती है जहाँ इस प्रदेश को क्रुडक्षेत्र न कहकर क्रुडजाङ्गल प्रदेश कहा गया है।

धार्यावर्त महायज्ञैर्बहुभिर्भूरिदक्षिणैः ।

ततः संवरणात् सौरी तपती सुपुत्रे क्रुडम् ॥

राजस्ये तं प्रजा सर्वा भर्मज्ञ इति बहिरै ।

सत्य मान्तामिविस्पातं पृथिव्या क्रुडजाङ्गलम् ॥

पीर, दान, योग और ब्रह्मचर्य जोत रहा है। इन्द्र ने पुन पूछा कि हे राजन् ! यह बीज कहाँ से आया ?" राजा क्रुश ने कहा "अपूर्व भोग संतुष्ट नामक बीज ग्रहण किया है। इन्द्र के जसे जाते के पश्चात् राजा क्रुश प्रतिदिन सात-सात दोल हल चलाये मने। उसका कर्म देखकर भगवान् विष्णु बर्षा भ्राए और राजा क्रुश से पूछा कि हे राजन् ! यह क्या करता है ? तब राजा क्रुश ने अपूर्व महाभय प्राणायाम प्रत्याहार, धारणा ध्यान और समाधि का वर्णन किया। भगवान् ने पूछा कि तू यह बीज कहाँ है ? राजा क्रुश ने उत्तर दिया कि यह बीज मेरे घटीर में स्थित है। भगवान् ने कहा 'राजन् बीज तो हमें दो हम बोयेंगे और भ्राए हल चलायें।' राजा क्रुश ने अपनी इच्छा भुजा पसार दी। भगवान् ने अपने चक्र के योग से उक्त भुजा के सहस्र टुकड़े कर दिए। पुन राजा ने दान भुजा पसार दी। भगवान् ने चक्र टाटा यह भी टुकड़े-टुकड़े कर दी। क्रमशः राजा क्रुश के चक्राए भागे करने पर, भगवान् ने उन्हें भी काट दिया। अन्त में जब राजा ने अपना सिर भी चर्पण कर दिया तो भगवान् विष्णु ने उसके मन को स्थिर और बुद्धि को निबिहार देखकर, अत्यन्त प्रसन्न होकर राजा क्रुश को बर मानने के लिए कहा। राजा क्रुश ने प्रार्थना की कि—

यावदेतमया कृष्ट धर्मक्षेत्रे तदस्तु व ।  
 स्नातानां च मृतानां च महापुण्यफलविह ।।  
 उपवासस्य दान च स्नानं जाप्यं च माघव ।  
 होमयज्ञादिकं चाभ्यङ्ग्यं वाऽप्यशुभ विभो ॥  
 स्वरप्रसादादपिकेय संक्षयक्रमदाभर ।  
 भक्षयं प्रबरे क्षेत्रे भवत्वन्न महाफलम् ॥  
 तथा भवान् सुरैः सार्द्धं समं देवेन धूमिना ।  
 वसानं पुण्डरीकाक्ष मन्मामभ्यङ्गयेऽञ्जुत ॥'

हे माधव ! जिसनी दूर तक इस क्षेत्र में मैंने हल चलाया है उसनी दूर तक यह धर्मक्षेत्र हो जाए। यहाँ स्नान करते वालों को महापुण्य फल मिले। प्राणकी कृपा से यहाँ उपवास व्रत दान च स्नान होम और यज्ञ जैसे शुभ कार्य और अशुभ कर्म भी भक्षय हों। हे पुण्डरीकाक्ष ! प्राण सर्व देवताओं सहित इस स्थान में निवास करें। भगवान् ने उत्तर दिया कि हे क्रुश ! ऐसा ही होया। अन्त राजा क्रुश की तपस्या के पश्चात् यह प्रदेश ब्रह्मावर्त के स्थान पर क्रुशक्षेत्र के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

## दो और दृष्टिकोण

बामन पुराण की इस कथा में धर्मकारों का प्रयोग वीसा कि प्राचीन धार्मिक साहित्य-कारों की चीनी खी है धार्मिक है। अन्त की कथा को समझने का यह भी दंड हो सकता

है कि महाराज क्रुच ने सरस्वती तट पर नीर तपस्या की। तपस्या के समय जब भगवान् ने क्रुच से पूछा कि यह तपस्या क्यों कर रहे हो ? तो क्रुच ने उत्तर दिया कि योग के घाट प्रयोगों पर जब पाने के लिए। भगवान् ने जब यह पूछा कि वह कहाँ है ? क्रुच ने उत्तर दिया कि मेरे घटीर में घीर छसने बिकट तपस्या करके घपनी बाहिनी, बाई सुबाएँ घीर कबाएँ सुबा की। घन्त में महाराज क्रुच ने सिर देकर मोल प्राप्त किया। क्योंकि क्रुच ने इसी क्षेत्र में तपस्या की थी इसलिए उसके नाम पर इस प्रदेश का नाम क्रुचक्षेत्र हो गया।

एक बात घीर भी हो सकती है कि महाराज घीर पुराणों के अनुसार क्रुच बड़े प्रतापी तथा तपस्वी राजा थे। उन्होंने अपने तप से क्रुचक्षेत्र को पवित्र बनाया, घुसरे सभ्यों में उन्होंने ही सबसे प्रथम क्रुचक्षेत्र प्रदेश को कृपि योग्य बनाया था। पहले यहाँ भारी बंयस था। क्रुच राजा ने इस बसाकर इसे प्रथम पंसा करने योग्य बनाया और इसीलिए इस प्रदेश का नाम ब्रह्मावर्त से क्रुचक्षेत्र कहलाया जाने लगा। भौतिक दृष्टि से भी क्रुचक्षेत्र धार्यावर्त का सबसे अधिक महत्वपूर्ण भाग है। यहाँ पर ही हमारे देश के घनेक भाग्य निर्णायक युद्ध भइ गए। पश्चिम में सिंधु प्रणाली पूर्व में घना प्रणाली तथा बसिण पव इन तीनों का समय क्रुचक्षेत्र में ही होता है। क्रुच द्वारा इस क्षेत्र के कृपि योग्य बना दिए जाने पर हमारे देश के एक किनारे से घुसरे घोर के बीच का यातायात मार्ग बहुत सुविधाजनक हो गया। जब यह मार्ग केवल घुसरे से साहसी लोगों के ही नहीं बल्कि जन साधारण के लिए भी सुगम बन गए। इसके धार्यावर्त के विभिन्न प्रदेशों के विभिन्न प्रकृति वाले लोगों का एकत्रित हो पाना सुगम हो गया। यही धार्यावर्त के जन समूह के एकीकरण तथा उस समूह के उत्कर्ष की घीर घपसर होने की बुनियाद बनी। राजा क्रुच का यह महान् कार्य एक ऐसे काल में हुआ जब इसकी हमारे देश की उन्नति के लिए निष्ठाघ्न प्रावश्यकता थी। उनके इस कार्य में हम पराक्रम तथा तपस्या का वास्तव में ही अद्भुत ङंग का समावेश हो गया है। उस तपस्या तथा पराक्रम के ही परिणाम स्वल्प सरस्वती से पश्चिम से लेकर पश्चिम तथा प्रयाग के परे तक के केवल प्रदेश ही एक पश्चिम में नहीं घानए, बल्कि उन घुर घीमाघों के निवासी घपनी घापस की यही एकता घनुभव करने लग गए। क्रुच ने जो महान् कार्य घारम्भ किया उसके परिणाम हैं प्रकृति की दिसा में बहुत दूर तक घीष ने जाने वाले हुए। इसी कारण इस सरस्वती घीर इपहती के बीच के देश का नाम क्रुच क्षेत्र हुआ। महाराज में दिए गए स्तोत्रों से ऊपर की बात घीर स्पष्ट हो जाती है यहाँ इस प्रदेश को क्रुचक्षेत्र न कहकर क्रुचवाङ्गल प्रदेश कहा गया है।

भाबमीडो महापञ्चैतुभिर्भूरिदक्षिणैः ।

ततः संवरणात् सौरी तपती सुपुत्रे क्रुचम् ॥

राजत्वे तं प्रजा सर्वा भर्मेत इति बघिरे ।

तस्य नाम्नाभिबिख्यातं पूयिष्या क्रुचवाङ्गलम् ॥

कुर्योन्नं स तपसा पुष्यं चक्रे महातपाः ।  
प्रदववन्तमभिप्यन्तं तथा क्षेत्ररथं मुनिम् ।<sup>१</sup>

इसके अनन्तर मन्वान् सूर्यदेव की कन्या तपती ने राजा संवरण के बीर्य से राजा क्रुह को बलात्कृत किया। हे राजन् ! क्रुह को जर्मत बनकर सब उनका आशय लेते से इन्हीं के नाम से पृथ्वी में कुम्भाङ्गन देव प्रसिद्ध हुआ और इसी महा तपस्वी राजा ने अपनी कठोर तपस्या से क्रुहदेव को पुष्य व पुनीत बनाया।

महाराजा क्रुह ने पुष्यों के नाम को बहुत उज्ज्वल किया वह इतना ऐजस्वी या कि उसके परचात् उसके बंध का नाम औरत पड़ गया इसी औरत बंध में घामे चलकर औरत और पाण्डव हुए।

## समन्तक पंचक और परशुराम

नेताद्वापरयोः सखी रामः क्षत्रमृतां वरः ।  
प्रसङ्गं यादिवं क्षत्रं भवानामर्षभोदितः ॥  
स सर्वं क्षत्रमुत्साद्य स्ववीर्येणानलघुतिः ।  
समन्तपञ्चके पञ्च चकार रीधिरान् ह्यवान् ॥  
स तेषु रुधिराम्भःसु ह्रुवेषु क्रोधमूर्च्छितः ।  
पितृन् समर्पयामास रुधिरैरेति न धुतम् ॥  
अथर्षीकादयोऽन्वेत्य पितरो राममब्रुवन् ।  
राम राम महाभागा प्रीताः स्म तव भार्गव ॥  
अनया पितृभक्तया च विक्रमेण तव प्रभो ।  
वरं वृणीष्व भद्र ते ममिच्छसि यथाः महाशुते ॥  
एवमुक्तस्तु पितृभी रामः प्रभवतां वरः ।<sup>१</sup>

नेता और द्वार के संविकाल में क्षत्रधारियों में से ही क्षत्रिय राम ने अपने पिता ऋषि अमरनि के बंध होने पर क्रोध में आकर पृथ्वी जाती क्षत्रियों का बार-बार संहार किया और पाँच राजाओं उनके रक्त से भरकर उसी रक्त से अपने पितरों का तर्पण किया। ऐसा हमने परम्परा से सुना है। तर्पण के समय मृगु ऋषीक और अमरनि धारि उनके पितरों ने राम के पास आकर कहा। हे राम महाभाव्य हम तुम से प्रसन्न हैं और तुम्हारे पितृ भक्ति से सतुष्ट हैं तुम वर माँगे परशुराम भी मैं उत्तर दिया—

यदि मे पितरः प्रीता यद्यमुप्राहता मपि ।  
यच्च रोपामिभूतेन क्षत्रमुत्सादितं मया ॥

(१) महाभारत अ० ६ अ० ६४ श्लोक ५५ से ६० । (२) महाभारत धर्मि अं० १ श्लोक ६ से ७ ।

मृतश्च पापान्मुष्येऽहमेव मे प्रापितो वटः ।  
 ह्लादाश्च तीर्थं भूता मे भवेयुमुवि विभृता ॥  
 एव भविष्यतीत्येव पितरस्तमपाद्भुवन ।  
 त क्षमस्वेति निधि पिधुस्ततः स विरराम ह ॥  
 तेषां समीपे यो देघो ह्लादानां रभिराम्मसाम् ।  
 समन्तपञ्चक मिति पुष्य तत् परिकीर्तितम् ॥  
 येन सिद्धेने यो देघो मुक्तः समुपसक्षयते ।  
 तेनैव नाम्ना त देघ वाष्यमाहुर्मनीषिणः ॥<sup>१</sup>

यदि मेरे पितृमण मुझ पर प्रसन्न हैं तो मुझे यह वर है कि कोमल मीने जो क्षत्रियों का संहार किया है इस पाप से मैं मुक्त हो जाऊँ और इन पाँच ठामानों में स्नान बाण पूजन आदि से प्राणियों के समस्त पाप नष्ट हों। पितरों ने कहा ऐसा ही हो।" कुबलीन के जन्हीं रबिर पूर्ण पाँच तीर्थों को समस्त पञ्चक कहते हैं।

पुरुषों के राजा दुष्यन्त के प्रतापी पुत्र सर्वदमन ने सरस्वती तट पर यज्ञ किया। सर्वदमन बहुत बड़ा विनेता और सम्राट था जिसको भरत भी कहा जाता है। सर्वदमन भरत ने अपने राज्य को सरस्वती और यमुना के बंधवर्ती प्रदेश में स्थापित किया था।



कुरुक्षेत्रं स तपसा पुष्यं चक्रे महातपाः ।  
अश्वत्थममिष्यन्त तथा शत्रुरथं मुनिम् ।<sup>१</sup>

इसके अनन्तर मयवान् सूर्यदेव की कन्या तपती ने राजा छत्ररथ के धीरे से राजा कुरु को उत्पन्न किया। हे राजन् ! कुरु को धर्मज्ञ समझकर सब जनका आश्रय लेते थे, इन्हीं के नाम से पृथ्वी में कुरुवाङ्गल देश प्रसिद्ध हुआ और इसी महा तपस्वी राजा ने अपनी कठोर तपस्या से कुरुदेव को पुष्य व पुनीत बनाया।

महाराजा कुरु ने पुष्पों के नाम को बहुत उज्ज्वल किया वह इतना तेजस्वी था कि उसके परजात् उसके बंध का नाम कौरव पड़ गया इसी कौरव बंध में धार्ये बनकर कौरव धीरे पाण्डव हुए।

## समन्तक पंचक और परशुराम

प्रेताद्वापरयोः सग्धी रामः सस्त्रमूर्ता वरः ।  
असकृत् यापिर्षं क्षत्रं अक्षानामर्षयोदितः ॥  
स सर्वं क्षत्रमुत्साद्य स्वधीर्षणानसद्युतिः ।  
समन्तपञ्चके पञ्च अकार रोषिरान् ह्यवान् ॥  
स तेषु शशिराम्भसु ह्येषु ऋषिभूच्छ्रितः ।  
पितृन् सन्तर्पयामास शशिरैरेति नः श्रुतम् ॥  
अथर्षीकादयोऽभ्येत्य पितरो राममङ्गवम् ।  
राम राम महामागा प्रीताः स्म तव भार्गव ॥  
अनया पितृमक्तया च विक्रमेण तव प्रभो ।  
वरं यूणीष्व भद्रं ते यमिच्छसि यथाः महाद्युते ॥  
एवमुक्तस्तु पितृमी रामः प्रसवता वरः ।<sup>१</sup>

प्रेता और द्वार के संश्रितास में सस्त्रधारियों में श्रेष्ठ श्री अमरन्व राम ने अपने पिता ऋषि अमरन्विक के बंध होने पर क्षीर में आकर पुष्पी वासी रात्रियों का बार-बार संहार किया और पाँच ठाणाव उनके रक्त से भरकर खड़ी रक्त से अपने पितरों का तर्पण किया। ऐसा हमने परम्परा से सुना है। तर्पण के समय जुहु ऋषीक धीरे अमरन्विक प्राणि उनके पितरों ने राम के पास आकर कहा। हे राम महाभाग्य हम तुम से प्रसन्न हैं और तुम्हारी पितृ भक्ति से संतुष्ट हैं तुम वर माँगे परशुराम भी मैं उत्तर दिया—

यदि मे पितरः प्रीता यद्यनुग्राहता मयि ।  
यच्च रोषामिभूतेन क्षत्रमुत्सापितं मया ॥

(१) महाभारत अ० ५ अ० ६५ श्लोक ५५ से ६१ । (२) महाभारत अष्टादि सर्ग २ श्लोक १ से ७ ।

भ्रतदच पापान्मुच्येऽहमेव मे प्रापितो वटः ।  
 ह्लादाच तीर्थ भूता मे भवेयुषु वि विभुता ॥  
 एवं भविष्यतीरयेव पितरस्समपाद्भुवन ।  
 त समस्वेति निपि पिघुस्तत स विरराम ह ॥  
 तेषां समीपे यो देशो ह्लादानां रुधिराम्मसाम् ।  
 समस्तपञ्चक मिथि पुष्य सत् परिकीर्तितम् ॥  
 येन सिङ्गनेन यो देशो मुक्त समुपसक्यते ।  
 तेनैव माम्ना स देशं बाध्यमाहुर्मनीषिणः ॥१

यदि मेरे पितृगण मुझ पर प्रसन्न हैं तो मुझे यह बर दें कि कोकनस में मे को शशियों का संहार किया है इस पाप से मैं मुक्त हो जाऊँ और इन पाँच राजाओं में स्नान, दान, पूजनादि से प्राणियों के समस्त पाप नष्ट हों। पितरों ने कहा, ऐसा ही हो।" कुक्षेत्र के सन्धी बचिर पूर्ण पाँच तीर्थों को समस्त पञ्चक कहते हैं।

पुरुषों के राजा बुप्यन्त के प्रतापी पुत्र सर्वदमन ने सरस्वती तट पर यज्ञ किए। सर्वदमन बहुत बड़ा विवेका और सम्राट का जिसको भरत भी कहा जाता है। सर्वदमन भरत ने अपने राज्य को सरस्वती और यंगा के मध्यवर्ती प्रदेश में स्थापित किया था।

## कुरुक्षेत्र में प्रसिद्ध वन और नदियाँ

बामन पुराण के अनुषार कुरुक्षेत्र प्रदेश में साठ वन और नौ नदियों का बसंन है—

ऋषभ ऊचुः ॥ वनानि सप्त नो ब्रूहि सप्त नद्यश्च का ।

तीर्थानि च समप्राणि तीर्थस्नानफलं तथा ॥

सोमहर्षण उवाच— धृष्टु सप्त वनानीह कुरुक्षेत्रस्य मध्यत ।  
 येषां नामानि पुष्पानि सप्त पाप हराणि च ॥  
 काम्यकं च वनं पुष्यं तयाप्रदिति वनं महत् ।  
 ध्यासस्य च वनं पुष्य पत्सकी वन मेव च ॥  
 तथा सूर्यं वनं स्वानं तथा मधुवनं महत् ।  
 पुष्यपीठ वनं नाम सर्वं कल्मष नाशनम् ॥  
 वनान्ये तानि वै सप्त नदीः धृष्टुत मे द्विज ।  
 सरस्वती नदी पुण्या तथा वैतरणी नदी ॥  
 धापया च महा पुष्या गंगा मन्दाकिनी नदी ।  
 मधुभवा अम्भु नदी कौशिकी पाप नाशिनी ॥  
 ह्यपठती महापुण्या तथा हिरण्यवती नदी ।  
 वर्षाकालं वहा सर्वा वर्जयित्वा सरस्वतीम् ॥  
 एतासामुदकं पुष्य प्रावृत्काले प्रकीर्तितम् ।  
 रजस्वसास्वमेतासां विद्यते न कदाचन ॥  
 तीर्थस्य च प्रभावेण पुष्या ह्येतां परिच्छरा ॥<sup>१</sup>

साठ वन यह हैं । (१) काम्यक वन (२) धरिति वन, (३) ध्यास वन (४) पत्सकी वन  
 (५) सूर्य वन (६) मधुवन, (७) पीठ वन ।

नौ नदियाँ यह हैं । (१) सरस्वती (२) वैतरणी (३) धापया (४) मन्दाकिनी  
 (५) मधुभवा (६) अम्भुवती (७) कौशिकी (८) ह्यपठती (९) हिरण्यवती । इन नौ नदियों  
 में केवल सरस्वती वर्षभर बहती है । शेष साठ नदियाँ वर्षाकाल में बहने वाली हैं ।

## सरस्वती नदी

श्रुत्येव के अनुसार सरस्वती वर्षभर तीव्रपति से बहने वाली नदी थी। श्रुत्येव के अनेकानेक स्थानों में सरस्वती का स्पष्ट उल्लेख है। इसके तट पर कितने ही ब्रह्म गौर बुद्ध हुए थे। अनेक यंत्रों में सरस्वती की बड़ी ही दिव्य स्तुति की गई है। श्रुत्येव के २।४।१।१६ में सरस्वती को मातृपत्य नदियों और देवताओं में मध्य कहा गया है। इसके अर्थ होता है कि धार्यों की दृष्टि में यंत्रा से भी बड़कर सरस्वती नदी थी। तैत्तिरीय-संहिता ७।२।१।४ अथर्व संहिता १।३।०।१ तैत्तिरीय ब्राह्मण २।४।६।७, मन्त्र ब्राह्मण २।१।१६

ताण्ड्य महा ब्राह्मण २।१।०।१ और १६ जैमिनीय ब्राह्मण २।२।६७ और १।१२०, ऐतरेय ब्राह्मण २।१।६ अथर्वान्न ब्राह्मण १।२।१ और अथर्व ब्राह्मण १।४।१।१४ धारि में भी सरस्वती की बड़ी महिमा गाई गई है। कुछ लोग कहते हैं कि कई मन्त्रों में सिन्धु के लिए ही सरस्वती शब्द आया है परन्तु इस विषय में कोई ठोस प्रमाण नहीं है। मंत्रकोश और शिव के मत से भी श्रुत्येव में सरस्वती शब्द सर्वत्र क्लृप्त में बहने वाली सरस्वती के लिए ही आया है।

“श्रुत्येवदाद् दिवोदासं ब्रह्मयदवाय सरस्वती”<sup>१</sup>

इस सरस्वती ने ब्रह्मयज्ञ के लिए दिवोदास को दिया। अस्तित्व की सबसे पूर्व की प्रविष्ट नदी सरस्वती अपनी अन्तः स्रष्टु, सतलुज, विपास (ध्यास) परम्परी (रावी) घग्गिनी (जनाब), विस्तता (बेहलम) और सिन्धु की तरह हिममयित स्रोत वाली सरासीय नहीं थी। पार्श्वों और पश्चिमों में अरुण और घग्गिनी सीख हो जाती थी। पर अस्तित्वों तक धार्यों को अपने सीमान्त पर इस स्थान पर बड़े रूढ़ि का सन्ने अरुणर दिया था, इसलिए वह उसके प्रति श्रेय स्रः बहिनों से भी अधिक कृतज्ञ थे। परम्परी अस्तित्व के मध्य में थी। धार्य मानते थे इन्द्र की सनके ऊपर महती कृपा है, तो भी सरस्वती का विशेष आदर करते थे। सरस्वती से पूर्व कुछ योजन पर यमुना एक विद्या नदी थी पर धार्य उसे अपनी नहीं कह सकते थे। दुर्बल दन्तु उसके तट पर अधिकार रखते थे यदि सरस्वती ने मन्त्र और धारण और सहायता न की होती तो अस्तित्वों के सामने धार्यों के बर उचड़ जाते।

सरस्वती तट का प्रवेश अत्यन्त समृद्ध था। इसी सुविधा की माए अर्थात्क हूब देती थी, यहाँ के बर सबसे अधिक बलिष्ठ होते थे। सरस्वती के तट की यह सुविधा हरे-जरे अरुणों से, पीपल बहिर, विधीरक, हरिद्र, पलाशदि वृक्षों और यंत्र काष्ठ, कुछ वृक्षों धारि वृक्षों से बड़ी थी। यहाँ के स्वाभाविक और कृत्रिम बसाधर्यों में पुष्पीक जब पत्तियों में फूलते तो रिघाए सुपन्धित और सौन्दर्य से भर जाती थी। सरस्वती तट के निवासी अरुण हो वा कुम्भिक इन्द्र और धारि की सेवा में सरा संतप्त रहते थे। बर-बर ये धारि धार्य असा करती, अरुणों प्राण धार्य करिषवा करणें में अनेक धार्यकुल तथा रहता। प्राण धारवा

सायंकाल को यदि इन धारों में कोई पहुँच पाता तो प्रत्येक घर से हवन का धूम धाकाज में बिछाई पड़ता उसकी सुगन्ध मन को तृप्त करती, कार्गों में यात्री रथतर या बूचरे धाय के मधुर स्वर सुनाई देते ।

महो प्रणं सरस्वती प्रचेत मति के तुना वियो  
विदवा वि राजति ।<sup>१</sup>

सरस्वती जलरूप धारण्य वेज युक्त पाप नाशिका है । अपने प्रवाह से पुण्यों के हृदय में चेतना शक्ति का संचार करती है । इसके सर्व प्रकार की उत्तम बुद्धियों का सर्वतोन्मी विकास होता है ।

मन्वितमे नदीतमे देवितमे सरस्वती ।  
मप्रसस्ता इवस्मसि प्रशस्तिम्ब म स्तुभि ॥<sup>२</sup>

माताओं ने श्रेष्ठ, नदियों में श्रेष्ठ, देवियों में श्रेष्ठ सरस्वती हम को पमर्षं से कमुपित पार्श्व से पूरित धीर हीन हीन हो गए हैं । हे माता- हम सब को पुण्य प्रदान से निष्पन्न बना दो और जन सम्पत्ति भी देकर हीनता हीनता से बचाओ । हमें कीर्ति का भाजन बना दो ।

पञ्चे मद्यः सरस्वतीमपि यन्ति सस्वीतसः ।  
सरस्वती तु पञ्चधासो देवोऽमबरसरित् ॥<sup>३</sup>

पाँच नदियाँ सरस्वती में प्रतीव हो जाती हैं क्योंकि उनका प्रवाह सरस्वती के समान ही पुण्य पुनीत और रमणीय है । सरस्वती ही स्वयं पाँचों नदियाँ हो गई हैं पचमा उन सभी का नाम ही सरस्वती है ।

इडा भागीरथी गंगा विगसा यमुना नदी ।  
तयोर्मध्यगता गाङ्गी सुपुम्णास्मा सरस्वती ॥<sup>४</sup>

इतिष्ठ धाम में इडा गाङ्गी पना है । धाम भाग में विगसा गाङ्गी यमुना महान नदी है । इन दोनों प्रदान गाङ्गी के मध्य जम्बून पमना गाङ्गी सुपुम्णा ही चेतना वाहिनी देवी सरस्वती है ।

प्लक्षवृक्षारसमुद्भूता सरिष्णुष्ठा घनातनी ।  
सर्वपापक्षयकरी स्मरणादपि नित्यशः ॥  
घटीय तृष्णमा मुक्तः सरस्वत्या ममञ्जह ।  
सत्र सम्पूत देहस्तु विमुक्तः सर्व पातकी ॥  
सरस्वती समासाद्य तर्पयेत्पु देवता ।  
सारस्व तेषु लोकेषु मोदते नात्र संशयः ॥  
पूर्वप्रवाहे यः स्नातिगङ्गा स्नानफलं लभेत् ।  
प्रवाहे इतिष्ठे तस्या मर्मन्वा सरिता वरा ॥

(१) अथर्व वेदिका म० १ ज० २ स० ३ । (२) अथर्व वेदिका म० १०२३ (३) अथर्व वेदिका म० १०२३ । (४) अथर्व वेदिका म० १०२३ । (५) अथर्व वेदिका म० १०२३ ।

स्नात्वा शुद्धिमवाप्नोति यत्र प्राची सरस्वती ।

देव मार्गं प्रतिष्ठाय देव मार्गेण निःसृताः ॥<sup>१</sup>

पितृवन के मृत से निकली हुई नित्य घटीघ सरस्वती के स्मरण करने से सर्व पाप नष्ट हो जाते हैं। जो वृष्णा घबरा व्यास में सरस्वती में स्नान करे, उसके समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। सरस्वती पर देवताओं और पितृओं को स्वाहा स्वधा के वृत्त करने वाला मनुष्य मृत्यु परवात् सरस्वती मोक्ष को प्राप्त होता है। इसमें सन्देह नहीं है। सरस्वती के पूर्व प्रवाह में स्नान करने वाला मनुष्य यथा स्नान का फल पाता है। जो मनुष्य सरस्वती के बहिष्कृत प्रवाह में स्नान करता है उसे नर्नदा स्नान का फल मिलता है। जो प्राची घुड़ मन प्राची सरस्वती में स्नान करता है वह देवमार्ग को प्राप्त होता है।

हरावती नदी तद्वत्सर्वं तीर्थाभिवाशिनी ।

यमुना देविका कासी चन्द्रभागा सरस्वती ॥<sup>२</sup>

हरावती यमुना, काशी, चन्द्रभागा और सरस्वती नदियाँ सम्पूर्ण तीर्थों में रहने वाली हैं।

येतु श्राद्ध करिष्यन्ति प्राची माधित्य मानवाः ।

न तेषां दुर्लभं किञ्चिद्दिह लोके परम च ॥

नरनारायणौ देवौ ब्रह्मा स्याणु सदा रवि ।

प्राची देवा निषेवन्ते स ब्रह्मणि सवा सवा ॥

तस्मात्प्राची सदा सेव्या पञ्चम्या तु विधेयत ।

पञ्चम्यां सेवमानस्तु सङ्गमीवान् भविता मृत ॥

त्रिचन मे करिष्यन्ति प्राचीं प्राप्य सरस्वतीम् ।

न तेषां दुष्कृत किञ्चिद्देहमा मित्य तिष्ठति ॥

देवमार्गं प्रतिष्ठा च देव मार्गेण निर्गमता ।

प्राची सरस्वती पुण्या अपि दुष्कृत कर्मिणाम् ॥<sup>३</sup>

जो मनुष्य प्राची सरस्वती के तट पर श्राद्ध करे, उसके लिए इहलोक और परलोक में कुछ भी दुर्लभ नहीं होगा। नर नारायण ब्रह्मा, विष्णु, सूर्य और ब्रह्मणियों के साथ ब्रह्मादि संहित देवता भी प्राची सरस्वती की सेवा करते हैं। परत प्राची सरस्वती सेवा सेवनीया है। पञ्चमी तिथि में जो कसभी सेवा का महात्म्य और भी उत्तम है। पञ्चमी की सरस्वती की सेवा करने वाला जनमान होता है। जो मनुष्य प्राची सरस्वती में त्रिचन उपवास करे उसके पाप नष्ट हो जायेंगे। प्राची सरस्वती देवमार्ग से निकलती है और देवमार्ग में ही प्रतिष्ठित है।

तत्रैव च वसन्तीऽऽ सरस्वत्यास्तटे स्थित ।

तस्य शानं ब्रह्ममर्म भविष्यति न संशय ॥<sup>४</sup>

जो मनुष्य सरस्वती तट पर निवास करता है उस को ब्रह्मज्ञान प्राप्त हो जाता है इसमें सन्देह नहीं है।

(१) शान्त उपनिषद् अ० ४२ श्लोक ७ से २१ । (२) मत्स्य उपनिषद् । (३) महाभारत । (४) शान्त उपनिषद् अ० ४४ श्लोक ११ ।

सायंकाल को यदि इन घाटों में कोई पहुँच जाता तो प्रत्येक घर से हवन का धूम सायंकाल में दिखाई पड़ता, उसकी सुगन्ध मन को वृत्त करती कानों में नायनी रम्यर या कुसरे घाम के मधुर स्वर सुनाई देते ।

महो मणु सरस्वती प्रवेत यति के तुना प्रियो  
विषवा वि राजति ।<sup>१</sup>

सरस्वती अक्षय्य धरत्यन्त वेज युक्त पाप नाशिका है । अपने प्रवाह से पुरखों के हृदय में शैतना शक्ति का संचार करती है । इससे सर्व प्रकार की अक्षय बुद्धियों का सचटोवामी विकास होता है ।

अभ्युत्थमे नदीथमे देवितमे सरस्वती ।  
अप्रसस्ता इवस्मसि प्रसस्तिम्ब न स्कृधि ॥<sup>२</sup>

मातापी मै श्रेष्ठ नदियों में श्रेष्ठ, देवियों में श्रेष्ठ, सरस्वती, हम सौ ब्रह्मचर्य से कल्पित पापों से पूरित और हीन दीन हो गए हैं । हे माता हम सब को पुण्य प्रदान से निष्पाप बना दो और धन सम्पत्ति भी देकर दीनता हीनता से बचाओ । हमें शक्ति का प्राजन बना दो ।

पञ्चे नद्यः सरस्वतीमपि यन्ति सस्त्रौतसः ।  
सरस्वती तु पञ्चपासो देसेऽनवरसरित् ॥<sup>३</sup>

पाँच नदियाँ सरस्वती में प्रचीन हो जाती हैं क्योंकि उनका प्रवाह सरस्वती के समान ही पुण्य पुनीत और रमणीय है । सरस्वती ही स्वयं पाँचों नदियाँ ही गई हैं अथवा उन सभी का नाम ही सरस्वती है ।

इडा भागीरथी गंगा पिगसा यमुना नदी ।  
तयोर्मध्यगता नाङ्गी सुपुम्णास्मा सरस्वती ॥<sup>४</sup>

वक्षिष्ठ नाम में इडा नाङ्गी पंग्रा है । काम भाग में पिगसा नाङ्गी यमुना महा नदी है । इन दोनों प्रधान नाङ्गियों के मध्य अञ्चल बचना नाङ्गी सुपुम्णा ही शैतना बाहिनी देवी सरस्वती है ।

प्लदावृक्षारसमुद्भूता सरिच्छ्रुष्ठा समातमी ।  
सर्वपापक्षयकरी स्मरणापि नित्यस ॥  
अतीव तृप्यमा युक्तः सरस्वर्यां ममञ्जह ।  
तत्र संस्मृत देहस्तु विमुक्तः सर्व पातकैः ॥  
सरस्वतीं समासाद्य सर्पयेत्पु देवता ।  
सारस्व तेषु लोकेषु मोदते नाम संशया ॥  
पूर्वप्रवाहे या स्नातिगङ्गा स्नानफलं सजेत् ।  
प्रवाहे वक्षिणे तस्या नर्मदा सरिता वरा ॥

(१) अथर्व वेदिका म १ अ० २ श० ४। १२। बज्रवेद वेदिका १००२ (२) अथर्व वेदिका ४।१।११। (३) अथर्व वेदिका १४।१। (४) बौध्द-बौध्द धारण ।

स्मात्वा दुद्धिमवाप्नोति यत्र प्राची सरस्वती ।

देव माग प्रतिष्ठाय देव मार्गेण निमृताः ॥<sup>१</sup>

विमदन के मूल से निकली हुई नित्य घटीरा सरस्वती के स्मरण करने से सब पाप नष्ट हो जाते हैं। जो तृप्ला घबवा प्यास में सरस्वती में स्नान करे उसके समस्त पाप दूर हो जाते हैं। सरस्वती पर देवताओं और पितरों को स्वाहा, स्वहा से तृप्त करने वाला मनुष्य मृत्यु परवात् सरस्वती शोक को प्राप्त होता है। इसमें सन्देह नहीं है। सरस्वती के पूज प्रवाह में स्नान करने वाला मनुष्य गंगा स्नान का फल पाता है। जो मनुष्य सरस्वती के दक्षिण-प्रवाह में स्नान करता है उसे नर्मदा स्नान का फल मिलता है। जो प्राणी शुद्ध मन प्राची सरस्वती में स्नान करता है वह देवमार्ग को प्राप्त होता है।

इरावती नदी तद्वत्सर्व तीर्थाधिवासिनी ।

यमुना देविका कासी चन्द्रमाणा सरस्वती ॥<sup>२</sup>

इरावती, यमुना काशी, चन्द्रमाणा और सरस्वती नदियाँ सम्पूर्ण तीर्थों में रहने वाली हैं।

येतु श्राद्ध करिष्यन्ति प्राची माश्रित्य मानवाः ।

न तेषां दुर्त्तम किञ्चिद्दिह सोके परत्र च ॥

नरनारायणो देवो ब्रह्मा स्थाणु सदा रविः ।

प्राचीं देवा निषेवन्ते स ब्रह्मपि सवा सवा ॥

तस्मात्प्राची सदा सेव्या पञ्चम्यां तु विद्येपत ।

पञ्चम्यां सेवमानस्तु सङ्गोपान् भविता नरः ॥

मिरात्रं ये करिष्यन्ति प्राचीं प्राप्य सरस्वतीम् ।

न तेषां दुष्कृत किञ्चिद्देहमा धित्य तिष्ठति ॥

देवमार्गं प्रतिष्ठा च देव मार्गेण निर्गमता ।

प्राची सरस्वती पुण्या अपि दुष्कृत कमिणाम् ॥<sup>३</sup>

जो मनुष्य प्राची सरस्वती के तट पर श्राद्ध करे उसे उनके लिए इहलोक और परलोक में कुछ भी दुर्त्तम नहीं होगा। नर माणवण, ब्रह्मा, पितृ सूर्य और ब्रह्मर्षियों के साथ इन्द्रादि सहित देवता भी प्राची सरस्वती की सेवा करते हैं। अतः प्राची सरस्वती सदा सेवनीया है। पञ्चमी तिथि में तो ब्रह्मर्षी सेवा का महारम्य और भी उत्तम है। पञ्चमी को सरस्वती की सेवा करने वाला जनमान होता है। जो मनुष्य प्राची सरस्वती में शिष्टाभि-जपवाच करे उसे उसके पाप नष्ट हो जायेंगे। प्राची सरस्वती देवमार्ग से निकलती है और देवमार्ग में ही प्रतिष्ठित है।

तत्रैव च वसन्तीऽ सरस्वत्यास्तटे स्थिता ।

तस्य शानं ब्रह्ममयं भविष्यति न संशयः ॥<sup>४</sup>

जो मनुष्य सरस्वती तट पर निवास करता है उस को ब्रह्मज्ञान प्राप्त हो जाता है इसमें सन्देह नहीं है।

(१) शान्त पुराण च ५२ श्लोक ७ से ११ । (२) मत्स्य पुराण । (३) बराह्मण्यत । (४) शान्त पुराण चन्द्रमण ३४ श्लोक ११ ।



सर्वकाल को यदि इन धारों में कोई पहुँच जाता तो प्रत्येक बार से हवन का धूम धाकाव में दिखाई पड़ता, उसकी सुगन्ध मन को तृप्त करती, कानों में गायत्री रम्यतर वा हृदये धाम के मधुर स्वर सुनाई देते ।

महो मरुं सरस्वती प्रचेत यति के तुना भियो  
विस्वा वि राजति ।<sup>१</sup>

सरस्वती असक्य धस्यन्त तेज पुक्त पाप नाधिका है । अपने प्रवाह से पुरुषों के हवन में शैतना धाति का संचार करती है । इसके सर्व प्रकार की उत्तम बुद्धियों का सप्तोद्गामी विकास होता है ।

धम्बिष्ठमे नदीतमे देवितमे सरस्वती ।  
धप्रद्यस्ता इवस्मसि प्रसस्तिस्त्व न स्तुधि ॥<sup>२</sup>

माताओं से श्रेष्ठ, नदियों में श्रेष्ठ, देवियों में अह सरस्वती हम सो वमवर्म से कमुपित, पार्यों से पुरित और हीन हीन हो गए हैं । हे माता हम सब को पुष्य प्रदान से निष्पाप बना दो और धन सम्पत्ति, श्री शैकर हीनता हीनता से बचाओ । हमें कीर्ति का साजन बना दो ।

पठ्ये मद्य सरस्वतीमपि यन्ति सस्त्रीतस ।  
सरस्वती तु पञ्चभासो शेषेऽमवत्सरित् ॥<sup>३</sup>

पौत्र नदियाँ सरस्वती में प्रवीन हो जाती हैं क्योंकि इनका प्रवाह सरस्वती के समान ही पुष्य पुनीत और रमणीय है । सरस्वती ही स्वयं पार्यों नदियाँ हो गई हैं धमचा सन सत्री का नाम ही सरस्वती है ।

इडा भागीरथी गंगा पिगसा यमुना नदी ।  
तयोर्मध्यगता नाडी सुपुम्यास्या सरस्वती ॥<sup>४</sup>

वक्षिण भाग में इडा नाडी रंगा है । बाय भाग में पिपता नाडी यमुना महा नदी है । इन दोनों प्रधान नादियों के मध्य अन्धस धमना नाडी सुपुम्या ही शैतना नाहिनी शैवी सरस्वती है ।

प्लक्षवृक्षात्समुद्भूता सरिच्छ्रुष्ठा सनातनी ।  
सर्वपापक्षयकरी स्मरसावपि निरयस्य ॥  
मतीव धृष्णया युक्तः सरस्वत्या ममञ्जह ।  
तत्र सम्पुत देहस्तु विमुक्तः सर्व पासकै ॥  
सरस्वती समासाद्य तर्पयेत्पु देवता ।  
सारस्व तेषु शोकेषु मोदते नात्र सशयः ॥  
पूर्वप्रवाहे यः स्नातियङ्गा स्नानफलं सजेत् ।  
प्रवाहे वक्षिणे तस्या नर्मन्वा सरिता वर ॥

(१) ऋग्वेद संक्षिप्त म १ अ० १ स० १। १। वाक्युर्दे वक्षिणा १००२ (२) ऋग्वेद संक्षिप्त  
१। १। १। (३) इन्द्र वाक्युर्दे वक्षिण १। १। १। (४) गोल-गोल शाल ।

स्नात्वा बुद्धिमवाप्नोति यत्र प्राची सरस्वती ।

देव मार्ग प्रतिष्ठाय देव मार्गेण निःसृताः ॥<sup>१</sup>

विजयन के मूस से निकली हुई नित्य घरीघ सरस्वती के स्मरण करने से सब पाप नष्ट हो जाते हैं। जो वृष्णा घनवा प्यास में सरस्वती में स्नान करे, उसके समस्त पाप दूर हो जाते हैं। सरस्वती पर देवताओं और पितरों को स्वाहा, स्वधा से वृष्ट करने वाला मनुष्य मृत्यु पश्चात् सरस्वती तट को प्राप्त होता है। इसमें संदेह नहीं है। सरस्वती के पूर्व प्रवाह में स्नान करने वाला मनुष्य क्या स्नान का फल पाता है। जो मनुष्य सरस्वती के दक्षिण-प्रवाह में स्नान करता है उसे नर्क का स्नान का फल मिलता है। जो प्राणी पुत्र मय प्राची सरस्वती में स्नान करता है वह देवमार्ग को प्राप्त होता है।

इरावती नदी तद्वत्सर्वं तीर्थाधिवासिनी ।

यमुना देविका कासी चन्द्रभागा सरस्वती ॥<sup>२</sup>

इरावती यमुना, काशी चन्द्रभागा और सरस्वती नदियाँ समूह तीर्थों में रहने वाली हैं।

येतु श्राद्धं करिष्यन्ति प्राची माश्रित्य मानवाः ।

न तेषां दुर्लभं किञ्चिद्विद्मः सोके परम च ॥

नरनारायणौ देवौ ब्रह्मा स्वार्णुः सदा रवि ।

प्राचीं देवा निपेवन्ते स ब्रह्मपि सदा सदा ॥

तस्मात्प्राची सदा सेव्या पञ्चम्यां तु विशेषतः ।

पञ्चम्यां सेवमानस्तु सन्मीवान् भविता मरुः ॥

त्रिपथ ये करिष्यन्ति प्राचीं प्राप्य सरस्वतीम् ।

न तेषां दुष्कृतं किञ्चिद्देहमा श्रियं सिष्ठति ॥

देवमार्गं प्रतिष्ठा च देव मार्गेण निर्गमता ।

प्राची सरस्वती पुण्या अपि दुष्कृतं कमिणाम् ॥<sup>३</sup>

जो मनुष्य प्राची सरस्वती के तट पर श्राद्ध करने उनके लिए इहलोक धीर पर लोक में कुछ भी दुर्लभ नहीं होता। नर नारायण, ब्रह्मा शिव सूर्य और ब्रह्मसिंहों के साथ इन्द्रादि सहित देवता भी प्राची सरस्वती की सेवा करते हैं। अतः प्राची सरस्वती सदा सेवनीया है। पञ्चमी तिथि में तो बसकी सेवा का महत्त्व और भी उत्तम है। पञ्चमी की सरस्वती की सेवा करने वाला बलवान होता है। जो मनुष्य प्राची सरस्वती में निरादि उपवास करे उसके पाप नष्ट हो जायेंगे। प्राची सरस्वती देवमार्ग से निकलती है और देवमार्ग में ही प्रतिष्ठित है।

तत्रैव च बसन्धीरः सरस्वत्यास्तटे स्थितः ।

तस्य ज्ञानं ब्रह्ममयं भविष्यति न संशयः ॥<sup>४</sup>

जो मनुष्य सरस्वती तट पर निवास करता है उस को ब्रह्मज्ञान प्राप्त हो जाता है इसमें संशय नहीं है।

(१) बाल्य उपपत्त ४० पर श्लोक ७ व ११ । (२) बाल्य उपपत्त । (३) बसन्धीरः । (४) बाल्य उपपत्त ४० श्लोक ११ ।

एवं दिक्षाप्रवाहेण ह्यतिपुण्या सरस्वती ।  
तस्यां स्नातुं सर्वे तीर्थे स्नातो भवति मानव ॥<sup>१</sup>

विद्या प्रवाह के समय सरस्वती बहुत पवित्र है, उस समय जो इसमें स्नान कर लेता है वह सर्व तीर्थों में स्नान फल को प्राप्त होता है ।

“गंगां कनकसने पुण्या, कुण्डोत्तरे सरस्वती”<sup>२</sup>

पंथा का महाराम्य कनकसने में धमिक है और सरस्वती का कुण्डोत्तर में ।

एकापित्रिधामूत्वा गंगां रेवा सरस्वती ।

एतासां तु पुण्यं मासं ये कुर्वन्ति विमोहिताः ॥

तेषां सिद्धं कृतं कर्म जायते पाप कर्मणाम् ॥<sup>३</sup>

पंथा रेवा और सरस्वती तीनों नदियों का मूल एक ही है जो इनकी समन-  
मलय समझते हैं, वे भ्रम में हैं । ऐसे लोग सिद्धि को प्राप्त नहीं होते ।

यस्तु सर्वस्वरं मर्या विवेत्सारं स्वतं जसम् ।

गद्य पद्यमयी वारी तस्य वनात्प्रजायते ॥<sup>४</sup>

जो मन्त्रा सहित वर्ष भर सरस्वती का जमपान करता है वह गद्य और पद्य सिद्धि  
का स्वामी हो जाता है ।

“घने पुण्या सरस्वती”

चैत्र मास में सरस्वती धमिक पुण्य देने वाली हो जाती है ।

उक्ततनं प्रिया प्रियासु सप्त स्वसा मुमुषा ।

सरस्वती स्तोम्या मूता ॥<sup>५</sup>

हम लोगों की प्रिया से भी प्रिया नहीं सरस्वती है जिसकी छाव बहनें हैं । सरस्वती की ही  
हम स्तुति करते हैं ।

“शुपयो वै सरस्वत्यां सत्रमासत्”<sup>६</sup>

सरस्वती तट पर शुषिणी के मन्त्र किए ।

ततो विनयनं गच्छेन्नियतो नियताद्यत ।

गच्छत्यन्तर्हिता यत्र मेरुपृष्ठे सरस्वती ॥

धम सेज्या शिवोद्भवे मागोद्भवे च पुष्यते ।

स्नात्वा तु धमसोद्भवे अग्निष्टोमफल सभेत् ॥

शिवोद्भवे मरु स्नात्वा गोघृहस्त्र फल सभेत् ।

नागोद्भवे मरु स्नात्वा नायसोकमबाप्नुयात् ॥<sup>७</sup>

हे राजन् ! तत्पश्चात् निवृत्तात्मा और निवाहार हो वहाँ से विनयन (कुण्डोत्तर) जावे वहाँ

सरस्वती अन्तर्धान होकर मेरु पृष्ठ मुनेश पर जाती जाती है । केवल धमतीर्थ शिवोद्भवे

(१) शान्त पुण्य ३२ श्लोक १ । (२) मत्स्य पुण्य । (३) स्कन्द पुण्य रेवा कण्ठ । (४) मन्व  
शास्त्र । (५) समवेद कण्ठधमिक म ११ त्वं ४ प्रथा (६) धर्म १ सू १ अ १ म १ । (७) वैश्वदेव  
श्रद्धा १० १ म १ । (८) महाभारत कनकसने म ३२ श्लोक १११ तै १११ ।

घोर नागझूब तीर्थों में ही सरस्वती बर्चान हो सकता है। जम तीर्थ में स्नान से घग्निष्टोम यज्ञ का कस सिधोजूब तीर्थ में स्नान से उहस्व योदान का फल घोर नागझूब तीर्थ में स्नान से नाग सोक की प्राप्ति होती है।

सरस्वती तट पर अनेकानेक यज्ञ हुए हैं, कार्यायन शीत सूत्र १२।३।२० तथा २।५।२२, माध्यायन शीत सूत्र १०।१।१।१ १०।१।३ ११।४ घ्रास्य यो० सूत्र १२।५।२।३, वाचायन शीत सूत्र १।१।२६, ऋग्वेद १।०।१।३ १६।५।१६ २।४।१।१६ से प्रारम्भ ३।०।०, ३।२।०, ३।३।५।१३ ३।४।२।१२ ३।४।३।११, ६।४।१।७ ६।५।०।१२ ६।५।२।६, ७।१।५, ७।३।३।३ ७।३।३।५, ७।४।०।३ ८।२।१।१७, ८।३।४।४, १०।१।७।७ १०।३।०।१२, १०।१३।१।५, १०।१०।५।२ । अथर्व वेद ५।५।६ ५।२।३।१ ६।३।२ ६।०।१।३ ७।६।०।१ १।४।२, १।५।२० १६।४।४ ११।३।२।६, तैत्तिरीय सं० १।५।१।३।३ याजुष्येयी सं० ११।१।३ ३।५।१।१, छठपत्र ब्राह्मण १।६, २।४ ११।४।३।३ १२।७।१।१२ तथा २।३, बृहदारण्यकोपनिषद् ६।३।० वेदों में सरस्वती को बर्च ब्रह्म नदी (नवीतया) कहा गया है। ऋग्वेद २।४।१।१६ सरस्वती के तट पर बहुत से राजाओं का राज्य था और उसके किनारे पाँच जातियों रहती थीं। ऋग्वेद ८।२।१।२२, ६।६।१।१९, त्रिभर अग्नेय विश्वरमेवेन ५।१०, प्रिफूष हिम्स घाठ वि ऋग्वेद १।६।०।२।६० मुद्रनिक द्रान्त्वमेघान्नाष्ठ वि ऋग्वेद ३।२०।१ २०२ सेक व बुस घाऊ दि ईस्ट ३०।१०।

“पूर्व से पश्चिम की घोर बहने वाली नदियों की ऋग्वेद १०।७।३।३ की सूची में गमा, यमुना सरस्वती घोर सुगुप्ति हैं। जिसमें सरस्वती यमुना तथा सतसुत्र के बीच में पड़ती है, जो कि वर्तमान सुरसुती (सरस्वती) का स्थान है जो कि मानेस्वर नगर के पश्चिम से बहती हुई पटियासा प्रांत में सम्य पश्चिम बाहिनी नदी से मिलती है; तथा सिरसा जिला हिसार से होकर मुजबती है घोर भटनेर के स्थान पर बाहू में मुप्त हो जाती है। परन्तु एक सूची हुई (हकदा या बमर) उस स्थान से सिधु नदी तक प्राण की था सकती है।”

कासन तथा मैकसमूलर के मत से सरस्वती कुषलेज की ही सरस्वती है।

“सरस्वती नदी हिमालय धोखी के सिन्धुनिक पर्वत धोखी की सिरमीर पहाड़ी से निकल कर अम्बासा में घाघिबही के पास उतरती है। यह हिन्दुओं की पवित्र नदियों में से है। पर्वत में एक झरना था जिससे यह नदी निकलती थी वह पला वृष की बड़ के पास ही था, इसलिए वह प्लासावतरण या प्लास प्रसबल कहा जाता है घोर तीर्थ स्थान है।”

महानारत घाघि पर्व घ० १।७२, पद्म पुराण स्वर्ग अष्ट घ० १४ घोर ऋग्वेद १०।७।३ में भी सरस्वती को पला वृष की बड़ से निकली हुई कहा है।

“यह बतौर घाम के पास बाहू में विमीन हो जाती है घोर बरधेरा के पास फिर प्रकट होती है। पहेवा के निकट उरनाय में मारकम्पा नदी में मिल जाती है। यह संयुक्त बाघ सरस्वती ही कहलाती है जो बाघ में सम्य में बोड़ी बुर पर मिल जाती है।”

१ (I) इन्दीकल पत्रिका भाक इतिहा २६ अंक ३२, (II) अष्टवहम-अमरक भाक दि पृथिवीक ऐन्डस्टी प० १४, ४६, ७९। (१) कन्यकिकल किराजती ५ १००। (२) कन्यक लकनिर अम्बासा विद्विष्ट वेत्त १।

एवं विद्याप्रवाहेण सतिपुण्या सरस्वती ।  
तस्यां स्नातुं सर्वं तीर्थं स्नातुं भवति मानवम् ॥<sup>१</sup>

विद्या प्रवाह के समय सरस्वती बहुत पवित्र है उस समय जो इसमें स्नान कर लेता है वह सर्व तीर्थों में स्नान फल को प्राप्त होता है ।

“गंगा कनकसे पुण्या, कुण्डोत्रे सरस्वती”<sup>२</sup>

गंगा का महारम्य कनकन में अधिक है और सरस्वती का कुण्डोत्र में ।

एकापित्रिघामूर्त्वा गंगा रेवा सरस्वती ।  
एतासां तु पुण्यं भाव ये कुर्वन्ति विमोहिताः ॥  
तेषां सिद्धं ब्रुव कर्म जायते पाप कर्मिणाम् ॥<sup>३</sup>

गंगा रेवा और सरस्वती तीनों नदियों का मूल तत्त्व एक ही है जो इनको धाम्य धामन समझते हैं वे भ्रम में हैं । ऐसे भ्रम विधि को प्राप्त नहीं होते ।

यस्तु संवत्सरं मर्या विधेरसारं स्वत जसम् ।  
गद्य पद्यमयी वाणी तस्य वशात्प्रजायते ॥<sup>४</sup>

जो शब्दा सहित वर्ष भर सरस्वती का अभिषेक करता है वह गद्य और पद्य सिद्धि का स्वामी हो जाता है ।

“शैत्रे पुण्या सरस्वती”

शैत्र मास में सरस्वती अधिक पुण्य देने वाली हो जाती है ।

उक्तमं प्रिया प्रियासु सप्त स्वसा सुबुधा ।  
सरस्वती स्वीम्या भूता ॥<sup>५</sup>

हम लोगों की प्रिया से भी प्रिया बड़ी सरस्वती है जिसकी छाव बहनें हैं । सरस्वती की ही हम स्तुति करते हैं ।

“ऋषयो वै सरस्वत्यां सत्रमासत”<sup>६</sup>

सरस्वती सत्र पर ऋषियों ने मन्त्र किए ।

ततो विनयनं गच्छेन्नियतो नियताशन ।  
गच्छत्यन्तर्हिता यत्र मेदपृष्ठे सरस्वती ॥  
जम सेज्या शिवोद्भवे मागोद्भवे च दुष्यते ।  
स्नात्वा तु जमसोद्भवे अग्निष्टोमफलं लभेत् ॥  
शिवोद्भवे नर स्नात्वा गोसहस्रं फलं लभेत् ।  
नागोद्भवे नरः स्नात्वा नागसोकमबाप्नुमात् ॥<sup>७</sup>

हे राजन् ! तत्पश्चात् नियतात्मा और निताहार हो वहाँ से विनयन (कुण्डोत्र) जावे वहाँ सरस्वती अस्तम्यनि होकर मैत्र पुत्र सुमेरु पर बसी जाती है । केवल जमतीर्ष शिवोद्भवे

(१) रामन पुराण ४२ स्कंध २ । (२) मत्स्य पुराण । (३) स्कन्द पुराण रेवा कण्ड । (४) मत्स्य पुराण । (५) रामनेर अष्टादशोऽध्याय २१ त्वं ४ मन्त्र (६) सर्व १ सू १ अध २ म २ । (७) शिवनेर आष्टम्य १० १ अध २ । (८) श्वाम्येय कल पर्व ज ४२ स्कंध १११ से ११२ ।

घोर नामझूद तीर्थों में ही सरस्वती दर्शन हो सकता है। यम तीर्थ में स्नान से अग्निष्टोम यज्ञ का फल विबोद्ध व तीर्थ में स्नान से चतुस्र षोडश का फल घोर नामझूद तीर्थ में स्नान से नाम लोक की प्राप्ति होती है।

सरस्वती तट पर अनेकानेक यज्ञ हुए हैं, कारवायन यौव मूत्र १२।३।२० तथा २५।१।२२ साद्वायन यौव मूत्र १०।१।५।१ १०।१।३ ११।५, मास्य यौ० मूत्र १२।६।२।३ याचामन यौव मूत्र १३।२।१, ऋग्वेद १।८।१।३, १६।५।१।६, २।४।१।१६, से प्रारम्भ ३।०।५, ३।२।८ ३।३।१।३ ३।४।२।१२, ३।४।३।१।१, ३।४।६।७ ३।५।०।१२ ३।५।२।६, ७।१।५, ७।३।६।६, ७।३।६।५, ७।४।०।३ ८।२।१।१।७ ८।३।४।५, १०।१।७।७, १०।३।०।१२, १०।१३।१।५, १०।१८।५।२, १।५।५।५ ११।३।२।६ तैत्तिरीय सं० १।८।१।३।३, ब्राह्मणेयी सं० ११।१।६।३ ३।१।१।१ तत्पत्र ब्राह्मण १।६, २।४ ११।५।३।३ १२।७।१।१२ तथा २।५, बृहदारण्यकोपनिषद् ६।३।८ वेदों में सरस्वती की सर्व प्रथम नदी (ननीतमा) कहा गया है। ऋग्वेद २।४।१।१६ सरस्वती के तट पर महूत से राजाओं का राज्य था घोर उल्लेख किनारे पाँच जातियाँ रहती थीं। ऋग्वेद ८।२।१।१२, ६।६।१।१२ अथर्ववेद ३।१।० अथर्व हिंस्र षाड् वि ऋग्वेद १।६।०।२।१० बुध्निक द्राम्भसेसन षाड् वि ऋग्वेद ३।२।०।१, २०२ सेव क बुध्न पाड् वि ईद ३।२।६।०।

“पूर्व से पश्चिम की घोर बहने वाली नदियों की ऋग्वेद १०।१७।५।५ की सूची में गण, बभ्रुवा, सरस्वती घोर युगुति हैं। जिसमें सरस्वती बभ्रुवा तथा सतसूत्र के बीच में पड़ती है, जो कि वर्तमान सुरसुती (सरस्वती) का स्थान है, जो कि यानेद्वार नगर के पश्चिम से बहती हुई पटियाना प्रान्त में बगल पश्चिम बाहिनी नदी से मिलती है तथा छिरसा जिसा छिहार से होकर पुकरती है घोर बठनीर के स्थान पर बाबू में लुप्त हो जाती है। परन्तु एक सूची हुई (हक्रण या जगद) उस स्थान से सिंधु नदी तक प्राय की जा सकती है।”

साधन तथा मैकसमूनर के मत से सरस्वती कुशलेन की ही सरस्वती है।

“सरस्वती नदी हिमासय य खी के पितृासिक पर्वत श्रेणी की छिरमोर पहाड़ी से निकल कर अम्बासा में धारित्री के पास उतरती है। यह हिन्दुओं की पश्चिम नदियों में से है। पर्वत में एक झरना था जिससे यह नदी निकलती थी यह पक्ष बृच की बड़ के पास ही था इतकिए यह प्लासकठरल या पक्ष प्रसहाय कहा जाता है घोर तीर्थ स्थान है।”

यहामास्य धारि पर्व सं० १७२ परम पुराण स्वर्ग अथ सं० १४ घोर ऋग्वेद १०।७।५ में भी सरस्वती को पक्ष बृच की बड़ से निकली हुई कहा है।

“यह बनीर घाम के पास बाबू में विधीन हो जाती है घोर बरबेरा के पास फिर प्रकट होती है। पक्षे के निकट उरगाम में पारकश्या नदी में मिल जाती है। यह संयुक्त वाय सरस्वती ही कहलाती है, जो बाद में यमर में बोगी बूर पर मिल जाती है।”

१ (i) सौरिक बठनीर षाड् विरुवा ३६ सेव ३२, (ii) जेज्जय-अमरत षाड् वि पटियासिक सेवती १० १२, ५६, ७१। (१) कारासिक विरुवा ३० १५०। (२) पक्षन पश्चिम अम्बासा विरुवा सेव १।

“सरस्वती जम्बेद में एक बहती हुई नदी के रूप में बखित है मनुस्मृति और महाभारत में इसका नाम में विसीन होना बखित है, जो कि विरसा के समीप विनघन तीर्थ कहा जाता है” ।<sup>१</sup>

“बैदिक काल में सरस्वती एक बड़ी नदी थी जो समुद्र में गिरती थी”<sup>२</sup> जम्बेद में प्रयाग की बिनेली में इसका प्रकट होना कहीं पर पोंडा भी बखित नहीं है । कुशलेष की सरस्वती प्राची या पूर्वी सरस्वती है ।<sup>३</sup> यह वह नदी है जो कि सूनी नदी के साथ पुष्कर भीम से निकलती है ।<sup>४</sup> पुराणों में सरस्वती का बर्णन प्वास प्रसबण से समुद्र तक है । विनघन में इसके कुप्प हो जाने तथा पुष्करदि में पुनः प्रकट होने तथा पुनः कुप्प होते हुए लौराप्प में सोमनाथ के मन्दिर के पास समुद्र में गिरने का बखन है” (महाभारत धारण्य १।५३ १।२५, १।१६) । यह नदी कुशलेष में है (सांख्यन बा० १।२।३) । यह नदी है (अभिधान विन्धामणि १५६) यह नदी ब्रह्मावर्त की एक सीमा पर है १०८५ । यह नदी ब्रह्मपुत्री है (काण्य मीमांसा १७।३) । यह नदी पश्चिम देश में है । १७।१० यह नदी उत्तर पथ में है । महाभारत धमा पर्व २८।६, यह नदी पश्चिम देश में है और इसके ठट पर सुमा नीरगण रहते हैं—जो मछली से निर्वाह करते हैं । महाभारत धारण्य (वि०) ८३।४ यह नदी कुशलेष में है और उत्तर की ओर है । महाभारत हरि० वि० १०१।२२, यह नदी उत्तरपथ गामी है । पद्म पुराण छट्टि खण्ड १८।२३३ यह नदी प्रयाग पुष्कर और कुशलेष में कुर्वासा है और अण्यत्र मुक्तमा है । स्कन्द० मं० मार्ग० १५।४७ यह नदी कुशलेष में है । भाष्य० ८३।००। मत्स्य ११।४।२, ब्रह्म० २७।२५ यह नदी हिमासय के पास से निकलती है और भारत में है, २२।४७ यह नदी कुशनाङ्गन की सीमा पर है । २२।३३ यह नदी कुशलेष में सनिहित सर की सीमा पर है । ३२।४ यह नदी पर्वतों को फाकती हुई ईतवन में पुण बई वही प्वास वृष में स्थित हुई, और उससे पैदा होकर प्रवास प्रवाह से कुशलेष में भाई । बही धरलुक के समीप से कुशलेष को कुवाती हुई पश्चिम को जाती गई । ३३।६ यह नदी ब्रह्मावर्त की एक सीमा है । ३५।६ यह नदी सर्वकाल बड़ा और कुशलेष में है । नारदी० उ० ६५।१८ प्वास से पैदा हुई यह नदी मार्कण्डेय के तप स्वान में भाई और सनिहित सर को कुवा कर पश्चिम दिसा को जाती गई । धनि० १०१।१३ यह नदी कुशलेष में तीर्थ है । मनि० बा० ७।६० यह नदी ब्रह्मावर्त की सीमा पर है । वायु पुराण उत्तरार्ध १३।६७ यह नदी विनघन में है ब्रह्माण्ड० मं० उ० १३।६६ यह नदी विनघन में है । नीराम० १६८ यह नदी कुशलेष में है । पथ० धारि० १०३।६ यह नदी कुशलेष और विनघन में है । २३।१८ यह मेघ पृष्ठ में क्षिपती है । पथ पुराण छट्टि खण्ड १७।२८ यह देव माता बेनी है बाह्याण्ड० मं० उपो० ३३।४४ यह नदी पुष्कर में ब्रह्मा के तीर्थों धनि होब के कुष्ठी को पूरा करने को गई । इसके ठट पर धनस्त्या धाम है । तैत्तिरीय बा० ८।३।८ इस सरस्वती ने जष के मध्य में स्थित पुष्य घनायास जैसे कमल की बड़ को उखाड़ वेता है उसी प्रकार अपनी तरलों से पर्वतों के धिक्कर और मूल पीड़ बासे । स्कन्द० प्रजा० धर्तु० १०।२ यह

(१) वे० भार ५ पृष्ठ १८६३ पृ० ५१ । (२) मैसूरकर-जम्बेद संक्षिप्त कथेन्दी ५ ५४ ।  
(३) पद्म पुराण उत्तर खण्ड मं० १७ । (४) कर्म पुराण छट्टि खण्ड मं० १८ ।

नदी हिमालय के इभीषि के घाघम के विप्लव बृहत् से निकलकर दक्षिणान्दिमुक्ती हो पश्चिम सागर को गई। मार्ग में भूमि में प्रविष्ट धीर प्रकट होती हुई प्रभास में पाँच बारावाली हो सबलोवधि में प्रकृष्टि हुई घन बाराभों के नाम यह है (१) हरिष्ठी (२) बज्रिष्ठी (३) म्यंङ्कु (४) कपिमा (५) सरस्वती। कात्यायन श्रौत सूत्र ११।२६ महु नदी है। बामन० ४६।५० यह नदी कुक्षेत्र में है धीर स्वायुजिज्ञ से उत्तर में है। २२।२३ यह नदी कुक्षेत्र में सन्निहित सर की सीमा पर है।

बड़े बड़े दुःख विन्दोनि भारतीय इतिहास का भाग्य बस रामा सरस्वती के प्राप्ति में ही सड़े गए। समय के न्यारमार्तो के साव-साव कमी सरस्वती भारतीय राज्य की सीमा बनी धीर कमी भारतीय राज्य इसकी सीमामों को जाँच गया। रीमूर से लेकर प्रहमद साह पबबानी तक के प्रत्येक प्राक्रमणकारी ने अपनी जून से सनी तनबारे सरस्वती के बाम में कोई।

## दृपडती नदी

दृपडती नदी कुक्षेत्र की दक्षिणी सीमा का निर्माण करती है। दृपडती का धर्म है पत्नरों वाली। यह एक नदी का नाम है जो कुक्षेत्र पूर तक सरस्वती नदी के समानांतर बहती हुई उसमें विरती है। ऋग्वेद १।२१।४ में इसका उल्लेख सरस्वती नदी धीर भाप या नदी के साव परत राजामों के कार्य क्षेत्र में धामा है। वेदविद्य ब्राह्मण २२।१०।१ तथा भाग के कात्यायन श्रौत सूत्र २४।१।६।१८ आट्यायन श्रौत १०।१६।४ इत्यादि साहित्य में दृपडती तथा सरस्वती बन्न करने का प्रमुख स्थान हो गई। यजु में वे दोनों नदियाँ मम्मवेक्ष की पश्चिम सीमा का निर्माण करती हैं (यजु २।१७ तुसना करो विमर घस्तेमद्विषेजतेवेन १८, वेबर इद्विषेस्टद्वियम १।३४ इद्वियम सिद्रेचर ६७।१०२ मेकमानल वेदिक माहपासोथी पृ० ८७) विपर, वेबर धीर मेकमानल सरस्वती धीर दृपडती से दो नदियाँ घन्मवेक्ष की पश्चिम सीमा का निर्माण करती हैं। भारतीय इतिहास की कल्पेखा पृ० ७६ में इसका नाम बगपर लिखा है। बामघाफिकस विषयनदी पृ० २७, यह बगपर नदी घन्मासा धीर सरहिन्द के बीच बहती थी। इस समय राजस्वान के रैनीस्तान में समाप्त हो जाती है (ए० बी० फिशन धीर टाङ्क वे० ए० एच० बी० पृ० १८१)। बनरल कनिषहम इसको राधी नदी मानते हैं जो बानेस्वर के दक्षिण पूर्ण बहती है (पार्की स० रि० बाभूम २४) यह कुक्षेत्र की दक्षिण सीमा बनाती है। दृपडती प्रसिद्ध विभंग जौतम वा विठय है जो सरस्वती तक जाती है (इम्पीरियल गवर्णियर प्राक इन्डिया पृ० २९, रैप्यन एन्सेस्ट इन्डिया पृ० ३१) यही बात ठीक बाभूम पढ़ती है (वे० एम० बी० १८६३ पृ० ३८) यह नदी फलकी वन में है (बामन पुराण घ० ३६) ए० बी० फिशन धीर टाङ्क इसको बगपर मानते हैं (बाघाफिकस विषयनरी)। रैप्यन इसे विभंग जौतम वा विठय मानते हैं। (बा० डि०) कनिषहम इसे रधी मानते हैं। (बा० डि०) मस्तुतः एन्सेट जावकी में दृपडती का कोई नाम नहीं लिखा है। दृपडती नाम से ही ब्यबहार है। दक्षिण में रधी नाम लिखा है। इससे मन्मनासरे का कवन सम्भाव है। मस्तुतः यह कुक्षेत्र की एक नदी का नाम है जो सरस्वती



की सहायक है। प्रायःकाल यह "रती" नाम से कही जाती है। ऐसा गजटियर में लिखा है। यह सरस्वती से बहिये गयी नहीं है। जो सोम घग्घर कहते हैं, उनका मत ठीक नहीं क्योंकि जग्घर सरस्वती से उत्तर में है और इपडती बहिये में होना सिद्ध है। यह ब्रह्मावर्त की बहिये सीमा की नहीं है और मध्यदेश में है। मनुस्मृति २।१७ तथा २१ में इसका नाम प्राया है। इसका नाम मरुमगती भी है। ऋग्वेद ३।२३।४ में एक मन्त्र अग्नि स्तुति में प्राया है और भारत के पुत्र देवधवा और देवबाठ इस मन्त्र के अर्थ हैं। अर्थ यह है 'हे प्राये ! इमा = गो रूप धारिणी पृथ्वी के अष्ट स्वान में विनों के बीच में सुन्दर दिन (जिस दिन इन्द्रादि देव अष्ट देवताओं का पूजन होता है वही अष्ट दिन है) में हम प्रायका स्थापन करते हैं। ये उत्तम स्वान कीन है—इपडती नहीं मानुष तीर्ण प्रायया नहीं और सरस्वती नहीं। वायु पुराण ४५।१६३, यह नहीं हिमालय के अरण्य से निकलती है। पथ पुराण धारि० ६।१२।२३ से २७ तक यह नहीं भारतवर्ष में है। ब्रह्म० २७।२६ यह नहीं भारत में है और हिमालय के अरण्य से निकलती है। मत्स्य पुराण २२।२० यह नहीं पितृ बस्त्रमा और मातृ में करोड़ मुना फल देने वाली है। ५०।६७ यह नहीं कुबजेन में है ११।२१ यह नहीं हिमालय के पार्ष्व से निकलती है। अथर्व० ५५।० यह नहीं भारत में है और हिमालय के पार से निकलती है। पार समीप नामे पर्वत को कहते हैं। बामन पुराण १३।२२ यह नहीं कुमार द्वीप (भारत) में है और हिमालय के पार से निकलती है। २२।४७ यह नहीं कुब जङ्गल की सीमा पर है ३३।६ यह नहीं ब्रह्मावर्त की सीमा पर है और भारत में है। ६५।८ यह नहीं कुबजेन में है और बर्षा काल में बहती है। कूर्म० ब्राह्मी पु० ४७।२६ तथा मार्क० ५।१।६ यह नहीं भारत में है और हिमालय पार से निकलती है। धरि० वा० ७।६० यह नहीं ब्रह्मावर्त की सीमा पर है। देवी भागवत १।१।७ यह नहीं भारत में है। श्रीमद्भागवत ५।१।१।१८ यह नहीं भारत में है। महाभारत भीष्म ६।१५ यह नहीं भारत में है। ब्रह्म० म० १६।२६ यह नहीं हिमालय पार से निकलती है। ब्रह्म० उपो० १६।३६ यह नहीं कुबजेन में है। इस पर किया आद्य अद्य होता है। बामन० ३६।४८ यह नहीं कुबजेन के फलकी वन में है। श्रीमद्भागवत १।७।१।२२ यह नहीं सरस्वती से बहिये में है। भवनाम् की कृष्ण द्वारका से हिन्दी घाटे हुए इसको पार करके सरस्वती तट पर पहुँचे। काशिका पुराण ५।१।२ यह नहीं ठंके और स्वच्छ अन्न वाली है और सुरत छोड़े हुए मुरमे के समान रंग वाली और पाप नाशिनी है, स्कन्द० पार० अनुवर्ष० ७।५।३६ यह नहीं पुष्पा है। महा भारत धामि पर्व (वि०) ३८।३० यह नहीं कुबजेन में है और इस्तिनापुर से भीष्म धर अय्या के स्वान तक घाने पर बीच में पड़ती है। महाभारत पार (वि०) ८।१।४ (म०) ६६।१।६३ यह नहीं कुबजेन के बहिये बाप में है। विष्णु अर्षोत्तर १।१।१।६ यह नहीं भारत में है और हिमालय पार से निकलती है, ३।२।३३ तथा ६३ यह नहीं ब्रह्मावर्त की एक सीमा पर है। मेदिनी कोप त० अ० २ यह एक नहीं है। अग्निमान विष्णुमणि यह नहीं ब्रह्मावर्त की एक सीमा पर है। और० ३७।७३ यह नहीं है। नीलवत् पु० १३।३१ यह नहीं कुबजेन में है। कात्यायन नील सूत्र २५।२।३ आद्यायन नील सूत्र १।१७।१, वाग्ध्व ब्राह्मण २।३।१।१५, कात्यायन शौ० सू० २।५।१।६८ अर्षो इसका प्रयोग साधारण हो गया था यह धारण्यकोपनिषद् ५।१।१।६ तथा २।३ आद्यायन नील सूत्र ५।१।५।६, कात्यायन नील सूत्र १।३।५।१७ धारि। इसलिये देवीय विशेषण (पृथ्वी से सम्बद्ध) कात्यायन नील सूत्र

२२।४।२२, साद्व्यायन श्रौत सूत्र ८।१।२८, ऐतरेय ब्राह्मण ८।१०, बहुत बाद का अथर्वण ३।४।१ साद्व्यायन श्रौ० सू० १०।१६।४ में सरस्वती के संयम पर अष्टारुपास आग्नेय पुरो-  
दाय से यज्ञ का प्रारम्भ लिखा है ८ में ह्यद्वती के दक्षिण तीर से जाया लिखा है और ६ में  
ह्यद्वती के उत्पत्ति स्थान धर्म ठक जाया लिखा है। कात्यायन श्रौत सूत्र २।४।१६८ में  
‘ह्यद्वत्यप्यय’ अथ्य प्राया है, ‘ह्यद्वती संयम’ धर्म है २।४।२३० में ह्यद्वती तट का वर्णन  
है। धौनकीन बहुरेयता २।२।१३७ यह एक नदी है। तान्ह्य ब्राह्मण २।१।१०।१४ में  
‘ह्यद्वती के तट पर’ लिखा है। साद्व्यायन श्रौत सूत्र १।७।१ में ‘यदि सोदकास्वात्’ २ में  
‘अप्यनुदकामा’ में सोदका अनुदका दोनों विशेषण इसे बर्णित नही बता रहे हैं। इसका  
वर्णन पुराणों में भी है।

ह्यद्वती के उत्पत्ति स्थान का नाम ह्यद्वती प्रथम्य अथवा धर्म है। यह यमुना के  
समीप है और हिमाचल के प्रत्यन्त पर्वत पर है। साद्व्यायन श्रौत सूत्र १०।१६।६,

दीर्घोत्तरे कुक्षोत्तरे दीर्घे सप्तन्त ईजिरे ।

मद्यास्तीरे ह्यद्वत्या पुष्पाया धुचिरोष स ॥<sup>१</sup>

ह्यद्वती नदी के तट पर कुक्षोत्तरे धर्म में सप्तन्त वन कर रहे थे।

## आपया नदी

पुराणों में इस नदी का नाम आपया लिखा है।<sup>१</sup> सरस्वती और द्यद्वती की भाँति  
यह नदी भी कुक्षोत्तरे की प्रसिद्ध नदी रही है। परन्तु धारकों के दखन के विचार इस नदी  
का धीर कोई बिन्दु कुक्षोत्तरे में नहीं है। द्यद्वती तो भावकल की श्रौतया या राधी नदी  
को कह नी सकते हैं परन्तु आपया नदी का तो कोई बिन्दु ही नहीं मिलता। आपया  
के नाम से केवल एक पुण्ड्रा तीर्थ कुक्षोत्तरे विद्वानिधायन के दक्षिण में है, परन्तु कभी यह  
तीर्थ नदी रहा होगा। ऐसा स्थान पर जाकर देखने से हाठ नहीं होता। परन्तु धारकाओं,  
विद्वानों और पुराणों में आपया नदी को कुक्षोत्तरे में बलिष्ठ किया है। आपया नदी के विषय  
में मेरी यह कोश है कि बिमर इसको सरस्वती के समीप ठकनी याचा नदी जो वावैस्वर  
के पास होकर बहती थी मानता है। पिछले अथनी पुस्तक धार्मिकीया। में आपया को कुक्षोत्तरे  
की नदी मानता है। महाभारत में इसको एक प्रसिद्ध नदी लिखा है। पद्य पुण्ड्रा २६।६३  
में यह मानुष तीर्थ से पूर्व एक कोस पर है और बर्षाकाल की नदी है जो अस्मिपुर के पास  
महेस्वरदेव के समीप है। ब्रह्म० २७।२० में इसको हिमाचल से निकली हुई नदी माना है।  
वामन पुण्ड्रा ३।७७ इसको कुक्षोत्तरे की बर्षा-काल की बहने वाली नदी कहता है ३६।१  
में मानुष तीर्थ से पूर्व एक कोस पर माना है। नारदीय पुण्ड्रा उत्तर ६३/३८ में इसको  
महागदी और मानुष तीर्थ से पूर्व एक कोस पर कुक्षोत्तरे में माना है। वायु पुण्ड्रा ७०  
१७।२ में इसको पवित्र नदी लिखा है। पद्य पुण्ड्रा धारि २७।६४ में मानुष तीर्थ से पूर्व  
एक कोस अस्मिपुर नामक स्थान में महेस्वरदेव के समीप माना है। महाभारत धारम्पर्व  
८।१।६७ में मानुष तीर्थ से पूर्व एक कोस पर माना है। सु० पूना ८।१।३३ में भी ऐसा ही  
पाठ है। न० १६।३३ में आपया ऐसा पाठ है। १६।१०२ में आपया पाठ है और यहाँ पर  
महेस्वर देव का वर्णन है। विष्णु बर्षोत्तर में २।२३।१८३ में इसको नदी माना है।

सम्यक् कृतपापा ये पञ्चपातक दूषिताः ।

अस्मिन्तीर्थे मया स्नाता मुक्ता यान्तु परां गतिम् ॥<sup>१</sup>

बिस्मने कहीं घोर पाप किए हैं और पञ्च पातों से भी दूषित हैं, इस तीर्थ में स्नान करके वह मुक्त हो जाता है और परमगति उसे मिलती है ।

ग्रहक्षत्र ताराणां नासेन पतनाद्भयम् ।

कुक्षत्रमृतानां च पतनं नव विद्यते ॥<sup>२</sup>

समय बीत जाने पर ग्रह मराने तारों का भी पतन हो जाता है परन्तु कुक्षेत्र में मरने वाले मनुष्य का कभी पतन नहीं होता ।

केदारो च महाक्षेत्रे प्रयागे च विशेषतः ।

कुक्षेत्रे च यः प्राणान् त्यजेत् यातिस निर्बृष्टिम् ॥<sup>३</sup>

केदार, महाक्षेत्र, प्रयाग और कुक्षेत्र में जो प्राण त्यागता है वह मोक्ष को प्राप्त होता है ।

इह ये पुरुषा केचिन्मरिष्यन्ति शतश्रतो ।

यास्यन्ति सुकृतां लोकान्पुनरावृत्तिं पुंसिमान् ॥

मानव ये निराहारा वेह त्यक्तमन्य ।

युधिवा निहता सम्यगपि वै तीर्थेण नृप ॥

ते स्वर्गं भावो राजेन्द्र भविष्यन्ति न संशय ।

शिवं महापुण्यमिदं त्रिबीकसां सु संमतं सर्वं गुरौ समागतम् ।

मत्तश्च सर्वेऽग्रहता नृपा रणे यास्यन्ति पुण्यां गतिमक्षयां सदा ॥<sup>४</sup>

महामारण युद्ध के पश्चात् देवपि लोग के मनुग्रह से विष्य दृष्टि पाए हुए बूढ़ देवी महादेव बुधिशिर ने प्रजापति राजा पृथराष्ट्र से कहा कि 'हे पिता इस बर्दीब कुक्षेत्र में बिना बीरों ने सम्हाल के साथ युद्ध में सहस्रों यन्त्रों को मारा उन सत्य पराक्रम उत्तम पुरुषों को देवराज इन्द्र के समान शोक प्राप्त हुए हैं । बिनाके मन में युद्ध देखकर सम्हाल नहीं हुआ और उनके मन में केवल यह विचार था कि युद्ध करना येरा कर्तव्य है क्योंकि मैं क्षत्रिय हूँ वह भीरु जो यहाँ मारे गए उनका समागम गम्भीरों के साथ हुआ । जो धारुमण करते हुए संशय से विमुक्त युद्ध में मारे गये उनको यह शोक मिला । जिन्होंने यन्त्रों के सामने लड़े होकर देव सत्त्वों से प्राप्त किए उनको ब्रह्मशोक प्राप्त हुआ । इसमें मुझे कोई शंका नहीं है । हे राजन् ! इस वर्ष युद्ध में बिना लोगों की किसी भी कारण मृत्यु हुई वह अक्षर कृष्ण में लगे हैं ।

बाह्यलों और उपनिषदों में कुक्षेत्र का बार-बार जल्लेख है । यह देव पूजा की पुण्य भूमि और घारे प्राणियों का उत्पत्ति स्थान है ।

“मदनुदेवानां देव यजन तपनु स्वैर्पा भूतानां ब्रह्मा सवनम्”

इसलिए अनेक विद्वानों ने कुक्षेत्र की प्राणों और प्राणियों का प्रायि उत्पत्ति स्थान कहा है । कुक्षेत्र की उत्पत्ती नहीं के पाठ ही धार्मिक धर्म निवास था । इस विद्वान्त के

(१) शान्त प्रणव मन्त्र ४१ श्लोक १६ । (२) शान्त प्रणव मन्त्र ४४ श्लोक १६ । (३) शिव प्रणव । (४) महाभारत ।

विद्वत् कोई अलक्षणीय युक्ति भी नहीं है। वि० बी० हाल्डेन के मत से भी मानवोत्पत्ति का स्थान यही है।

## तीर्थराज कुरुक्षेत्र

तीर्थ शब्द तु वातु से बना है। जिस पवित्र जल, महात्मा ऋषि धर्मवा पुण्यभूमि के सेवन से सब मानव सुख शान्ति धर्मना मोक्ष प्राप्त कर सकें उन्हीं को शास्त्रकार तीर्थ कहते हैं।

‘निपानागमयोस्तीर्थंमृषिजुष्टजने गुरो’<sup>१</sup>

तीर्थ शब्द वेदादि पवित्र सत् शास्त्र जलास्रम, ऋषि सेवित पुण्य जलाशय धीर पुत्र का बोधक है।

“तीर्थं शास्त्राध्वरक्षेत्रोपायोपाध्याय मन्त्रिणु”<sup>२</sup>

तीर्थ धर्मना वेद शास्त्र धर्मवेदादि विधिपूर्वक क्रिप् एए मन्त्रों का स्थान पुण्यक्षेत्र धर्मतार, सिद्ध ऋषि धीर पवित्र जल।

तीर्थं शास्त्राध्वरक्षेत्रोपाय ।

धर्मतारपिजुष्टान्मुपायोपाध्याय मन्त्रिणु ॥<sup>३</sup>

पुण्यों में तीर्थ की परिभाषा इस प्रकार है।

“न तीर्थतां जलस्याहुनस्यस्य वनस्य वा।

धर्म्यासित महद्भिर्मयत्ततीर्थंविबिदुषु वा ॥<sup>४</sup>

धाधारण्य जल स्थल व वन को तीर्थ नहीं कहते बल्कि वहाँ स्थान तीर्थ कहनाथा है जहाँ सेवा धीर तपादि से महीय धीर वेदादि ने सिद्धि प्राप्त की है।

तीर्थ तीन प्रकार के होते हैं—

### स्थावर तीर्थ

नदी ताम, क्षेत्र वन पर्वत इत्यादि स्थान जिनमें महात्माधर्मों ऋषियों मुनियों ने समुद्धान धीर तपस्या से ऐसा वातावरण बनाया है कि जिसमें भ्रष्टा भक्ति, प्रेम से स्वास मेने रहन-सहन करने स्थान धान तप जप करने से मनुष्य की मारमा पवित्र होती है।

### मानस तीर्थ

सत्यं तीर्थं क्षमा तीर्थं तीर्थमिन्द्रियधनिग्रहं ।

सवमूत दया तीर्थं तीर्थमार्जवमेव च ॥

दानं तीर्थं दमस्तीर्थं सन्तोषस्तीर्थमुच्यते ।

ब्रह्मचर्यं परं तीर्थं तीर्थं च प्रियवादिता ॥

(१) अमर कोष तृतीय काण्ड श्लोक २२ । (२) शिवर कोष—शक्तिम् = । (३) मेदिनी २० । (४) शर्म पुराण ।

ज्ञान तीर्थं घृतिस्तीर्थं तपस्तीर्थमुदाहृतम् ।  
तीर्थानामपि च तीर्थं विद्युद्धर्ममसं परा ॥<sup>१</sup>

सत्य दामा इन्द्रिय निग्रह, प्राणीभाव पर दया श्रुतज्ञान दान मनोनिग्रह संतोष ब्रह्मचर्य प्रिय भाषण, विवेक, भृति धीर तपस्या इन सबसे बड़ी मन की पुष्टि है। तीर्थों के द्वारा इन उक्तम धर्म यन्त्र गुणों को मन धीर जीवन में सन्तान करने का प्रवर्धन मिलता है।

निगृहीतेन्द्रियधामो यत्रैव च वसेन्नरः ।  
तत्र तस्य कुक्षेत्रं नैमिषं पुष्कराणि च ॥  
यगां द्वारं च केदारं सन्निहृत्य तथैव च ।  
एतानि सर्वं तीर्थानि कृत्वा पापं प्रमुच्यते ॥<sup>२</sup>

इन्द्रियों को बाध में करने वाले पुष्कराणा को कुक्षेत्रं नैमिषारण्य, पुष्कर इन्द्रिय केशर व सन्निहृत्य सब तीर्थ धर में ही मिश्रकर उसके पाप हर लेते हैं।

सत्यं तीर्थं दया तीर्थ तीर्थमिन्द्रिय निग्रहः ।  
वर्णधर्मोणां प्रेहेपि तीर्थं धर्ममुदाहृतम् ॥<sup>३</sup>

बर्ण धर्मियों के लिए सत्य दया इन्द्रिय निग्रहादि तपस्वीतीर्थ धर में ही निवास करते हैं।

आत्मा तीर्थमिति क्वात्तं सेवितं ब्रह्मावाधिभिः ।  
गमं धुद्धिकरं पुंसां नित्यं तस्नाम माचरेत् ॥<sup>४</sup>

आत्मा कर्मो विख्यात तीर्थं ब्रह्माधिर्मो से सेवित है। जिसमें नित्य स्नान करने से मन पुष्ट हो जाता है।

आत्मा नदी संयमपुण्यतीर्था उत्थोदका शीत समाधिमुक्ता ।  
तस्मां स्नात्वा पुण्यकर्मं पुनाति न कारिणा सुखयति चान्तरारमा ॥  
एतत् प्रधानं पुरुषस्य कर्म, यदात्मसंबोधं मुक्ते प्रविष्टम् ।  
ज्ञेयं तदैव प्रसन्दति सन्तस्वत्प्राप्य देही बिज हासि कामाम् ॥  
नैवाहर्षं प्राह्मणस्यास्ति वित्तं यं धीकता समता उत्ता च ।  
शीतं स्थितं दण्डविधानमार्जवम् तत्तत्तत्त एवोपरमं क्रियात्तु ॥<sup>५</sup>

आत्मा नदी है धीर संयम पुण्य तीर्थं जनमें शीत समाधिमुक्त सत्यस्वी भक्त प्रस्तुत है। इस जल में स्नान करने वाले संयमारमा पुरुष प्रकार में चन्द्रमा के समान विराजमान होता है। धारम ज्ञान स्वी मुक्त में प्रविष्ट होता ही पुरुष का प्रधान कर्म है। संयमी को ज्ञय करते हैं जिसके ज्ञान को प्राप्त होकर मनुष्य सब कामनाओं को त्याग देता है। ब्राह्मण के लिए एकटा समता धीर सत्यता ही परम धर्म है शीत में स्थित होता दान मार्जन उद्यम विधान धीर दण्डोप ही उसकी परम क्रिया है।

(१) स्कन्द पुराण का० ३ पर्व ४४२ २५१ । (२) व्यास स्मृति म० ४ श्लोक ११ २५ । (३) स्कन्द पुराण । (४) स्कन्द पुराण । (५) स्कन्द पुराण म० ४२ श्लोक २३, २६, २७ ।

विप्राणां चरणौ तीर्थं गवां पृष्ठं तथा मत्तम् ।  
 एते यत्र हि तिष्ठन्ति तच्च तीर्थमुदाहृतम् ॥  
 वासानां च शिरस्तीर्थं स्वं तीर्थं चक्षुरुन्वयते ।  
 तथैव दक्षिणं कणस्तीर्थं स्वं परिगम्यते ॥  
 सत्यं वाक्यं तु वाक् तीर्थं पुराणपठनं तथा ।  
 देवलिङ्गधरं चित्तं तीर्थमित्युच्यते सुभं ॥  
 प्रसन्नचित्तविरहितं मानसं तीर्थमुच्यते ।  
 दातॄणां च करो तीर्थं देवपूजाकरो तथा ॥  
 घन्तस्तीर्थं भूतशुद्ध्या प्राणायामाच्च नासिके ।  
 मन्त्रित्वासासनं तीर्थं पैतृकी वसतिस्तथा ॥  
 सत्रापाठं वातिकरश्च माघो वैशाख एव च ।  
 तीर्थान्युक्तानि मासा वै चत्वारोऽभीपुदायकाः ॥  
 पुराणपठनं यत्र यत्र पद्मवनानि च ।  
 तच्च तीर्थं समारख्यातं मुरुदेवगृहं तथा ॥  
 घासग्रामसिला यत्र तीर्थं तत् क्रोशयुग्मकम् ॥<sup>१</sup>

वाङ्मयों के दोनों चरण तीर्थ हैं तथा गायों की पीठ तीर्थ मानी गयी है । जहाँ ये रहते हैं उधे भी तीर्थ कहा गया है । बालकों का शिर तीर्थ होता है तथा घपनी माँच तीर्थ होती है । घपना बाहिना कान भी तीर्थ माना गया है । सत्य बचन बाली का तीर्थ है, पुराणों का पठन भी तीर्थ है । देवता का ध्यान करने वाला चित्त भी चिदानों द्वारा तीर्थ कहा जाता है । प्रसन्नचित्त से मुक्त मन भी तीर्थ ही है । दाताओं के दोनों हाथ भी तीर्थ हैं । तथा देव पूजा करने वाले दोनों हाथ भी तीर्थ होते हैं । भूत शुद्धि से प्रसन्न करण तीर्थ एवं हो जाता है और प्राणायाम से नासिका तीर्थ बन जाती है । प्रथिमन्त्रित घासन भी तीर्थ ही होता है तथा पिता पितामहों का घर भी तीर्थ है । महीनों में घापाड़ वातिक माघ और वैशाख चार महीने तीर्थ हैं और घमीष्ट फल को देने वाले हैं । जहाँ पुराणों का पठन घपना कमल बन हो वह स्वान तथा मुरुह और देवासय भी तीर्थ कहे गए हैं । भयनाद् घासग्राम जहाँ बिजय रहे हैं जहाँ दो कोश तक तीर्थ होता है ।

### जगत्तीर्थ

बहु महात्मा और सन्त जो तीर्थ स्वानों पर बास करते हैं । बर्मेराज मुचिष्ठिर ने महात्मा बिदुर से कहा था—

भवद् विधा भागवतास्तीर्थो भूता स्वयं विभो ।  
 तीर्थो कुर्वन्ति तीर्थानि स्वान्तं स्पेन गदा मृता ॥  
 साधवो यासिनं दान्ता प्रह्वानिष्ठा सोक पावता ।  
 हरन्त्यर्थं तेज्जं सङ्गातेष्व्यासतेऽपमिद्ध हरि ॥<sup>१</sup>

(१) गुरुवर्षे सुखेन ॥ १५५-६, १५६॥१५७॥ (२) महात्मा ॥

ऐसे साधु जिन्होंने इस लोक और परलोक की सारी बाधनाओं को त्याग दिया है जो शान्त चित्त, ब्रह्मनिष्ठ और स्वाभाविकता से ही लोको को पवित्र करते रहते हैं। वह अपने उत्सव से ही बूझते हैं पापों को जो देते हैं क्योंकि उनके भीतर धयनायक भयवान् सदा निवास करते हैं यत् ननुप्य यदि धयना जीवन उपलब्ध करना चाहता है तो उसके लिए तीर्थ यात्रा प्रति आवश्यक है।

यह संसार और द्रष्ट संसार में बसने वाले सब नरवर हैं।

महिनी दसगठ जसवसु तरलं  
यद्वल्कीवनमतिशय अपमम् ।  
क्षणमपि सम्जम संगति रेका,  
भवति भवार्णव तरणे नौका ॥

मनुष्य जीवन पवम् पत्र पर ठहरे हुए जस की भाँति ज्वलत है इसका कोई भरोसा नहीं कि कब समाप्त हो जाए। इसी वरि मनुष्य क्षण भर भी महात्माओं का उत्सव कर ले तो वह क्षण मात्र का उत्सव ही असार संसार सागर से ठहरे के लिए नौका का फायदा दे जाता है।

ऋषीणां परमं गुह्यमिदं भरतसप्तम् ।  
तीर्थाभिगमन पुष्यं यज्ञैरपि विशिष्यते ॥<sup>१</sup>

हे भरत भूष भीष्य । ऋषियों का यह परम गोपनीय विद्याप्त है कि नियम से तीर्थों में जाना प्रति पुष्यदायक है और यज्ञों से भी बढ़कर है।

विद्वानों के मतानुसार—

मेधाजननमग्र यं ये तीर्थवदानु कीर्तनु कीर्तनम् ।  
अपुत्रो जभते पुत्रम धनोभनमामुयात् ॥  
महीं विजयते राजा वैश्यो धनमाप्नुयात् ।  
शूद्रो यातीप्सितान् कामान् ब्राह्मणं पारम पठन् ॥  
यश्चेदं शृणुयात् नित्यं तीर्थं पुष्यं सदा शुभि-  
वाति स्मरणत्वा माप्नोति नाक पृष्ठे अ मोदते ॥

तीर्थों का कीर्तन करना तथा सुनना बुद्धि को बढ़ाता है। उल्लसि पय पर अग्रसर करता है। पुत्रहीन पुत्र को और बगहीन धन को पाता है तथा शूद्र भनोकामनाओं की प्राप्ति करता है। ब्राह्मण तो अग्रसर से पार ही हो जाता है, क्योंकि वह ब्रह्मज्ञान को प्राप्त हो जाता है और जो क्षीय तीर्थों के महत्त्व को मन्दा अहित सुनते हैं उनका अन्तःपत्मा ऐसा पवित्र हो जाता है कि उनको पूर्वजन्म का ज्ञान हो जाता है और वह स्वर्ग का सुख पाते हैं।

महाभारत में भीष्य भी ने कहा है—

यथा शरीरस्य वेदाः के चिन्मेध्यतमा स्मृताः ।  
तथा पृथिव्याम वेदाः केचित् पुष्यारभनः स्मृताः ॥

(१) महाभारत का अंश अज्ञान २९ श्लोक १७ ।

जैसे घीर के कतिपय भाग पवित्र माने गए हैं, उसी प्रकार पृथ्वी के कतिपय भाग तीर्थादि बहुत पवित्र माने गए हैं।

प्रभावाद्भ्रुतात् भूमे सन्निसस्य च तेजस ।  
परिग्रहान्मुनीनाञ्च तीर्थानां पुष्यता स्मृता ॥<sup>१</sup>

भूमि, जल घीर तेज के प्रकृत प्रभाव के कारण तथा मुनियों, महर्षियों सभी घीर महारमाओं के निरन्तर निवास के कारण तीर्थों में पवित्रता होती है।

तीर्थ यात्रा का विद्वैतपण इस पद में बहुत सुन्दर रूप से दिया गया है।

यस्य हृत्सो च पादौ च मनसश्चैव सुसयतम् ।  
विद्या तपश्च क्रीडित्वा स तीर्थफलमदनुते ॥  
प्रतिग्रहादुपावृत्तः सन्तुष्टो येन केनचित् ।  
ग्रहकारमिच्छतश्च स तीर्थफलमदनुते ॥  
यदस्फुटो निरारम्भो सध्वा ह्यारो जितेन्द्रिय ।  
विमुक्तः सर्वं पापेभ्य स तीर्थफलमदनुते ॥  
यच्छोधनश्च यजेन्द्र सत्य घोषो हृदयत ।  
धारमोपमश्च भूतेषु स तीर्थफलमदनुते ॥<sup>२</sup>

जिसके हाथ पैर और मन अपने बंध में हों तथा जो विद्या तप और क्रीडा से सम्पन्न हो, वही तीर्थ सेवन का फल पाता है। जो प्रतिग्रह से दूर रहे तथा जो कुछ अपने पास हो उसी में संतुष्ट रहे और जिसमें ग्रहकार का प्रभाव हो वही तीर्थ का फल पाता है। जो ब्रह्मादि शेषों से दूर, कठम्य के ग्रहकार से दूर्य अस्नाहादी और जितेन्द्रिय हो वह सर्व पापों से विमुक्त हो तीर्थ के नास्तिक फल का भागी होता है। यजन्। जिसमें शोक न हो जो उत्सवारी और हृत्ता पूर्वक व्रत का पालन करने वाला हो तथा जो सब प्राणियों का प्रति धारमनाम रखता हो वही तीर्थ के फल का भागी होता है।

अथ यत्नान् पापात्मा नास्तिकोऽभिद्वन्द्वन् यद्यथा ।

हेतुनिष्ठश्च पर्यजेते न तीर्थफल भागिनः ॥

जो यत्नात्न नहीं पापी नास्तिक और संकाएँ उठाने वाला है, जो निष्ठावान नहीं है ऐसे तीर्थ फल नहीं पाते। क्योंकि जब हृदय निर्मल होगा तब ही व्रत पर सत्संग का प्रभाव हो सकता है। ज्ञान के बिना संसार और जीवन ग्रहकार है और यच्छ पुण्यों के पास जाए बिना ज्ञान प्राप्त नहीं होता।

उत्तिष्ठ आग्रत प्राप्य वरान्मि बोधत् । सुरस्य धारा

निशितां दुरत्यया, दुर्गं पथस्त्वस्य ययो वदन्ति ॥<sup>३</sup>

उठो जागो भेष्ट पुण्यों के पास आकर ज्ञान प्राप्त करो। ज्ञानी पुरणों में बसाया है कि सर्वव्याप पर जलना बीजा ही कठिन है बीजा धुरे ही पार पर जलना कठिन है।

यह धारमनाम नहीं कि जो भी तीर्थों पर जाएगा उसे ही धारम पुष्य और धारमनाम



मिलेगा। यदि ऐसा हो जाए तो तीर्थों पर जाने वाले सार्यों सीधे महात्मा बन गए होते बन्कि—

यस्मिन्नाङ्ग न सी दुष्टे हस्तो पादो च संयतो ।  
 असोम्युपो ब्रह्मचारी स तीर्थफलमश्नुते ॥  
 यस्य तीर्थेषु ये देवा यस्य तीर्थेषु ये द्विजा ।  
 पूजनीयाः प्रयत्नेन स तीर्थफलमश्नुते ॥<sup>१</sup>

जिसकी बाणी और मन शुद्ध है। हाथ और पांव संयत हैं सोमी नहीं है जो ब्रह्मचारी है और जो यत्न से तीर्थ की पूजा करता है उसे ही तीर्थफल मिलता है।

तीर्थानुपसरम्भरि श्रद्धधानो जितेन्द्रियः ।  
 कृत पापश्च क्षुभ्येत किं पुनः क्षुभः कर्मकृत् ॥  
 तिर्यग्योनिं न गच्छेत् कुदेशेन च जायते ।  
 स्वर्गो भवति वै बिप्रो मोक्षो पाप च विन्दति ॥<sup>२</sup>

श्रद्धा और भक्ति से जितेन्द्रिय रहकर तीर्थ यात्रा करने वाला चाहे वह पापी भी क्यों न हो भिष्याप हो जाता है और जो पहले से ही शुभकर्म करता है उसकी तो बात ही क्या है। तीर्थ सेभी पशु, पक्षी आदि तिर्यग्योनि में जन्म नहीं लेते। कुदेश में उड़का जन्म नहीं होता और वह स्वर्ग जाने वाला ब्राह्मण हो जाता है। वह मोक्ष के साधनों ब्रह्मज्ञानादि का भी लाभ करता है।

येनकादद्य सङ्ख्यायानि यस्मिन्नामीन्द्रियाणि वै ।  
 सतीर्थफलमाप्नोति नरो न बलेश्चाग्भवेत् ॥  
 अनुषोष्य चिरान्नाणि तीर्थायनभिगम्य च ।  
 भद्रत्वा काञ्चनं गार्धभ दरिद्रो माभिजायेत् ॥  
 मातृवत्पर द्वाराक्ष पर ब्रह्म्याणि शोष्ठवत् ।  
 धारमवस्थव भूतानि स तीर्थफलमश्नुते ॥  
 सर्वपापेषु बहूनि सर्वाथम निवासिनाम् ।  
 तीर्थं तु फलवन्नेयं मात्र काम्या विचारण ॥<sup>३</sup>

जिसके बस में प्यारह इन्द्रियां हैं वह तीर्थ फल पाता है। तीर्थ स्नान करने से मनुष्य धावा गमन के पक्ष से मुक्त हो जाता है इसमें कोई शक्येह नहीं। जो तीन रात्रियों तक निर्बलवत् नहीं करता तीर्थयात्रा नहीं करता स्वर्ण और गाय का दान नहीं करता वह मनुष्य भ्रमण में बहिष्त बनेगा। जो बुराई की स्त्री को माता बुराई के बन्ध को मिट्टी और सबको अपने तुल्य समझता है उसे तीर्थ फल मिलेगा। सब बुराई वाले सब प्राथमों के सोपों को तीर्थ फल मिलता है।

अशब्दना पाप्मानाश्च नास्तिकाः स्थित संश्रयाः ।  
 हेतु दुष्टाश्च पञ्चैतेनो तीर्थफलमश्नुते ॥<sup>४</sup>

जो शब्दा हीन पापी और नास्तिक हैं जो इस संसार ही को सब कुछ मानता है और पर

सोक पर विरहास नहीं करता जो तर्क और चर्चन को रंजार रहता है उसे तीव्रता नहीं मिलता ।

पुराणोप्ययवादस्वं ये ब्रह्मन्ति मराधमा ।  
 संरक्षितानि पुण्यानि तद्गतानि भवन्ति वै ॥१

जो पुराणों में लिखे जो धर्मबाह्य और अतिगोप्य कहते हैं उन नीच व्यक्तियों का संरक्षित पुण्य भी सूखी प्रशंसा के समान नष्ट हो जाता है ।

परन्तु तीर्थ यात्रा प्रत्येक के बच की बात नहीं वास्तव में माण्य से ही तीर्थ यात्रा होती है ।

नाशती ना कृतात्मा न ना शुचिर्नैवतस्वरः ।  
 स्नाति तीर्थेषु कौरभ्य न च पापमठिनरः ॥२

हे कुर मर्क ! जिसका सक्त्वं मुझ नहीं जो शिरोन्मीय नहीं अपवित्र और दुष्ट हृदय वाला है वह न तो तीर्थों में स्नान करता है और न ही उसे तीर्थ मिलते हैं ।

नृणां पाप कृतां तीर्थेष्वेपि दामनं भवेत् ।  
 अपूर्वं पुण्य प्राप्तिदध भवेच्छुद्धारमानां नृणाम् ॥३

पानों के पाप तीर्थ दामन कर देते हैं और जो मुझ हृदय और निष्पाप है उसे तीर्थ पर वाकर अपूर्व फल मिलता है ।

## तीर्थ स्नान फल और तीर्थ फल

तीर्थ स्नान फल और तीर्थ फल में बड़ा अंतर है । तीर्थ फल और बात है और तीर्थ स्नान फल और बात है । यह कोई दाबस्पक नहीं कि तीर्थ पर वाकर प्रत्येक प्राणी को तीर्थ फल मिल जाए । यदि कोई तीर्थ पर जाता मासमा से नहीं जाता बल्कि सैर या मुन्दर हृदय देखने जाता है तो तीर्थों में स्नान करने पर उसे केवल स्नान फल ही मिलेगा उस तीर्थ फल नहीं मिलेगा ।

कार्यान्तरेण यो गत्वा स्नान तीर्थे समाचरेत् ।  
 तीर्थे यात्रा फल तस्यनास्ति स्नान फलं भवेत् ॥  
 तीर्थानुगमन पर्या तप परमि होष्यते ।  
 तदेव कृत्वा यानेन स्नान मात्र फलं भवेत् ॥  
 तीर्थानुगमन कृत्वा मिलाभारो जितेन्द्रिय ।  
 अपूर्व्या यत्र पूजयन्ते पूज्य पूत्राभ्यति कमान् ॥  
 तत्र स्थाने भयोत्पत्तिर्दुर्मिषम् मरणं भयम् ।  
 प्राप्नुवन्ति महादेवि तीर्थे दध गुणं फलम् ॥

स्वयं भूते महातीर्थे प्रमाते च महत्तरे ।  
 तस्मिंस्तीर्थे प्रति गृह्य कृतं एव प्रतिग्रहः ॥  
 प्रतिग्रहं निवृत्तस्य मामा दशगुणी भवेत् ।  
 तेन दत्तानि दानानि यज्ञैर्देवा सुतपिताः ॥  
 येन क्षेम समासाद्यनिवृत्तिं परमा कृता ।  
 यस्तु सौख्याद्भिन्नं क्षेत्रे प्रतिग्रहरुचिभवेत् ॥<sup>१</sup>

जो मनुष्य किसी धीर कार्य जैसे व्यापार राज्य प्रबन्ध अभियोग के कारण तीर्थ पर जाता है धीर विचार करता है कि जसो स्नान करके पुण्य भी प्राप्त करलें तो उसे तीर्थ स्नान फल तो मिलता है परन्तु तीर्थ फल नहीं मिलता । तीर्थों पर पैरस बाधा करनी चाहिए, यदि कोई धन के बर्ष में या कष्ट के भय से यात्री भोजन या किसी घण्टे सवारी पर बैठकर तीर्थ यात्रा करता है तो उसे भी केवल स्नान फल मिलेगा उसे तीर्थ फल नहीं मिलेगा अतः मिठाचरण करके इन्द्रियों को बस में रखते हुए तीर्थ यात्रा करनी चाहिए । जिस स्नान पर घण्टे पाखण्डी मीन धीर भास्तिर्को भी तो पूजा होती है धीर बैठता बुद्धि चिह्न धीर ईश्वर का निरादर होता है, वहाँ घण्टे बुद्धि भय धीर गुरु का प्रकोप होता है । हे महादेवी ! तीर्थों में स्नान धान धीर ब्रह्म करने से बस मुखा फल मिलता है । परन्तु जो तीर्थों पर जाकर भी संतोष करता है वह सब कुछ वा सैता है । जो तीर्थ पर जाकर धान नहीं लेता उसकी तीर्थ यात्रा सब बुला फल देती है ।

## तीर्थ यात्रा पैदल क्यों ?

पैरस यात्रा करने पर सास्त्रकारों ने इसलिये विशेष जोर दिया क्योंकि तीर्थ यात्रा विचार सोचने के लिए की जाती है । मोटर पाड़ी हवाई जहाज जोड़ा पालकी इत्यादि सवारी के साधन समय साधक तो हैं, इनमें यात्रा करने वाले का समय तो बोजा लनेवा परन्तु यह साधन विचार सोचक नहीं हैं । वहाँ विचार हुआ है । वहाँ साधन का साधन चाहिए । अज्ञेय साहित्यकार का यह कथन बहुत सुन्दर है कि पर यात्रा ही यात्रा का सर्वोत्तम प्रकार है<sup>१</sup> । धानुबंद सास्त्र में पर यात्रा की महिमा भरी पड़ी है । भारोम्य सास्त्र में पर यात्रा की प्रशंसा भरी पड़ी है । अनुमन सास्त्र में पर यात्रा की प्रशंसा भरी पड़ी है अतः प्रकृति का धानन्द लूटना है तो पर यात्रा कीजिए । स्वास्थ्य ठीक रहना है तो पर यात्रा कीजिए । ज्ञान प्राप्त करना है तो पर यात्रा कीजिए । ईश की धरती तस्वीर देखनी है तो पर यात्रा कीजिए । बनता के छात्र उमरस होगा है तो परयात्रा कीजिए । प्राचीन युग में मोटर, पाड़ी इत्यादि तो नहीं थी परन्तु अट्ट, बोड़े रवादि थे । सोप उनका प्रयोग भी करते थे धीर रात भर में ही ही ही मीन तक निकल जाते थे परन्तु ध्यान योग्य धीर विचार करने की बात है कि हमारे सामु संस्थावी बर्तमानक, तीर्थ यात्री धर्म बुद्ध, बुद्ध

(१) दुर्ग पुण्य । 1 He travels best, who travels on foot.

प्रसक्तों श्रुतियों और महात्माओं संकटाचार्य महावीर, बुद्ध कबीर रामानुज शंकर  
महाप्रभु नामदेव और जगन्क जैसे सन्त समस्त भारत में बूझे और पैरुत ही बूझे। यदि वह  
चाहते तो घोड़े पर भी भूम सकते थे परन्तु उन्होंने स्वच्छि साधनों का सहाय नहीं लिया  
क्योंकि वह बिचारों का घोषण करता चाहते थे और बिचार घोषणार्थ सर्वोत्तम साधन पैरुस  
बमना ही है।

दूर जाने की आवश्यकता नहीं यही देखिए कि जब बैर पर सन् १९४६ में हिन्दु  
मुस्समान वर्गों के संकट के बादस छाए तो महात्मा गांधीजी ने नौघाञ्जामी और बिहार प्रान्त  
का पैरुस और वह भी इस बृदाबस्या में भ्रमण किया और इससे भी पहले १९३० ईसवी  
में गांधीजी ने साबरमती के प्राथम से निकल कर डाब्डी यात्रा पैरुस ही किया या और यात्रा  
तो मत प्यारह बयों से बैर का सचते बड़ा संघ बिनाभा थावे, सब यात्रा के साधन होते हुए  
भी समस्त बैर में हजारों भीस पैरुस भूम भूमकर मानबता का सन्देश दे रहे हैं। फिर सबसे  
बड़ी एक बात और भी है कि पर यात्रा से बैर और उसमें बसने वाले लोगों का सम्पयन  
प्रच्छ होता है। उनकी बिचार बाय रीति रिवाज भापा और रङ्ग-सङ्ग सब को समीप  
से देखने और समझने का अवसर मिसता है। इसलिये शास्त्रि पूर्वक बिचार करने से पता  
चनेया कि पर यात्रा बिना बाय नहीं।

नरयाने चास्त्रयाने हयादि सहितो रय ।

तीर्थं यात्रा स्व सक्तानां यान दोपोनुणां न हि ॥<sup>१</sup>

यदि कोई प्रसक्त और प्रस्वस्व व्यक्ति पीठ, पामकी रप और घोड़े पर बड़कर  
तीर्थयात्रा करे तो कोई बोप नहीं। एसे समुप्य जो भडा होने पर भी किसी कारख  
स्वय तीर्थ यात्रा नहीं कर सकते हों और अन्य व्यक्ति उनके स्वान पर यात्रा करें तो कोई  
बोप नहीं।

देवानाञ्च कुरुणाम् न माता पित्रोश्च कामतः ।

पुण्यद समवाप्नोति तवेवाष्ट गुण फसम् ॥

पितर मातरम् तीर्थं भातरं सुहृवं गुरुम् ।

यमुद्दिश्य निमज्जेत तत्रसां स समेतु स ॥

समते पोडसां स सपराथ मनु गच्छति ।

कुसैर्यं प्रतिमां कुरवा तीर्थं बारिणि मज्जेयत् ॥

यमुद्दिश्य महादेवि चाप्मांसं समेत स ॥<sup>२</sup>

जो अपने पुण्य में से बैरता गुरु, माता-पिता को भाग देता है उसका पुण्य पाठ गुणा हो  
जाता है। जो माता-पिता भावा मित्र गुरु और आचार्य के लिए तीर्थस्नान करे तो उसे  
पुण्य का बयां मिलाता है। जो दूसरों के लिए तीर्थ यात्रा करता है उसे सोमहवां दौरा  
यात्रा पुण्य में से मिसता है। यदि कोई अपने किसी मित्र या पारमज के नाम से जो तीर्थ  
पर न हो तीर्थ में स्नान करता चाहे तो अपने उस मित्र की जिसके नाम से स्नान करना  
है, गुरु की मूर्ति बनाकर उसे स्नान करवाए, इस प्रकार जहाँ उस व्यक्ति को पुण्य लाभ

### कुक्षेत्र-सूर्यग्रहण चन्द्रग्रहण में दान

यद्यहापि यस्तत्र कुक्षेत्रे रविग्रहे ।  
 तप्तदेव सदान्प्रोक्षि नरो जामनि जामनि ।<sup>१</sup>  
 रामहृषे कुक्षेत्रे राहुग्रस्ते विवस्वति ।  
 यत्फलं स्वर्णं दानेन तज्जानोदे दिने दिने ॥  
 कुक्षेत्रे रामतीर्थे स्वर्णं दत्त्वा स्व पात्सित ।  
 सूर्यो परागे विधिबत्स नरो मुक्ति भाग्भवेत् ॥<sup>२</sup>

सूर्य ग्रहण के समय कुक्षेत्र रामहृष तीर्थ पर स्वर्ण दान करने से प्रतिदिन ज्ञान वृद्धि होती है । कुक्षेत्र में रामतीर्थ पर धरणी धक्ति धनुषार सूर्य ग्रहण के समय विधि पूर्वक स्वर्णदान करने से मनुष्य मोक्ष का भागी होता है ।

सर्वस्य च हि दानस्य सख्या वै प्रोच्यते बुधे<sup>३</sup> ।

चन्द्र सूर्यो परागे तु दान संख्या न विद्यते ॥<sup>४</sup>

द्विजमान ऋषियों ने धर्मपूर्ण दान की संख्या कही है परन्तु चन्द्र और सूर्य ग्रहण के समय तो दान किया जाता है वह क्या वृद्धि को प्राप्त होता है इसकी संख्या धन्य है ।

सूर्यं ग्रहेषुय<sup>५</sup> स्नायाद्दत्त्वा दानं यथा विधि ।

स्वर्णं रजतं वापि ब्राह्मणेभ्यो ददाति य ॥<sup>६</sup>

जो सूर्य ग्रहण पर स्नान करके विधिपूर्वक दान करता है । सुभाष ब्राह्मण को धीरे धीरे गौरी का दान देता है, उसका दान सुफल होता है ।

### कुक्षेत्र और सूर्यग्रहण

बहुत से विद्वानों का मत है कि जब पृथ्वी पर मानव सृष्टि की रचना हुई उस समय धर्मप्रथम कुक्षेत्र में सूर्य स्थान हुए अतः कुक्षेत्र में सूर्य ग्रहण का बड़ा महत्त्व है ।<sup>७</sup>

कुक्षेत्रं महापुण्यं राहु ग्रस्ते दिवाकरे<sup>८</sup>

सूर्य ग्रहण में कुक्षेत्र धरम का महा पुण्य है ।

धमाभास्यां तु सत्रैव राहुग्रस्ते दिवाकरे<sup>९</sup>

रमाभस्या को जब सूर्य ग्रहण हो ।

यदा सूर्यस्यग्रहणं कासेन भविता ववचित् ।

सरस्वत्या तदा स्नात्वा पूता स्वर्गं गमिष्यसि ॥<sup>१०</sup>

सूर्य ग्रहण के समय सरस्वती में स्नान करने वाला स्वर्ग जाता है ।

सन्निहितयां विशेषेण राहुग्रस्ते दिवाकरे<sup>११</sup>

सूर्य ग्रहण पर सन्निहित तीर्थ में स्नान का विशेष महत्त्व है ।

(१) मत्स्यपुराण स्कन्ध १२६ । (२) स्कन्द पुराण चैत्रारण्यक ।

(३) अत्र पुराण । (४) देवा अथर्व । (५) मार्कण्डेय पुराण अ १७ स्कन्ध १७, ८० विद्म पुराण । ५८ । (६) मत्स्य पुराण १११।११ यद्य पुराण स्कन्ध अथर्व ११।११ । (७) महाभारत अम वर्ष ५० ८५ श्लो० ११६ । (८) नामन पुराण अ० १४ स्कन्ध ५ कर्मो अथर्व दान वापि महत्त्वम् अत्र पुराण । (९) सिन्धु ज्योतिष ।

## कुरुक्षेत्र में धाढ़

धाढ़स्य पूजितो देघो गया गगा सरस्वती ।  
कुरुक्षेत्रं प्रयाग च नैमिष पुष्कर तथा ॥<sup>१</sup>

धाढ़ के लिए गया गंगा सरस्वती कुरुक्षेत्र प्रयाग नैमिष और पुष्कर पूजित हैं ।  
पुष्करे चाक्षर्यं धाढ़ जपहोमवर्षासि च ।  
महोदधौ प्रयागे च कादर्यां च कुड् जांगले ॥<sup>२</sup>

पुष्कर तीर्थ में किया हुआ धाढ़ जप होम और तप प्रत्यक्ष करने वाले होते हैं । ऐसे ही महोदधि प्रयाग काशी और कुरुक्षेत्र में भी धाढ़ करने से प्रत्यक्ष फल मिलता है ।  
कासजरे दद्यार्णां यां नैमिष कुरुजांगले ।  
वाराणस्यां नगर्यां वै देयं धाढ़ प्रयत्नत ॥

गरुवा चेतानि य कुर्यात्कसमसममेव च ।  
जप होम तपोध्यान यत्किञ्चित् सुकृणु भवेत् ॥<sup>३</sup>

कालांतर देय दद्यार्णां नरी नैमिषारण्य कुरुक्षेत्रे धीर काशी में प्रयत्न पूर्वक धारण धाढ़ करें । इन तीर्थों में जो स्नान ध्यान जप होम दान भोजनादि ब्राह्मणों को कराता है और समस्त कुरुक्षेत्र में धाढ़ करता है उसका प्रथम फल होता है । पितर फिर धाढ़ का इच्छा नहीं करते क्योंकि वह फिर स्वर्ग में चले जाते हैं ।

पुनः सन्निहित्यां च कुरुक्षेत्रे विरोपत ।  
प्रश्नयेच्च पितृ स्तत्र स पुत्रस्त्व नृणो भवेत् ॥<sup>४</sup>

वाराणस्यां प्रभासे च कुरुक्षेत्रे समत त ।  
सन्निहित्यां विदोरेण सह प्रस्ते दिवा करे ॥<sup>५</sup>

जो कुरुक्षेत्र के सन्निहित तीर्थ में धाढ़ तर्पण मन से करता है वह पुत्र पितृ श्रेष्ठ से उच्छ्रेय हो जाता है । काशी भी प्रभास क्षेत्र कुरुक्षेत्र तथा सन्निहित तीर्थ में दूध ग्रहण के समय विशेष फल है ।

धाढ़ कृत्वा समाप्नोति राजसूय शत मरुः ।  
प्रश्वमेय सहस्रस्य सम्पगिपुस्य यत्कसम् ॥

स्नात्वा एव तदाप्नोति कृत्वा धाढ़ च मानवः ।  
सर्वेभ्य देव लोकेषु कामचारी विराजते ॥<sup>६</sup>

धाढ़ तपण और देवताओं का पूजन करके जो पितरों को समुष्ट करता है वह ही राजसूय शत और हजारों प्रश्वमेय यज्ञ का फल पाता है । इन तीर्थों में स्नान और धाढ़ करने से मनुष्य विद्या में बैठकर सम्पूर्ण देव लोकों के मानव को भोगता है ।

पद्मवर्णो न यामेन किं किराजिासमासिना ।  
गयर्वादिगणाङ्गमेन स बैरुमुत्तजा विना ॥

दिव्यद्वैतादत्रपुस्तेन कामगेन यथासुखम् ।  
धमूतसप्तब यावत् श्रीहरपप्परसां गण ॥

(१) काल पुण्य । (२) धामन पुण्य । (३) काल पुण्य । (४) मिथु कर्कोष्ठ । (५) मिथु कर्कोष्ठ ।

मासि मासि समायान्ति पुष्येन महताग्निता ।  
 सनिहृत्यामुपस्पृश्य राहुप्रस्ते दिवापरे ॥  
 भस्वमेघपातं तेन तत्रष्टं छाश्वत भवेत् ।  
 पृथिव्यां यानि तीर्षानि प्रसरिदाचराणि च ॥  
 नद्यो हृदाम्नाङ्गागाश्च सर्वप्रस्रवणानि च ।  
 उदपानानि वाप्यश्च तीर्षान्यापतनानि च ।  
 नि संशयममावस्यां समेष्यन्ति मराधिप ।  
 मासि-मासि मरण्याद्भ्र संनिहृत्या न संशय ॥  
 तीर्षसनिहृता देव सनिहृत्येति विश्रुता ।  
 तत्र स्नात्वा च पीत्वा च स्वर्गलोके महीपते ॥  
 भ्रमावस्यां तत्रैव राहुप्रस्ते दिवाकरे ।  
 य श्राद्धं कुरुते मर्यस्तस्य पुष्य फलं दृणु ॥  
 भद्रमेघसहस्रस्य सम्मगिपुस्य यत् फलम् ।  
 स्नात् एव समाप्नोति कृत्वा श्राद्धश्च मानव ॥  
 यत् किञ्चिद् दुष्कृत्य कर्म स्त्रिया वा पुस्ये वा ।  
 स्नात्समात्रस्य तत् सर्वं नश्यते नात्र संशयः ॥<sup>१</sup>

हे भ्रम विसेपक ! वहाँ से सन्निहित तीर्ष को जाने वहाँ प्रत्यादि देवता तपस्वा के पत्नी क्षपि महापि महापुष्य मुक्त होने पर भी प्रतिमास घाते हैं । सूर्य के राहुतम से घात्नादित होने पर सन्निहित तीर्ष में स्नानाचमन करने वासा पुस्य महापुष्य ही भ्रममेव यज्ञ कर चुकता है । पुष्पी धीर स्वर्ग में बितने तीर्ष हैं महीने-महीने भ्रमावस्या को सन्निहित में घाते हैं । भ्रमावस्या को सन्निहित में स्नान करके पुस्य स्वर्ग में पूजित होता है । भ्रमावस्या में तमोष्म राहु से सूर्य जगत्मात् के घात्नादित होने पर सन्निहित तीर्ष में श्राद्ध करने वाले मनुष्य को विभिन्न सम्पन्न एक हजार भस्वमेव यज्ञ करने का फल मिलता है सन्निहित में स्नान करने से प्राणी के सर्व पाप मट्ट हो जाते हैं ।

ब्रह्मवेदि कुरक्षेत्रं पुष्य सन्निहितं घर ।

सेवमाना नरा नित्य प्राप्नुवन्ति परं पदम् ॥<sup>२</sup>

ब्रह्मवेदि कुरक्षेत्र में सन्निहित घरोवर है जो मनुष्य वधमें प्रतिदिन स्नान करता है उसे परम पद प्राप्त होता है ।

### चार इक्षर

कुक्षेत्र में चार इक्षर हैं । कात्थेक्षर, ज्योतिषक्षर, स्वाणुक्षर और सर्वेक्षर ।

### चार कूप

कुक्षेत्र में चार कूप हैं । देवीकूप धरकूप जलकूप और विष्णु कूप ।

(१) महाभारत कन पर्व अध्याय २३ श्लोक १८१ से १० तक ।

(२) रामायण कुक्षेत्र अध्याय ३४ श्लोक ११ ।

## कुरुक्षेत्र : एक विवाद

कहाँ और कब ?

प्रागुनिक युग और धनवीन का युग है। यज्ञ का स्थान ठरक और बुद्धि ने ले लिया है। जन साधारण को तो बात ही क्या किज्ञान भी ऐसा सोच सकते हैं कि क्या वह धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र जिसकी महिमा और महात्म्य का बर्णन धर्मग्रन्थों और सास्त्र कार्यों ने इतना बढ़ा-बढ़ा कर किया है वही स्थान है जहाँ कि प्रागुनिक कुरुक्षेत्र है ? यमवा यह स्थान यह न होकर कोई और स्थल था ? अतः इस संका का समाधान आवश्यक है। इक्ष्वा मोह्यजोदाहो और रोमक क स्वामी को छोड़कर और वहाँ पर पाए गए मन्त्रावशेषों अण्डहरों की पक्की ईंटों गृह-निर्माण पत्थी और धम्म सामग्रियों से उनकी प्राचीनता का अनुमान कर लेना पुरातत्व विभाग वालों के लिए इतना कठिन कार्य नहीं जितना कि यह निश्चित करना कि कुरुक्षेत्र कहाँ है ? क्योंकि प्रथम तो कुरुक्षेत्र किसी नगर, राजधानी यमवा किले का नाम नहीं है। इन्होंने किसी एक स्थान को कुरुक्षेत्र नहीं कहते बल्कि कुरुक्षेत्र नाम है एक प्रदेश का जो सरस्वती और यमुना नदियों के बीच ४८ कोस तक फैला हुआ है। कुरुक्षेत्र में अधिभों के अनेक साम्रज्य थे, जो न तो पक्की ईंटों से बने थे न पत्थरों द्वारा निर्मित थे और न ही उनमें कोई गृह निर्माण की कला भी बल्कि पाषाण-काल की साधारण सी कुटियाएँ मात्र थीं। अतः यदि ४८ कोस की भूमि को महाराज जोरा भी जाए तो मिट्टी और रेत के अतिरिक्त और क्या मिल सकता है ? अतः कुरुक्षेत्र कहाँ है ? यह केवल उस भौगोलिक कसौटी पर पाव रती पूरा नहीं करता। कुछ बिन्दु हैं जो विमते तो हैं परन्तु पुँनलाए हुए हैं और धम्म कुछ बिन्दु तो पूर्णतया मिट ही गए हैं। जैसे सरस्वती नदी तो बची नहीं है भी, परन्तु यमुना नदी का कोई भी बिन्दु इस समय नहीं मिलता। फिर भी सोचें बहुत बिन्दु जिनका बर्लन में पाये चलकर करुणा उसी प्रदेश में पाए जाते हैं जिनसे कि धम्म का कुरुक्षेत्र कहते हैं। परम्पराएँ और अनुमान पूर्णतया तो ठीक नहीं होते परन्तु किसी निरुत्थ पर पहुँचने के लिए परम्पराओं और अनुमान का सहारा लेने में कोई शय नहीं। अतः परम्पराओं और अनुमान के दृष्टिकोण से भी वही सम्भव है कि वहाँ धम्म के दिन कुरुक्षेत्र है, वही वह प्राचीन कुरुक्षेत्र भी रहा होगा। इसके अतिरिक्त धर्मि भारत देश के किसी धम्म प्रदेश में यह शक्य नहीं किन्ना कि ये स्थान कुरुक्षेत्र नहीं है। इतलिए यह सिद्ध है कि धम्म जिन प्रदेश



को कुक्षेत्र कहते हैं यह वही पमद्योत्र कुक्षेत्र है जिसका वर्णन शास्त्रों में है। कुक्षेत्र का भूमीय यह है कि—

सरस्वतीहृत्पद्मयोर्देवनधार्यदन्तरम् ।  
 स देवनिमित्तं वैश्व ब्रह्मावर्तं प्रषद्यते ॥  
 तस्मिन्देस्ये य आचार पारपयक्रमगतः ।  
 षण्णानां सान्तरासानां स सदाचार उच्यते ॥  
 एतद्देशे प्रसूतस्य सकाशादग्रजमनः ।  
 स्वं स्वं चरित्रं शिषोः रन्पुत्रिभ्यां सवमानवा ॥<sup>१</sup>

सरस्वती धीर वृषद्वती दोनों नदियों के बीच भूमि को पुष्पदेश ब्रह्मावर्त कहते हैं। इस ब्रह्मावर्त देश में जो आचार विचार बर्णायनों के भोग व्यवहार करते हैं वही सदाचार हैं। इन देशों में पैदा हुए ब्राह्मणों के उपदेश से समस्त पृथ्वी के मनुष्य अपने-अपने चरित्रों को सुधारें धीर जनसे शिक्षा लें।

विनशानं तु तस्कोत्रं यत्र नष्टा सरस्वती ।<sup>२</sup>

विनशान (कुक्षेत्र) इस क्षेत्र का नाम है जहाँ सरस्वती नष्ट भवना घातघ्नान हो जाती है।  
 वसिष्ठेन सरस्वत्या वृषद्वत्युत्तरेण च ।  
 ये वसन्ति कुक्षेत्रे ते वसन्ति त्रिबिष्टये ॥<sup>३</sup>

सरस्वती के बहिष्ण धीर वृषद्वती के उत्तर में कुक्षेत्र है जो भोग कुक्षेत्र में बसते हैं वह मांगे स्वयं में बसते हैं।

एतन्नुकारन्तुकर्पोदन्तरं मन्तरं रामहृदस्य पञ्चकात् ।  
 एतत्कुक्षेत्रसमस्त पञ्चकं पितामहस्पोत्तरवेदिरुच्यते ॥  
 समस्त पञ्चक नाम धर्मस्थान मनुत्तमम् ।  
 धासमन्तघो जनानि पञ्चपञ्च च सर्वैत ॥  
 गते शुक्रेऽपि नृपति रक्षस्यहनि सरि घृक ।  
 कपयिते यत्समन्तारसप्त को शा मही पतिः ॥<sup>४</sup>

एतन्नुक मरन्नुक दोनों टापाम यहाँ की मध्यभूमि जामरुच्य राम के पाँचोंहों धीर मन्त्रक यज्ञ के मध्य की भूमि को कुक्षेत्र समस्त पञ्चक धीर प्रजापति ब्रह्मा की उत्तरवैपी कहा जाता है।

एस्य क्षेत्रस्य रक्षार्थं ददौ स पुरयोत्तम ।  
 यज्ञं च चाम्प्रनामानं वासुकिं चापि पत्नगम् ॥  
 विद्यापरं शक्नु कर्णं सुकेशं राक्षसेश्वरम् ।  
 मन्त्रायम च नृपतिं मदादेश च पावकम् ॥  
 एतानि सप्तोऽग्न्येय रक्षन्ति कुक्षेत्राङ्गसम् ।  
 धर्मीदां बसिनोऽप्येव मृत्याश्चैवानुयायिनः ॥

(१) मनुस्मृति अध्या० २ श्लोक १० २० २ । (२) व्याख्यान । (३) महाभारत कन कर्ष ३० ३३ श्लोक ४ । (४) नाम्न कुपञ्च—व्याख्यान ।

अष्टौ सहस्राणि धनुषराणां निवारयन्तीह सुदुष्करान्वी ।  
स्नातु न मञ्जन्ति महोरुपास्त्वम्यस्यते वीर पराधराणाम् ॥<sup>१</sup>

कुशलेन के ईषान (पूर्व उत्तर) कोण पर तरन्तुक यज्ञ है । कुशलेन से अग्निकोण (पूर्व दक्षिण) सीमा पर धरन्तुक यज्ञ है । कुशलेन नैऋत कोण (पश्चिम दक्षिण) पर राम हूव है । तरन्तुक यज्ञ से सरस्वती तट पर जलकर वालीस कोस पर बामु कोण (उत्तर पश्चिम) पर द्वितीय धरन्तुक यज्ञ है । उत्तर सीमा में धरन्तुक यज्ञ से कुछ ही कम वालीस कोस पर रामहूव है । दक्षिण सीमा रामहूव से उत्तर माय में वालीस कोस से कुछ दक्षिण दूरी पर धरन्तुक यज्ञ है । प्रत्येक दिशा में कुशलेन की रथार्थ भगवान् विष्णु ने जन्मन यज्ञ, पद्मपराज बामुकि विद्याधर, धन्वन्तर्य पद्मपराज मुकेषी महापराज अजाबलि और महादेव नाम की अग्नि को निवृत्त किया है । यह सब अपने सेबकों सहित कुशलेन की रथा करते हैं । महाबोर रूप धाठ सङ्घन बभ्रुवर कुशलेन में बुद्धिमान् पापियों को स्मर नहीं होने देते और उन्हें इस क्षेत्र से बाहर निकाल देते हैं ।

तरन्तुकारन्तुकयोर्दन्तर ।

रामहूदानां च मञ्जन्तस्य च ॥

एतत् कुशलेनसमन्तपञ्चकं ।

पितामहस्थोत्तरवेदिरुभ्यते ॥<sup>२</sup>

तरन्तुक और धरन्तुक के तथा रामहूव और मञ्जन्तुक के बीच का जो मूभाग है वही कुशलेन एवं समन्तपञ्चक है उसे ब्रह्मा भी की उत्तरवेदी कहते हैं ।

(१) अमन पुण्य पृ० १२ श्लोक ४० वी ४३ । (२) महाभारत वन पर्व, तीर्थयात्रा पर्व अध्याय ५३ श्लोक २०८ ।

## महाभारत का कुरुक्षेत्र

धर्मसंघ दुस्सोच उत्कट समरक्षेत्र के रूप में परिणत हो गया। जो सुपवित्र भूमि प्राचीन काल में प्रह्लापि धीर राजर्षियों की यज्ञस्थली के रूप में स्थापित होती थी। वहाँ 'आत्मनो मोक्षाय जगता हिताय च' समस्त पापित्र सन्निधि को विरह प्राण विप्लु की सेवा में उत्सर्ग करके धर्म्य सन्तान अपने मानवत्व की पूर्णता सम्पादन का इत प्रहण करते थे। उद्यो पुष्पभूमि में उन्हीं के बंसज लोच धीर द्वेय स्वार्थपरता धीर पर श्री काठरता साध्याय सिन्धु और भोगबाधना की प्रणया से आत्म विस्मृत होकर अम स्मय धीर प्रन्तरिष को भस्मीभूत कर डालने वाले समराजस्य में धारमाहृति देने के लिए डेर के डेर विन्न-विभिन्न विपयुक्त मरणास्त्रों को लेकर इच्छु हुए। विद्यास भारत की प्रथम दास्य शक्ति धायुधी भावों से मापित धीर इन्म योह मर से मुक्त होकर मानों धान ही अपना विनास करने को संवार हुई। पाण्डवों की सात प्रसौहिणी सेना के प्रथम सेनापति घुष्टघुम्न हुए। सात सेनाम्पस इन्द्र विद्युत सिखंडी घुष्टघुम्न सात्यकि नेत्रिज्ञान धीर भीमनेत्र हुए। कौरव की प्यारह प्रसौहिणी सेना के प्रथम सेनापति पितामह भीष्म हुए। प्यारह सेनाम्पस कृपाचार्य द्रोणाचार्य अस्त्र जयद्वय सदक्षिण कुतबमौ अस्त्ररत्नामा कर्ण शकुनि मूरिभवा धीर बाह्लीक हुए। कुडघेन के विद्युत क्षेत्र में पांडवों ने पश्चिमी क्षेत्र पर पड़ाव डाला उनका मुख पूर्व की ओर था और पांडवों ने पूर्वी क्षेत्र पर पड़ाव डाला उनका मुख पश्चिम की ओर था।

मुड के प्रथम दिन मनवान् कृष्ण ने धनु न को भीतोपदेश दिया। दसवें दिन शिखरी ने पाण्डववधारी धनु न के सहारे बाणों से भीष्म को घाहत किया। धनन्तर द्रोणाचार्य कौरवों के सेनापति हुए और यह बची हुई भी प्रसौहिणी सेना से मुक्त हो मुड करने लगे। कृपाचार्य धीर मुख्य अभियगण उनकी रक्षार्थ नियुक्त हुए। पाँच दिन द्रोणाचार्य मुड करके घुष्टघुम्न के हाथ से मारे गए। तब सोसवें दिन कर्ण कौरवों की बची हुई पाँच प्रसौहिणी सेना के सेनापति बने। पांडवों की तीन प्रसौहिणी सेना के धनु न सेनापति हुए। दसरे दिन धनु न के कर्ण को मार डाला। तब कौरवों ने महदास अस्त्र को तीन प्रसौहिणी सेना का सेनापति बनाया। राधा मुनिष्ठिर ने धावे दिन एक संज्ञाय करके अस्त्र को मार दिया। सम्पूर्ण कौरव सेना नष्ट हो जाने पर दुर्वाहन ने मापकर इंपायन तालाब में निवास किया। शोक लयने पर पांडव-मण ने इंपायन तालाब पर बाकर दुर्वाहन से नवा मुड करके उसे भीम ने मार डाला। धनन्तर धरवत्नामा ने राधि के सत्रय पांडवों की सेना का विनाश किया।

पांडवों की घोर से कृष्ण सात्यकि घोर पाण पांडव यही बात व्यक्ति बने। कौरवों की घोर अस्वत्थामा कृपाचार्य और द्रुपद यही लोग बने। इस प्रकार यह महाभारत युद्ध घटारह दिनों में समाप्त हुआ। धृतराष्ट्र पांचापी कुंती और दुर्योधन की स्त्रियाँ रोती हुई कुरुक्षेत्र पहुँची और मृतकों का प्रथम कर्म किया।

तीसरे दिन पांडव और यादव कुरुक्षेत्र में भीष्म जी के पास आए। भीष्म जी ने युधिष्ठिर को दान्तिपर्ब में अंकित सम्पूर्ण अर्धेरात्र सुनाया। जब सूर्य उत्तरायण में प्रबल हुआ तब युधिष्ठिर धृतराष्ट्र पांचारी कुंती अर्जुन भीम, मकुल सहदेव कृष्ण विदुर युधामन्यु, सात्यकि इत्यादि कुरुक्षेत्र में भीष्म जी के पास फिर आए उस समय भीष्म जी की तीक्ष्ण तीर्थों के मंत्रनाम पर ध्यान करते हुए १८ रात्रियाँ बीत गई थीं। अग्रमास का शुक्ल पक्ष था। मास के तीस भाग दोष थे क्योंकि मास का अष्टम दिवस समाप्त हुआ था इस प्रकार माघ सुदी अष्टमो के दिन माघ का तीस भाग दोष था। भीष्म जी ने युधिष्ठिर को अर्धेरात्र देकर कृष्ण जी की स्तुति की और प्राण त्याग दिए।

## कुरुक्षेत्र में महाभारत युद्ध क्यों हुआ ?

कुरुक्षेत्र में ही महाभारत युद्ध क्यों हुआ ? यह युद्ध भारत देश के किसी घोर भाग में क्यों नहीं हो गया ? यदि युद्ध के लिए अपने अपने मैदान की आवश्यकता थी तो ऐसे मैदान इस भारत देश में अनेक थे, फिर वहाँ युद्ध न होकर ऐसी क्या विषय बात कुरुक्षेत्र भूमि में थी कि वहाँ युद्ध न होकर वहाँ लड़ा गया ? रहा यह तब कि कुरुक्षेत्र का मैदान हस्तिनापुर और हयगिर के समीप था इसलिए वहाँ युद्ध हुआ तो मैदान तो प्रयागराज और मथुरा प्रदेश की घोर भी था और हस्तिनापुर व हयगिर की ओर में ही था परन्तु उमर न आकर युद्ध की इच्छा मन में लिए कौरव और पांडव कुरुक्षेत्र में ही क्यों आए ? इस प्रश्न के दो उत्तर हैं। एक तो यह जो शास्त्रों से अनभिज्ञ लोग देते हैं कि कुरुक्षेत्र की भूमि ऐसी है कि वहाँ किसी को किसी से प्रेम नहीं है अथवा यह भूमि मरत्यक है। वहाँ कठोर हृदय के लोग बसते हैं, इन लोगों का कहना है कि जब महाभारत युद्ध होगा निश्चित हो गया तो कृष्ण ने विचार किया कि भाइयों से भाइयों का युद्ध है अतः युद्ध-स्वत कोई ऐसा स्थान होना चाहिए जहाँ भाई को भाई के प्रेम का ध्यान न आए। सोचते सोचते जब वह कुरुक्षेत्र आए तो उन्होंने देखा कि एक स्थान घाने पेट की हानि में ही बसते कि बस निकल कर बह रहा था ठीक करने का प्रयत्न कर रहा है। परन्तु जब बहुत प्रयत्न के बरबान् भी मेड़ ठीक न हो गई घोर अन्न का बहुत अन्न नहीं हुआ तब पहले पाठ बढ़े अपने पुत्र का फिर काटकर मेड़ ठीक कर दी घोर धाराम से बैठकर भीजन करते बगा। यह देखकर कृष्ण ने निश्चित किया कि यही स्थान युद्धार्थ उपयुक्त है क्योंकि यहाँ पिता को पुत्र से भी स्नेह नहीं। इसीलिए कुरुक्षेत्र में महाभारत युद्ध हुआ। यह कहानी किसी शास्त्र का लेख नहीं बल्कि कथित घोर मन मन्त्र है।

इतिहास साक्षी है कि वह अर्जुन जिसने दीवसी स्वयम्बर पर बल्य और उपोषणादि से संभ्रम किया जिससे विराट की शायी के हरण होने पर अपने तीर्थ बाणों

द्वारा कीरव बल को घेर बासा वा बही प्रजु न मुञ्ज की इच्छा लिए गांधीव टंकारवा हुमा कुस्त्रोत्र प्राया घोर इस मुञ्ज-भूमि की रज को छुकर प्रतिज्ञा की कि न तो मुञ्ज से भागू या घोर न ही हीनता दिखाऊँगा। वह जानता था कि उसे अपने सम्बन्धियों से मुञ्ज करना है। फिर भी उसने भयवान् इच्छा से प्रार्थना की—

हृयीकेदा तदा वाक्यमिदमाह महीपते ।  
सेनयोहमयोर्मध्ये रथं स्थापयमेच्छ्युतं ॥<sup>१</sup>

हे कृष्ण ! मेरे रथ को दोनों सेनाओं के बीच सजा करिये। परन्तु जब उसके सामने उसके सम्बन्धियों के मुक्त प्राय तो इस कुस्त्रोत्र में उसके मन में निर्वयता नहीं आई, बैरभाव उत्पन्न होने की प्रवेदा उसे मोह हो गया घोर वह बिरता जडा—

गुस्नहृत्वा हि महानुभान्  
थ यो भोक्तु मंदमपोह लोके ।  
हृत्वापकामास्तु गुस्निहै व,  
मुञ्जीय भोगाग्दधिरप्रदिग्धान् ॥<sup>२</sup>

महानुभाव गुस्त्रनों को न मार कर इस सोक में भिन्नास घोबन भोजना कल्याण कारक है। क्योंकि गुस्त्रनों को मारकर भी लोक में स्थिर से रने हुए धर्म घोर काम रूप लोगों को ही तो भोगू या।

इस पर भयवान् कृष्ण ने प्रजु न को गीतोपदेश देकर उसका मोह नष्ट किया। तब कहीं प्रजु न मुञ्ज के लिए तैयार हुमा घोर उसने भयवान् इच्छा से कहा—

नष्टो मोह स्मृतिर्बन्धा एवंप्रसायामयाभ्युत ।  
स्मितोऽस्मि गतसन्धेह करिष्येऽनंतव ॥<sup>३</sup>

हे धर्मयुत ! प्रायकी इपा से गैरा मोह नष्ट हो गया है घोर मुझे स्मृति प्राप्त हुई है इसलिये मैं संशय रहित हुमा स्थित हूँ घोर प्रायकी प्राज्ञापानन करना। जब परि किसान की कहानी शरय होती तो न तो प्रजु न को कुस्त्रोत्र में मोह होता घोर न ही गीतोपदेश की प्राबन्धकता होती। प्रजु न इच्छाप्रस्य से लड़ने की इच्छा लिए, मन में बैरभाव संभोए कुस्त्रोत्र में प्राया परन्तु कुस्त्रोत्र में उसका बैरभाव नष्ट हो गया घोर उसे अपने सम्बन्धियों से मोह हो गया। इसलिये किसान की कहानी मिथ्या घोर निराकार है। शरय इससे उत्पना ही दूर है बितना पृथ्वी से प्राकाश।

कुस्त्रोत्र में महाभारत मुञ्ज होने का कारण महाभारत में बहुत सुन्दर ङग से दिया गया है—

समस्त पञ्चकं क्षेत्रमितो यामो विज्ञापते ।  
प्रचितोत्तर वेदिस्तु लोक कर्तु प्रजापते ॥  
तस्मिन्देशे पुत्रयत्तमे त्रैलोक्ये च सनातने ।  
सग्रामे निषर्न प्राप्य ध्रुवं स्वर्गो भविष्यति ॥<sup>४</sup>

(१) गीता अ १ श्लोक २१। (२) गीता अ २ श्लोक ३। (३) गीता अ २५ श्लोक ७३।

(४) महाभारत।

हे रावन् बुद्धिधर ! हम लोग सब क्षीयतिथीय एतत्त पञ्चक (कृस्नेत्र) को प्रस्थान करें क्योंकि यह क्षेत्र संसार के घाति कारण सृष्टिकर्ता मगवान् ब्रह्मा की सत्तरवैरी के नाम से प्रसिद्ध है। पुष्पाति पुष्प समस्त भूमि पाताम धीर स्वर्ग से भी युक्ति है। सनातन क्षेत्र समस्त पञ्चक में युद्ध में मरे लोग भयानक ही स्वयं प्राप्त करेंगे।

पांसवोऽपि कृस्नेत्रे वायुना समुदीरिताः ।

महादुष्कृतकर्माणु प्रापयन्ति परं परम् ॥<sup>१</sup>

कृस्नेत्र में वायु के वेग से उड़ी हुई ब्रुस भी यदि धीर से स्वर्ग कर चाहे तो बुरे कर्मों के पाप नष्ट होकर मनुष्य को मोक्ष मिल जाता है।

दूरस्वोऽपि कृस्नेत्रं गमिष्यामि वसाम्यहम् ।

एव य सततं वृथास्ताऽपि पापैः प्रमुष्यते ॥<sup>२</sup>

जो दूर देशों में बैठा हुआ कृस्नेत्र में जाकर वास करने के लिए कहता है वह सर्व पापों से मुक्त जाता है।

मरा ये मुक्ति भामश्च सिद्धायमपरायणु ।

सेम्य पांसु प्रयत्नेन प्रयाता परम परम् ॥<sup>३</sup>

जो प्राणी मुक्ति चाहने वाले है वह यत्न से कृस्नेत्र की भूमि का सेवन करके परम यति को प्राप्त होते है।

वृषिभ्यां नमिषं तीर्थमन्तरिक्षे च पुष्पकरम् ।

त्रयाणामपि सोकानां कृस्नेत्रं विधिष्यते ॥

पांसवोऽपि कृस्नेत्राद् वायुना समुदीरिताः ।

अपि दुष्कृत कर्माणु मयन्ति परमाङ्गतिम् ॥

कृस्नेत्रं गमिष्यामि कृस्नेत्रं वसाम्यहम् ।

मयकां वाषमुत्सृज्य सर्वं पापं प्रमुष्यते ॥<sup>४</sup>

भूमण्डल के निवासियों के लिए तीर्थ नमिष धीर अन्तरिक्ष निवासियों के लिए उत्तम तीर्थ पुष्कर है परन्तु कृस्नेत्र तीर्थों लोकों के निवासियों के लिए विधिष्य तीर्थ है। कृस्नेत्र में वायु द्वारा उड़ी हुई ब्रुस भी वापियों को परमपति देती है। मैं कृस्नेत्र जाऊँगा वहाँ निवास करूँगा। कैवल इतना ही कह देने से मनुष्य पापों से छूटकारा पा जाता है।

कृस्नेत्र के विषय में महर्षि पुस्तक में बर्णन बुद्धिधर से जिस महिमा का बर्णन किया है वह महाभारत में इस प्रकार है।

ततो मध्येन राजेन्द्र कृस्नेत्रमभिष्टुतम् ।

पापैभ्यो यत्र मुष्याते दर्शनात् सर्वजन्तवः ॥<sup>५</sup>

राजेन्द्र ! तदन्तर अधियों द्वारा प्रशंसित कृस्नेत्र की भूमा करें जिसके दर्शनपात्र से ही धारे पाप मुक्त हो जाते है।

(१) धम्म पुताय अन्वय ५२ श्लोक १२ । (२) धम्म पुताय अ० ३२ श्लोक १ ।

(३) महाभारत । (४) महाभारत अ० ११ अन्वय ५२ श्लोक २०२, २०३, २०४ । (५) महाभारत अ० ११ अन्वय ५२ ।

तत्र मास यसेद् घोर सरस्वती युधिष्ठिर ।  
 यत्र ब्रह्मादयो वैवा ऋषय सिद्ध चारणाः ॥  
 गन्धर्वाप्सरसो यथा पन्नगादथ महोपते ।  
 ब्रह्मक्षेत्र महापुण्यमभिगच्छन्ति भारत् ॥<sup>१</sup>

हे युधिष्ठिर ! वही सरस्वती के तट पर घोर पुरुष एक मास तक निवास करे, क्योंकि महापन्न इस महा पुण्यदायक ब्रह्मक्षेत्र में ब्रह्मादि देव ऋषि, सिद्ध चारण यन्त्र, अप्सरा यत्न घोर नाय निवास करते हैं ।

मनसाप्यभिवामस्य कुक्षेत्रं युधिष्ठिर ।  
 पापानि विप्रणश्यन्ति ब्रह्मक्षेत्रं गच्छति ॥<sup>१</sup>

हे युधिष्ठिर ! जो प्राणी कुक्षेत्र में जाने की मन से भी अभिसाया करता है उसके पाप नष्ट हो जाते हैं और वह ब्रह्मलोक को जाता है ।

गत्वा हि श्रद्धया युक्तः कुक्षेत्रं कुरुद्वह ।  
 फल प्राप्नोति च तदा राजसूयाश्वमेपयो ॥<sup>१</sup>

हे कुरुद्वह श्रद्धा युक्त । जो कुक्षेत्र में गया सहित जाया करता है वह राजसूय और श्वमेप यज्ञों का फल प्राप्त करता है ।

ततो मघकृकं नाम द्वारपालं महाबलम् ।  
 यस्तं समभिवाचेय योऽहृगफलं लभेत ॥<sup>१</sup>

तदन्तर वही मघकृक नाम के महाबली यज्ञ द्वारपाल को नमस्कार करने मात्र से एक हजार गोएँ पान करने का फल प्राप्त होता है ।

ततो गच्छेत् धर्मज्ञ विष्णो स्नानमनुत्तमम् ।  
 सततं नाम राजेन्द्र यत्र संनिहितो हृत्ति ॥<sup>१</sup>

हे धर्मज्ञ राजेन्द्र ! तत्पश्चात् विष्णु सतत नाम संनिहित तीर्थ को जायें वही स्वयं हरि तिल्य विद्यमान रहते हैं ।

तत्र स्नात्वा च नत्वा च त्रिसोऽथ प्रभवं हरिम् ।  
 अश्वमेधमवाप्नोति विष्णुलोकं च गच्छति ॥<sup>१</sup>

संनिहित तीर्थ में स्नान करने और त्रिसोकी के अत्यन्त कर्ता मगवान् हरि को नमस्कार करने से अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है और प्राची विष्णु लोक को जाता है ।

ततो रामहृद्वान् गच्छेत् तीर्थसेवी समाहित ।  
 तेषु-तेषु य स्नात्वा पितृन् सन्तर्पं पिष्यति ॥

पितरस्तस्य वै प्रीतावात्मन्ति भुवि दुर्लभम् ।

इत्सितञ्च मनः कामं स्वर्गं लोकञ्च साश्नतम् ॥<sup>१</sup>

इसके पश्चात् तीर्थ सेवी रामहृद्व कुक्षेत्र तीर्थ को जायें, इसमें स्नान करके जो पितरों को

तर्पण देना उसके पितर वृष होकर भूमि पर दुर्जन मनोवांछित कामनाओं को पूर्ण करते तथा सदा के लिए स्वर्ग में रहेंगे ।

कुक्षेत्रेण सम तीर्थे न भूयते न भविष्यति ।  
तत्र द्वादश यात्रास्तु कृत्वा भूयो न जग्ममाक् ॥<sup>१</sup>

कुक्षेत्र तीर्थ के समान कोई उत्तम तीर्थ न तो है और न ही होगा । जो इस भूमि की यात्रा बार यात्रा कर लेता है उसका पुनर्जन्म नहीं होगा ।

कृते तु नैमिष तीर्थे त्रेतायां पुष्कर वारसु ।  
द्वापरे तु कुक्षेत्रे नमो गया विशिष्यते ॥<sup>२</sup>

सत्ययुग में नैमिष तीर्थ महा पुण्य है त्रेता युग में पुष्कर, द्वापर युग में कुक्षेत्र और कलि युग में गया विशेष तीर्थ है ।

भायं बह्वसरं पुष्यं सप्तौ नागहृदं स्मृतम् ।  
कुक्षेत्रांश्चपिणां कृष्टं कुक्षेत्रेण तत्र स्मृतम् ॥<sup>३</sup>

कुक्षेत्र का भादि नाम बह्वसरं या फिर नागहृदं और सप्तपत्तात् कुक्षेत्र होता ।

धर्मकदा द्वारवासां वसतो रामकृष्णयोः ।  
सूर्योपराम सुमहानासीत् कस्यक्षये यथा ॥  
त शारवा मनुजा राजन् पुरस्ता देव सर्वत ।  
समस्तपञ्चक क्षेत्रे यमुं श्रेयोविधित्तमा ॥  
नि क्षत्रियां मही कुर्वन् राम सस्त्रमूर्ता वरः ।  
नुपाणां बभिवीशेषु यत्र चक्रे महाहृदान् ॥  
ईजे च भयनात् रामो यत्रास्पृष्टोऽपि कर्मणा ॥  
सौकस्य ग्राहकन्नीक्षो मभायोऽपापनुसत्ये ॥  
महूरयां तीर्थमात्रामोठ प्रायन् भारती प्रजा ।  
सृष्टयश्च तथा क्रूरवसुदेवाहुकादय ॥<sup>४</sup>

श्री भुवनेश्वरी ने राजा परीक्षित से कहा कि इसी प्रकार धर्मनाथ कृष्ण और रामराजनी द्वारका में निवास कर रहे थे । एक बार शरणाग्र पूर्वबहुल तथा भैरवादि प्रलय के समय समा करता है । यदुप्यों को ज्योतिषियों द्वारा ज्ञान बहल का पता चलने से ही बस पना था । इसलिए सब लोग अपने अपने कस्याल के उद्देश्य से पुष्पादि कर्षार्थ करने के लिए समयपञ्चक तीर्थ कुक्षेत्र में गए । समस्तपञ्चक क्षेत्र बड़े है, जहाँ परमपारिवी में सप्त परसुप्यम की वे घाटी पुष्पी को क्षत्रियहीन करके राजाओं के खिर से पाँच बड़े-बड़े कुष्क बना दिए थे । जैसे कोई साधारण मनुज अपने पाप की निवृत्ति के लिए प्रावक्षित करता है, वैसे ही सर्व घट्टिमात् जननात् परसुप्यम में अपने पाप कर्म का कुछ सम्पन्न न होने पर भी लोक जर्वादा की रक्षा करने की जरूरत किया था । इस महूर्ण तीर्थ यात्रा के अनंतर पर

(१) भाषिते पुष्कर । (२) कृतं पुष्कर ज० ३० श्लोक ३० । (३) यम्यं पुष्कर ज० ३२ श्लोक २४ ।

(४) श्रीमद्भागवत द्वापरीश्लोकोत्तरात् द्वापयस्यम श्लोक २ श्ले २ वक ।



भारतवर्ष के सभी प्रांतों की जनता क्रुद्धोत्त धाई थी। उनमें अकूर, बगुदेव, उदयेन आदि बड़े बड़े भी अपने-अपने पापों का नाश करने के लिए क्रुद्धोत्त भाये थे।

इस सूर्यवहण के वर्ष पर भगवान् इच्छु से क्रुद्धोत्त में नन्द बाबा यशोदा और पोषियों की भेंट हुई थी।

## महाराज युधिष्ठिर का राज्याभिषेक

महाभारत युद्ध के पश्चात् व्यास जी और भगवान् इच्छु के समझने पर राजा युधिष्ठिर हस्तिनापुर आए और भगवान् इच्छु ने पाण्डवजन्म संस में जन भर कर धर्मराज युधिष्ठिर का राज्याभिषेक किया। पाण्डवारी वृत्तपाय और क्रुद्धी तपस्या के लिए क्रुद्धोत्त में आये। वृत्तपाय से क्रुद्धोत्त में मित्रने के लिए पाण्डव परिवार सहित क्रुद्धोत्त आए। धर्मराज और भगवान् इच्छु ने यारवों के संहार हो जाने के पश्चात् परम धाम को ब्रजन किया। भगवान् इच्छु के परमधाम ब्रजन के पश्चात् पाण्डवों का राज कार्य से मन हटाट हो गया महाराज युधिष्ठिर ने पुत्रुत्तु को सम्पूर्ण राज्य की वैजनास का भार सौंप दिया और अपने राज्यसिंहासन पर धर्मराज्य पुत्र परीक्षित् का अभिषेक करके हिमासय बसे गए। राजा परीक्षित् ने बहुकाल तक राज्य किया पाश्चात्तुसार कसियुज राजा परीक्षित् के राज्य काल में आया।

यदा परीक्षित् क्रुद्धाङ्गसेऽप्युद्योत्  
 वसि प्रविष्ट निजचक्रवर्तिते ।  
 निशम्य वार्तामनतिमियां ततः  
 सरासनं संयुग शीण्डिरावदे ॥<sup>१</sup>

त्रिस समय राजा परीक्षित् क्रुद्धाङ्गस से सभार्द के रूप में निवास कर रहे थे तब समय उन्होंने सुना कि मेरी सेना द्वारा मुरक्षित साम्राज्य में कसियुग का प्रवेश हो गया है। इस समाचार से उन्हें क्रुद्ध तो पडवय हुआ परन्तु वह सोचकर कि क्रुद्ध करने का प्रसन्न मिथा वे ततने क्रुद्धी नहीं हुए। तत्पश्चात् युद्धवीर परीक्षित् ने वन्यु ह्राय में से निभा।

राजा परीक्षित् का राज्य सरस्वती से बंगा तक फैला हुआ था। जन दिनों नांवार में नापों का राज्य था। ऐसा जान पड़ता है कि महाभारत युद्ध के कारण पुश्तों की ललित बीस ही गईं तो नानों के राजा लक्ष्मीक ने इस कमचोरी का साथ उठाकर हस्तिनापुर पर आक्रमण कर दिया। और युद्ध में राजा परीक्षित् हस्तिनापुर को बचाते हुए मारे गए। अपने पिता परीक्षित् का प्रतिशोध लेने के लिए उनके पुत्र जनमेजय ने लसहिता पर आक्रमण करके नानों की मार दिया। धस्तीक ने बीच में पड़कर नानों का बच रोका और इस प्रकार लक्ष्मीक नावराज के प्राणों की रक्षा हुई। जनमेजय के पश्चात् उसके पुत्र सतासीक ने राज्य किया। राजा सतासीक के पश्चात् उसका पुत्र धस्त्वमेजय राज्य परी पर बैठा। राजा धस्त्वमेजय के स्वर्गाटोहस होने पर उनके पुत्र धस्तीकइच्छु सरस्वती और बंधा के बीच

के प्रदेश के राजा हुए। राजा धनीम इच्छु की मृत्यु के पश्चात् उसका पुत्र नेमिबल राजा बना। राजा नेमिबल के राज्य काल में कुहराज्य पर जोर संकट आए और उनकी राजधानी हस्तिनापुर गंगा के तट में बह गई।<sup>(१)</sup> इस प्रकार पुराणों में राजा नृबलुका के पश्चात् राजा क्षेमका जो इस बंध का पतिव राजा था वह वैदिक राजाओं का वर्णन आया है।<sup>(२)</sup> तत् पश्चात् यह बर्बादभी मनुष्य राज महा पद्म तक चलती है।

स एवच्छत्रां पृथिवीमनुत्सङ्घित शासनं ।

शासिष्यति महापथो द्वितीय इव मार्गव ॥

सस्य चाप्टी भविष्यन्ति सुमास्यप्रमुखा सुता ॥

य इमां मोक्षयन्ति महीं राजान् स्म दार्त समा ॥

मय नन्दान् द्विज कदिचय् प्रपन्नानुद्धरिष्यति ।

तेषामभावे जगतीं मीर्यां मोक्षयन्ति वै कसौ ॥

स एव चन्द्रगुप्त वै द्विजो राज्येऽभिषेक्यति ।

तत्सुखो वारिधारस्तु ततश्चा शोक लघन ॥<sup>(३)</sup>

महा पद्म पृथ्वी का एक छत्र शासक होगा। उसके शासन का उत्सर्जन कोई भी नहीं कर सकेगा। क्षत्रियों के विनाशार्थ यह दूधरा परसुपाम होगा। उसके सुभास्य धारि घाट पुत्र होंगे। वे सभी राजा होंगे और वो बयं तक राज्य करेंगे। कौटस्य वात्स्यायन तथा बाणस्य के नाम से प्रसिद्ध एक ब्राह्मण विद्वानिस्मात् तस्य धीर सुभास्य धारि घाट पुरों का नाश कर डालेगा। उनका नाश हो जाने पर कलिजुष में मीर्यंभी मर पति पृथ्वी पर राज्य करेंगे। वहीं ब्राह्मण पहले पहल चन्द्रगुप्त मीर्यं को राजा के पद पर धर्मिष्ठ करेगा। यह भविष्य वाली थी मन्त्राणवत् की है। इस प्रकार कुहराज्य का इतिहास याने बढ़ता है।

(१) वारिधोय वानिक् और श्रीमद्भागवत । (२) श्रीमद्भागवत अ० २२ स्कंध ४ से ५ तक ।  
(३) श्रीमद्भागवत अ० १ स्कंध स्कंध स्कंध १ से ११ तक ।



# कुरुक्षेत्र का ऐतिहासिक महत्व

## महाभारत से हर्ष तक

महाभारत के महायुद्ध के पश्चात् भारतवर्ष को एक अल्पकालमय युग से गुजरना पड़ा। इस युद्ध ने इस विघ्नसिद्ध देश के सगठन को भ्रष्टमूर्त दिया और इसके ध्वस्त पञ्च ढीमे करके रख दिए। महाभारत के नर-संहार के पश्चात् कुशलान वा पुष्य प्रदेश उजाड़ हो गया। यह उपोष्णमि सेमामों ने रौंदकर रत्नरहित कर दी। कोई केन्द्रीय शासन न रहने से अराजकता का ताण्डव नृत्य हुआ और देश लुण्ठित होकर छोटे छोटे राज्यों में बंट गया। इन छोटे छोटे राज्यों के किछप्री काठी जसकी सेव के सहारे यह अराजकता पैदाई जिसमें किसी इतिहास वा साय का भीषित रहना सम्भव न था और यदि इस समय युद्ध के युग में इतिहास भीषित भी रहता तो मनुष्य आश्चर्यजनक बात होती।

कुरुक्षेत्र वैदिक भवनवा ब्राह्मण धर्म का मुख्य केंद्र था। ईसा से पाँच सौ वर्ष पूर्व भारतवर्ष में दर्शन की दो विचार धाराओं में बहुत धोर पड़का। इन दोनों विचार धाराओं का मुख्य धोर उत्तर भारत था। ब्राह्मण धर्म के स्रष्टारों से दो दर्शन जैन धर्म और बौद्ध धर्म निकले। इन दोनों धर्मों के नापक अन्तिम राजकुमार थे। ब्राह्मण धर्म हाथ जीवन की सतत्वामों को मुक्तप्राप्त न देखकर इन दो धर्मों का प्रादुर्भाव हुआ। जैन और बौद्ध धर्मों का विकास एक ही काल में और एक ही क्षेत्र में हुआ और एक ही क्षेत्र में यह धर्म अधिक पडे। किसी जैन तीर्थाङ्कर के कुरुक्षेत्र धाने का प्रमाण तो नहीं मिलता परन्तु महात्मा बुद्ध कुरुक्षेत्र पनारे के और उन्होंने कुरुक्षेत्र में प्रवचन भी दिया था। पालिनी ने अष्टाध्यायी में लिखा है।

“बुद्धकास ये कुरुक्षेत्र सोसह जन पत्तों में से एक था” एक और बौद्ध ग्रन्थ में लिखा है कि बाम्बु डीप के सोसह जन पत्तों में कुरुक्षेत्र भी एक जन पद था। महात्मा बुद्ध ने एक बार कुरुक्षेत्र का भ्रमण किया।<sup>१</sup>

इस भी स्वभावतः जैन धर्म और बुद्ध धर्म का कुरुक्षेत्र से भी कि ब्राह्मण धर्म का

(१) अदिनी अष्टाध्यायी ४-२-२७२, २७३, ४-२-२७०। (२) कलित विष्णु (३) कलित, ५ अथायत २-२२७ पत्र की २५।

प्रभाव स्पष्ट न था कोई समाज न था। इस युग में कुक्षेत्र का कोई विशेष इतिहास नहीं मिलता।

### मौर्यकाल और कुक्षेत्र

छठी शताब्दी में अशोक मौर्य के उत्थान के साथ-साथ कुक्षेत्र का भी उत्थान हुआ यह प्रवेश एक बार फिर प्रभाव में आया और इसकी महत्ता बढ़ी। मौर्य काल में कुक्षेत्र संस्कृति तथा साम्प्रदायिक विद्या का सर्वोत्कृष्ट केन्द्र था। यूनानी विद्वान मेगास्थनीज सिन्धुसंध का राजदूत बनकर भारत वर्ष में कई वर्ष रहा।

“सरस्वती तट का यह प्रदेश जिसे कुक्षेत्र कहते हैं रमणीक और घाग्घि मय है। कसा और विद्या राज्य की छत्र छाया में फल फूल रहे हैं।”

मौर्य काल में बौद्ध धर्म के प्रभाव का सूत्र घटत हो रहा था और उस समय ब्राह्मण धर्म के सुदिन फिर सौत आए थे। कुक्षेत्र उत्तर भारत के लोगों के लिए ब्राह्मण धर्म का धर्मस्थानी केन्द्र बन गया। विद्वानों और धर्मियों का निवास स्थापित होने के कारण विद्या कला और संस्कृति का प्रकाश समस्त उत्तर अर्ध के सम्प्रसार को दूर करने लगा।

### गुप्त काल और कुक्षेत्र

गुप्त काल के राजा भी मौर्यों के पद चिन्हों पर चले और कुक्षेत्र प्रदेश पर इनकी हवा भी बनी रही। गुप्त काल के काल में भी कुक्षेत्र प्रसिद्ध था इसका अनुमान इसके कला है कि मध्य कालिदास ने अपनी अमरकवि शैल्युक्त काव्य में कुक्षेत्र का वर्णन किया है।

ब्रह्मावर्त अतपदमबन्धायया गाहमान-  
क्षेत्रं दात्र प्रघनपिपुनं कौरवं तद्भुजेया ।  
राजस्यानां चित्तसरसार्थंयं माण्डीवधग्वा  
धारापार्तैस्त्वमिष कमसाग्यदयवर्षंमुत्तानि ॥<sup>१</sup>

इसके अलावा ब्रह्मावर्त शैल्य में छाया रूप से प्रवेश करने वाले गुप्त काल पर कौरव पाण्डवों का युद्ध हुआ यह कुक्षेत्र में आता। जैसे गुप्त कालों पर अशोक सम्राज्य बरसाते ही वैसे ही पाण्डवों का युद्धवारी धर्मु नै सम्मुख लड़े हो राजा लोगों के धर्मों पर उत्तम तीरछ बाल बरसाए और इनके चिर कर्मों को काटा था।

हित्वा हासामधिमतस्तां रेवती लोचनाकुं  
बन्धुप्रीत्या समर विमुक्तौ साङ्गसी याः सिपेवे ।  
कत्वा तासामभिगममपां सौम्य सारस्वतीना—  
मन्त्वा ध्रुवस्त्वमपि शबिता वर्णमात्रेण कथ्य ॥<sup>२</sup>

हे छात्री ! केवल कौरव और पाण्डवों पर बरसाए लौह के होने से सम्भवतः स्वीकार

(१) मेगास्थनीज परम ४ खण्डो XX, C 11 F । (२) मेगलू, पूर्व मेग लोके ४२ ।

(३) कालिदास का मेगलू पूर्व मेग लोके २

कर किसी पक्ष में मुड़ करने के लिए न मिलने वाले बसवेबजी ने अपनी घबराहट प्रिय न जिससे देवती की भाँषों का बिन्दु निकलता है ऐसी मुद्र को त्याग जिस सरस्वती नदी का सेवन किया उसी सरस्वती के अन्न का तुम सेवन करो। ऐसा करने से कामे रंग के भी तुम भीतर से मुड़ हो जाओगे।

परन्तु युग बंध के अन्तिम वर्षों में भारतवर्ष के उत्तर-पश्चिमी द्वारों को अंगली हुए बोर-बोर से छट छटाने लगे। समस्त भारत बेच भयभीत हो उठा। ईसा की मृत्यु के ५०० वर्ष पश्चात् हूणों की सेना भारतवर्ष पर दूटी। हूणों के आक्रमण की एक ठेक प्राचीन धार्मिक धोर इस मर्यादक प्राचीन में युग बंध का रहा सहा राज्य मुझे पत्तों के समान उड़ गया। स्कन्द युग के राज्य काल में उत्तर भारत पर श्वेत हूणों का अधिकार हो गया और कुश्नेत्र प्रदेश हूणों के साम्राज्य का एक प्रांत बन गया। हूण नरेश महारगुल और इमाडू कूर, पचम्प और हिसक प्रकृति के राजा थे। उनकी मयानक और विनाशनी भाषाएँ धात्र भी रोबटें बढ़े कर देती हैं। यह युग जिसमें आखण्ड और अन्तर्गुप्त ने भारतवर्ष के छोटे छोटे गणराज्यों को पिरोकर सार्वभौम साम्राज्य बनाया था, हूणों के तीबरे झटकों से टूट गया। बेच फिर छोटे-छोटे राज्यों में बट गया। अराजकता मुड़ सचप, मढ़ाईयाँ ममड़े और रक्षात प्रतिदिन की साधारण सी पटनाएँ बन गईं। उस समय न तो कोई एक अथ वासन या और न कोई विभाग। इस काल में उत्तर भारत में अनेक परिवर्तन हुए और समूचे उत्तर भारत का स्वरूप ही बदल गया। इन परिवर्तनों का कुश्नेत्र पर भी प्रभाव पड़ना भावश्यक था। संस्कृति की बहु ज्योति बहु प्रकाश को मीर्य काल में फँसा था और युग बंध के राजाओं ने जिस पर छत्र छाया की थी टिमटिमाने लया। कृषा और संस्कृति राज्य पर आचारित होती हैं बहु राजा की आधिपत्य होकर उन्नति करती हैं। पर उत्तर भारत में तो राज्य के नाम पर हूणों की पमुता का नम्र ताण्डव नृत्य था, फिर कला और संस्कृति जिसका कि केन्द्र कुश्नेत्र था किस बूटे और किसकी पोय में फूलती फसती ?

### धीमेय गणराज्य में कुश्नेत्र

सन् ३२०—५०० ई० में जब युग बंध के प्रवानी सम्राट समुद्र युग का राज्य था। कुश्नेत्र प्रदेश अथवा सतमुज और यमुना नदियों के मध्य जिता हिसार न रोहक को धरने प्रांचल में लिए महान् धीमेय जाति का गणराज्य प्रजापती द्वारा अजासित राज्य था। सर्व प्रथम की राहुल संस्कृत्यायन ने धीमेयों पर एक उपन्यास लिखा है जिसमें कल्पना का सहाय अधिक लिया गया है। परन्तु इसमें अथ कोई अन्देह नहीं कि इस प्रदेश में धीमेय जाति का प्रबल गणराज्य था। यह गणराज्य चौबीसवीं सदी में फला फूला और चौबीसवीं के अन्तिम अरण्य में सम्राट अन्तर्गुप्त विक्रमादित्य ने धीमेयों का ध्वंस किया। उस समय गणराज्य प्रजापती द्वारा अजासित राज्य समाप्त हो रहे थे और एकछत्र केन्द्रित राज्यों की नींव पक्की हो रही थी। धीमेय गणराज्य भारतवर्ष का अन्तिम गणराज्य था। इलाहाबाद के किने में चौबीसवीं से लाया गया एक पाषाण स्तम्भ है उसमें समुद्र युग ने लिखा है।

प्रकाश स्वप्न वा कोई सनातन न था। इस युग में कुश्नेत्र का कोई विशेष इतिहास नहीं मिलता।

### मौर्यकाल और कुश्नेत्र

छठी सताब्दी में अशोक मौर्य के उत्थान के साथ-साथ कुश्नेत्र का भी उदय हुआ यह प्रथम एक बार फिर प्रकाश में आया और इसकी महत्ता बढ़ी। मौर्य काल में कुश्नेत्र संस्कृति तथा साम्प्रदायिक विद्या का सर्वोत्कृष्ट केन्द्र था। यूनानी विद्वान मेगस्थनीज गिस्तुखस का राजदूत बनकर भारत वर्ष में कई वर्ष रहा।

“सरस्वती तट का यह प्रदेश जिसे कुश्नेत्र कहते हैं रमणीक और शान्ति मय है। कला और विद्या राज्य की धन धाया में फल फूस रहे हैं।”

मौर्य काल में बौद्ध धर्म के प्रभाव का पूर्व मत्त हो रहा था और उस समय ब्राह्मण धर्म के मुद्दिन फिर सौट धाए थे। कुश्नेत्र उत्तर भारत के मौर्यों के लिए ब्राह्मण धर्म का शक्तिशाली केन्द्र बन गया। विद्वानों और धर्मियों का निवास स्थान होने के कारण विद्या कला और संस्कृति का प्रकाश समस्त उत्तर अर्ध के मन्त्रकार को दूर करने लगा।

### गुप्त काल और कुश्नेत्र

गुप्त काल के राजा भी मौर्यों के पर चिन्हों पर चले और कुश्नेत्र प्रदेश पर उनका हुका भी बनी रही। गुप्त बंध के काल में भी कुश्नेत्र प्रसिद्ध था इसका अनुमान इसके समय ही कवि भट्ट कालिदास ने अपनी अमरकण्ठि मेघदूत काव्यम् में कुश्नेत्र का वर्णन किया है।

ब्रह्मावर्तं जनपदमपञ्चमया गाहमानं  
 क्षेत्रं दानं प्रघनपिदानं कीरवं तद्भूजेयां ।  
 राजम्यानां सितसरशार्तर्यत्र गाण्डीवभन्वा  
 धारापातैस्त्वमिष कमसान्मस्यवर्षंस्मुत्सानि ॥<sup>१</sup>

इसके उपरान्त ब्रह्मावर्त देश में छाया रूप से प्रवेश करने वाले तुम बहूँ पर कीरव पाण्डवों का मुझ हुआ छत्र कुण्डल में आना। जैसे तुम कमलों पर घटक्य जलधारा बरसते हो वैसे ही गाण्डीव अनुपचायी धनुंन ने सम्मुख बड़े हो राजा लोगों के धर्मों पर घटक तीक्ष्ण बाण बरसाए और उनके फिर कमलों को काटा था।

हिंसा हासामभिमतरसां रेवती भोषमाङ्गा  
 अन्धुप्रीत्या समर विमुखां साङ्गमी माः सियेने ।  
 कत्वा तासामभियममर्षां सौम्यं सारस्वतीमा—  
 मन्त्रं शुद्धस्त्वमपि धरिता वरुमात्रेण कथ्य ॥<sup>२</sup>

हे धात्री ! कैवल्य कीरव और पाण्डवों पर बघबर लौह के होने से अम्यस्वपन स्वीकार

(१) मेगास्थनीज काल ४ स्यटको XX, C II F। (२) मेघदूत, पूर्व मेघ स्तोत्र ४२।

(३) कालिदास का मेघदूत पूर्व मेघ स्तोत्र २

कर किसी पक्ष में मुड़ करने के लिए न मिलने वाले बसदेवकों ने अपनी धारणा प्रिय न जिससे देवता की मोर्छों का बिन्दु निकलता है ऐसी मुरा को त्याग जिस सरस्वती नदी का क्षेपण किया, यही सरस्वती के जल का तुम सेवन करो। ऐसा करने से कामे रंज के भी तुम भीतर से मुड़ हो जाओगे।

परन्तु गुप्त बंस के अन्तिम वर्षों में भारतवर्ष के उत्तर-पश्चिमी द्वारों को जपनी हुए और-और से बट खटाने लगे। समस्त भारत देश भयभीत हो उठा। ईसा की मृत्यु के ४०० वर्ष पश्चात् हूणों की सेना भारतवर्ष पर दूटी। हूणों के आक्रमण की एक ठेक पांभी पार्सि और इस जर्जर प्राण्वी में गुप्त बंस का उठा सहा राज्य पूरे पलों के समान उड़ गया। स्कन्द गुप्त के राज्य काल में उत्तर भारत पर खेत हूणों का अधिकार हो गया और कुश्नेत्र प्रदेश हूणों के साम्राज्य का एक प्रान्त बन गया। हुए प्रदेश महारपुत्र और इलाहू कर, मध्यम और हिंसक प्रकृति के राजा थे। उनकी मयामक और विभावनी पापाएँ घाब भी रोगों लड़े कर देती हैं। यह सून जिसमें बालक्य और अत्रपुत्र ने भारतवर्ष के छोटे छोटे पण्डितों को परोकर सार्व भौम साम्राज्य बनाया था, हूणों के लीचे भटकों से दूट गया। वेज फिर छोटे-छोटे राज्यों में बट गया। घटावकता मुड़ संघर्ष, लड़ाइयाँ भगड़े और रक्षात प्रतिरिक्त की बाधाएँ ही घटनाएँ बन गईं। उस समय न तो कोई एक मात्र धारण या और न कोई विधान। इस काल में उत्तर भारत में अनेक परिवर्तन हुए और समूचे उत्तर भारत का स्वरूप ही बदल गया। इन परिवर्तनों का कुश्नेत्र पर भी प्रभाव पड़ना आवश्यक था। संस्कृति की बहु ज्योति, बहु प्रकाश जो नीचे काल में उँता था और गुप्त बंस के राजाओं ने जिस पर प्रकाश छाया की थी, टिमटिमाने लगा। कला और संस्कृति राज्य पर धारापित हीती है, यह उता की धामित होकर उन्मति करती है। पर उत्तर भारत में तो राज्य के नाप पर हूणों की पशुता का अन्त लानेक गुण था, फिर कला और संस्कृति, जिसका कि केन्द्र कुश्नेत्र था किस दूते और किसकी गोच में पूजनी फलती ?

### योधेय गणतंत्र में कुश्नेत्र

सन् ३२०—४०० ई० में जब गुप्त बंस के प्रतापी सम्राट समुद्र गुप्त का राज्य था। कुश्नेत्र प्रदेश यवना बलपुत्र और यमुना नदियों के मध्य जिला हियांर न रोहतरु को धरने धारण में बिए महात्मी योधेय जाति का गणतंत्र प्रणाली द्वारा संघालित राज्य था। सर्व प्रथम भी यहल सांस्कृत्यमन ने योधेयों पर एक उपन्यास लिखा है जिसमें कस्ना का सहाय धर्मिक किया गया है। परन्तु इसमें अब कोई धरैह नहीं कि इस प्रदेश में योधेय जाति का प्रबल पण्डित था। यह पण्डित जीवी सरी में फला पूजा और जीवी सरी के अन्तिम चरण में सम्राट अत्रपुत्र विक्रमादित्य ने योधेयों का धर्म किया। उस समय पण्डित प्रणाली द्वारा सहायिक राज्य समाप्त हो रहे थे और एकल केन्द्रित राज्यों की नींव पक्की हो रही थी। योधेय गणतंत्र भारतवर्ष का अन्तिम पण्डित था। इलाहाबाद के किने में कीर्ताबी से लाया गया एक पापाएँ स्तम्भ है उसमें समुद्र गुप्त ने लिखा है।



"भिर्मासबाहु तामन योधेयमाद्रका सर्वकरदानाज्ञाकरण प्रणामा गमन ॥"

योधेयों ने कर दान मात्रा स्वीकार और प्रणाम द्वारा मुझे परिशुष्ट किया है। इससे स्पष्ट है कि समुद्रगुप्त ने योधेय पण का उच्छेद नहीं किया। हिन्दू विश्वविद्यालय काशी के इतिहास विभाग के प्रमुख डा० परमेश्वर के मतानुसार कुषाणों के घासन को समाप्त करने का येय गुप्तों भारविषों को नहीं बल्कि योधेयों को है। योधेयों के विषय ऐसा पूर्व दुसरी छदी से चौथी छदी तक के भिन्नते है। प्रथम क्षिप्तों पर लिखा है 'योधेयानां बहुधाग्यकामा' अथवा 'भगवत्स्वामी ब्रह्मण्य देवाय' परबल के सिक्कों पर 'योधेय गणस्य जयः', योधेयानां जयमत्र दामिना'। मच्छपुर राज्य में एक कुदे तैल पर है योधेयगणपुरस्कृतस्य महाराज महासेनापते पु ब्राह्मण पुरोगं भाषिष्ठान् धरीरादि कुशलं पृष्ट्वा तिस्रयस्तिरस्मा। इही योधेयों के प्रतापी मण्डल का कुरक्षत्र मध्य प्रवेश था।

## वर्धन काल में कुरुक्षेत्र

ऐसे समय में जब देश दूट रहा था तब शक्तिशाली ऐकस्वी सम्राट प्रभाकर वर्धन इस घोर प्रमादस्या के बातावरण में पूर्णिमा का चन्द्र बनकर कुरुक्षेत्र के प्राकाश से निकला उत्तर भारत उसके प्रकाश से धामोक्षित हो गया। यह सातवीं शताब्दी का प्रारम्भिक काश था। सम्राट प्रभाकर वर्धन ने अपनी नीरता से बने कुये जगती हूणों को पराजित करके पीछे हटा दिया और कुरुक्षेत्र प्रदेश में एक सुदृढ़ राज्य की नींव डाली। सम्राट प्रभाकर वर्धन सिब के उपासक थे। यही कारण है कि उन्होंने अपनी राजधानी का नाम स्वाशेस्वर और राज्य का नाम श्रीकण्ठ बनपद रखा। सम्राट प्रभाकर वर्धन बड़ा प्रतापी राजा हुआ है। उसने तिब्बु, गान्धार, गुर्जर, राजा मासक देहों पर विजय प्राप्त की थी। हूण सभी हिरनों के लिए बहु केशरी स्वयं था। इस प्रकार बहु स्वाशेस्वर के छोटे से राज्य को बढ़ाकर महाराजाधिराज की पदवी से विभूषित हुआ। यही कारण उसका दूसरा नाम प्रतापीस था। प्रभाकर वर्धन अत्यन्त पराक्रमी होते हुए भी बयाबान् था। उसने मासका के राजा के मारे जाने पर उसके पनाच कुमारों के साथ स्नेह व्यवहार किया। वह सूर्य का उपासक था। उसकी रानी यशोवती के चरित्र का चित्रण एक भारतीय पवित्रता के रूप में हुआ है। रानी यशोवती के उबर से ही राज्यवर्धन हर्षवर्धन और राज्यपी ने जन्म लिया। प्रभाकर वर्धन ने राज्यपी का विवाह बड़ी कुमबाम से मौखरि बंज प्रबन्धिर्मा के ज्येष्ठ पुत्र बहुवर्मा के साथ किया। सम्राट प्रभाकर वर्धन के सुबाह और शक्ति सहित बनाए राज्य प्रबन्ध के कारण कुरक्षत्र प्रदेश में पुन शान्ति स्थापित हुई। शान्ति के साथ साथ उसकी सहचरी बहनों कसा संस्कृति और विद्या का सुभासमन फिर कुरुक्षेत्र प्रदेश में हुआ। सम्राट प्रभाकर वर्धन साहसी योद्धा और वीर राजा थे। उन्होंने कुरुक्षेत्र प्रदेश का नव निर्माण ऐसी से करना प्रारम्भ किया।

भाग्यवत् सम्राट प्रभाकर वर्धन के शासन काल में संस्कृत का सुप्रसिद्ध कवि और नाटककार बालामुद्र हुआ है। बालामुद्र राज्य कवि और हर्ष वर्धन का मित्र था। बालामुद्र

के प्रजापति बर्षन और हृष बर्षन के राज्य काल का विवरण अपनी अपनी कृति 'हर्ष चरित' में बहुत सुन्दर ढंग से किया है। हर्ष चरित एक ऐतिहासिक पात्र है। बालमहर्षि ने हर्ष चरित के धारण्य में अपनी धारण्य कथा भी दी है और हृष बर्षन को नायक बनाकर उसके राज्यकाल की प्रमुख घटनाओं का ठाना जाना उसके भावों और बुद्धि है। बालमहर्षि ने हर्ष चरित में उस काल की राजनीति सामाजिक जीवन आर्थिक आर्थिक आर्थिक विज्ञानों की गतिविधियों और विरोधों का ठाना जाना उसके भावों और बुद्धि है। बालमहर्षि ने हर्ष चरित में उस काल की राजनीति सामाजिक जीवन आर्थिक आर्थिक विज्ञानों की गतिविधियों पर तब प्रकाश डाला है। हर्ष चरित में उसने कोरा इतिहास ही नहीं किया बल्कि उस समय के दरबारी और साम्य जीवन का ऐसी सुन्दर चित्रण में बर्णन किया है कि ऐसा लगता है मानो उस समय का कल्पित काल लेकर सम्मुख था गया है। यह शिक्षता है, "स्वामीश्वर में मुनियों के शरोवन साधकों की संगीतशास्त्र विद्याधियों के पुस्तक विरहों की विट गोष्ठियों चारणों के महोत्सव समाज थे। धारण्य पत्नी की नायक, दिल्ली व्यापारी बन्धे बौद्ध जिन्हु आदि सभी प्रकार के लोग थे। स्वामीश्वर के धारण्य का देश इतिहास तथा धृति परम्परा से बहुत प्राचीनकाल से प्रसिद्ध है। महाकवि बालमहर्षि के कल्पानुसार श्रीकृष्ण नाम का महा कल्पक ब्रह्मण स्वामीश्वर एक धारण्य कृति प्रदेष्टु या बहुत समृद्धिवासी था। उसमें हरे भरे उपवन और सुन्दर कुब्र धारण्य से सम्पन्न देश और फलों से भरे बाग थे। देश के निवासी मुख और धारण्य के साथ अपनी जीवन व्यतीत करते थे। सभी प्रकार की आवश्यक वस्तुएं प्रचुर परिमाण में उपलब्ध थीं। लोगों का आचार निष्कमक था वे पुष्पात्मा थे और जन्में प्रतिदिन सत्कार का भाव आवश्यकता से अधिक मात्रा में वर्धमान था। उनके बीच महापुरुषों का प्रभाव नहीं था। धर्म बर्णनकर, विपत्ति तथा व्याधि का कहीं नाम नहीं था। सत्य के जिज्ञासुओं तथा आचारिक मुख की कामना करने वालों को सम्मान मुनिपार्थ प्राप्त थी। अधियों व्यापारियों तथा प्रथियों सभी के लिए यह देश प्रिय था। विज्ञानों और योगियों से यह देश बरा पड़ा था। जलित कला के प्रथियों की संख्या भी कम नहीं थी। मुख तथा धारण्य का बड़ा सम्मान किया जाता था।<sup>१</sup>

लोको के विषय में यह कहा जाता है कि—यहाँ के लोगों के रीति रिवाज और रङ्ग सङ्ग संकुचित तथा धनुदार थे। सम्पन्न कुल धारण्यधिता में एक दूसरे से प्रतिस्पर्धा करते थे। मंत्र विद्या में लोगों का बहुत विद्वान् था। धनुत धारण्य बल्लारण्युर्ण कालों का वे बहुत मूल्य मपाते थे।<sup>२</sup>

महाकवि बालमहर्षि ने श्रीकृष्ण जन पद के विषय में अपने भाई बभ्रुओं के घेरे में बैठ हर्ष चरित कहते हुए धारण्य किया—

युवताम्—प्रति पुष्पकृत्वाभिवासी वासवावास इव बसुधामवतीण  
सठठमसंकीर्णवराभ्यवहापत्यति कृतयुगभ्यस्य, स्यसकमसब्रह्मसतया पोत्रो-  
ग्लुप्यमानमृणालैस्त्वदीतमेदिनोवारगुणैरिब कृतमधुकरकोलाहलैस्तेदस्तिरूपमान

(१) धारण्य नाम कृत हर्ष चरित—मूल्य कल्पकम् १ २००।

(२) धारण्य कल्प १ १ २-४।

क्षेत्र क्षीरोक्षय पायिपयोदसिक्काभिरिव पुच्छेसुवाटसततिमिनिरन्तर, प्रतिन्दिश  
मपूर्वपवतकारिव स्वसमानधामभिविभज्य—मानं सस्यजूटे सकटसकससीमात्,   
समन्तादुद्वातपटीसिन्ध्यमानंजोरकजूटेर्जटिमिठ भूमि, उर्वेरावरीयोभि घासेयेर  
सकृत्,

मुनि—मीकृष्ण नाम का एक जनपद ।

वह मार्गो पृथ्वी पर उतरा हुआ पुष्पघासी लोगों का निवास स्वयं था । वहाँ बाइल  
घादि वखों की मर्यादा परस्पर एक चुसीमिमी न थी मार्गो वहाँ सतमुग की व्यवस्था हो  
गई हो । इस से वहाँ बेत जोते जा रहे थे स्वतन्त्रता के अधिक होने के कारण इस के कार  
से मुख्यास उखाड़े जाते थे धीरे क्रमों में बैठे हुए मीरे जब मुझारने मयते तो मयता कि  
पृथ्वी के सङ्कट गुणों का बर्लन कर रहे हों । चारों घोर ईश के बेत फेंते हुए ये जिन्हें  
मानों धीरे के समुद्र को पीकर घाय मेघों ने बरछ कर छींचा था । सब घोर जगह-जगह पर  
सन्निहानों में हृषिम पर्वत की भाँति बाग की डेरियाँ सगती थीं । चूट के द्वारा बीरक की  
फसस से हरी मरी बमीन छींची जाती । बगसर बेठों में बाग सङ्घते थे । जगह-जगह की  
कृषिम भूमियों में पके हुए उड़क की रंभीनी धीरे पककर बटके हुए मूय धीरे गेहूँ के  
बेत सब घोर फेंते हुए थे । बरबाहे चारों घोर बंगलों में घोंस की पीठ पर बैठकर पीठ मा  
रहे थे धीरे बरती हुई गायों की बैरुमात करते थे । गायों में कुङ्कुरमधियाँ लपट कर उन्हें  
परेघान करतीं धीरे बड़ती हुई बिड़ियाँ भी उनके पीछे पड़ जाती । गायों की घोंस में बँधी  
हुई बटियाँ धीरे छोटे-छोटे पु नरु बहुव मधुर घाबान करते थे । गायें चारों घोर बंगल में  
रम्माठी थीं । धबीछ होने की घाघंका से घिबजी के बसहे बीस हाप पिए हुए धीरे समुद्र  
को मार्गो हूब के प्रनेक बार के रूप में छपस्य करती थीं । वे नङ्गासी हाप छँटी पास की  
कुट्टी खाकर घना जाती थीं । प्रनेक बजों के होम धूमों से प्रंचे होने के कारण इस के द्वारा  
छोड़ी हुई धाँसों के रूप में हवाओं में नून उस स्वान की चिब बिचिब करते थे । केबड़े के  
पछामों से बड़-उड़कर उजते पराय उस प्रकार भर कर छोना छपस्य करते थे जैसे प्रबम  
बाणों के बस्य रजाने से यगबाम् घिब के तपर-भार्न छीमिठ हो जाते हैं । पाँब के बायड़े में  
घान के घाँबने धँसुर लप रहे थे । भियंम के मार्गो में ऊँट के बन्ने पाखरोट के पते तोड़  
कर बट कर जाते । हाथों से पचकाकर चुपाए हुए मातुमु पी के कोमल फलों के रस से  
मिपे, स्वेच्छ से छोड़े गए पुणों के पचाव से घरे लतामच्छय से वहाँ ताजे फलों को बूझकर  
पचिक मोम मुख पूर्वक छोटे मार्गो बग बेबताओं ने समुत्तरस के पनसामे के रूप में उन्हें  
प्रपित किया हो । धीरे भी, वहाँ जिनके धात-भास बीजों में मानों धुम्मे के बीज की बाली  
सप गई हो ऐसे घनार के फल मने थे । उन पर बैठे हुए वागनों के सास भास पातों को  
बैरकर फूलों का भ्रम होने लगता था । वहाँ के उपबनों में माची मारियल के फलों का पानी  
पीते थे । राह जबते लोय विठ खचूर खपक मेते थे । संगुर मधुर बंग से मरी ताड़ी को खाट  
जाते । बकीर धारुक नामक फलों को कुटर जातते । मन्ने-मन्ने कुङ्कुर बुझों की म लियों  
से वहाँ के जलाबज बिरे हुए थे । जममें पघुणों के उतर कर बस पीने से किनारे का पानी  
मटनेला चूटा था । चीकड़ों राही वहाँ पाकर टिकते थे । ऊँटों के पानने बाहे ऊँटों के

साव-साव भेड़ों को भी धारों धोर जुटाते थे। कहीं-कहीं दिवारों में थोड़ी-सी मानों सूर्य के रश्मि के धोड़ों को लुप्ताने के लिए बरती थीं। कुकुम की भूमि में झुंझसेट करने से कुकुम का रस उनके धरीर में लब बाठा था। मुह्र उठाकर पुष्टुन को थरोड़ बब के हवा पीठी तो समझता कि अपने पेट के बन्ने को हवा की पति छिछाने का प्रयत्न करती हैं। वे बाठहृषिधियों के समान स्वच्छन्द विबरण करती थीं। निरन्तर यज्ञ-भूम के प्रापकार द्वारा फेंकते हुए मुष्ट हंसभूम की भाँति लगते थे। वह जनपद संवीत में मृदङ्ग की धाबाब पर मल होकर नाचते हुए मञ्जुरों के समान अपने बंधन से सारे बीबसोक को मुच्छरित कर रहा था। अश्रमा की किरणों के समान धबदात बरित वाले मुत्ता रम्य कुण्डलनों से बहु सुघोमित था। संकड़ों टहरी जैसे किठो महान् बृक्ष के फलों को लपक-लपककर लेने लगते हैं उसी प्रकार सब धरिधि वहाँ धाकर हृत होते थे। कस्तूरी की सुपन्ध में बसे हुए सूबरोप द्वारा निमित्त बरब को पहनने वाले हिमासय के समीप के पर्वतों के समान वहाँ महलबसासी लोप रहते थे। विष्णु के नाभि-मण्डल के समान वहाँ धनेक बसाधय थे। जिनमें जितने कमलों पर उत्तम पत्नी सुघोमित होते थे। बृष के मयसे से उठा हुआ महा लोप वहाँ की वृष्नी की धोटा हुआ दिवारों से धरने लगता था तब ऐसा समझता कि दीर धामर के मंचन का धारम्भ हो गया हो।<sup>१</sup>

वहाँ निविध धनियों से उत्पन्न पुष्ट के लगने के कारण निकले हुए धयुबल से पुनकर यानों प्रसत् इष्टियाँ (विचार) समाप्त हो गई थीं। अयन-यज्ञ के ईदों की धनियों से मानों अब कर पाप विचार नहीं देने लगे। बृष की छिनी हुई सङ्गी में बाँधकर फरसे से काटे गए पशु की भाँति मानों धर्म विधीर्ण हो गया। यज्ञ की धग्नि से उठे हुए यज्ञ की भाँति बृष की बलवार से पुनकर यानों बलों की विपयता मिट गई। धान में ही जाती हुई इकारों की संख्या में धारों के लीनों से मानों टुकड़े-टुकड़े होकर कर्मि भाय गया। विपत्तियाँ यानों बेब मन्दिर के पत्थरों को छोटने वाली टाँकियों से बन्धित होकर चूर्ण हो गईं। पत्थर मानों महादानों के समय में होने वाले कोलाहल से बलकर भाय गए। ध्याधियाँ मानों धारों के रसोद्धार में बसती हुई धग्निधों के ताप से सलठ होकर विलीन हो गईं। वृषो लस्य के धबधर पर बजाए गए नगाड़ों की धग्नि से डर कर मानों धपमृत्सु पाठ में नहीं कटकती थीं। ईति बाबाएँ मानों निरन्तर बैरधग्नि के होने से बहरी होकर बली गईं। दुर्भाव यानों धर्म के धधिकार से परिभूत होकर लालन नहीं हुआ।<sup>२</sup>

धी कष्ट जनपद की राजधानी स्वाध्नीस्वर नगर का कर्तुन महाकवि बाण ने इस प्रकार किया है।

“तत्र वैबधिधे नानारायाभिरामकृमुमयम्भपरिमससुभगो योवनारम्भ इव  
भुवनस्य, कुक्कु ममसमपिञ्जरितबहु—महिषोसहस्रशोभिषोञ्जत पुरनिवेश इव धमस्य,  
मरुदुद्यय—मानभमरीबासम्यजन धतधबलित प्रान्त एकदेश इव सुरराज्यस्य,

(१) महाभारत भाग दश स्कन्ध अध्याय १०० ११३ ११७।

(२) महाभारत भाग दश स्कन्ध अध्याय १०० ११७-११८।

एवमस्यसिद्धिसहस्रदीप्यमानदक्षदिगन्त सिद्धिर सनिवेश इव कृतमुगस्य पद्मा  
 सनस्थितवर्णापिध्यानाधीयमान सप्तसातृसप्तप्रदाम प्रथमोज्यतार इव ब्रह्मसोकस्य,  
 वसकसमुत्तरमहादाहिनी घट संकुसो विपदा इवोत्तरकुस्पणाम्, ईश्वरभागणसठा  
 पानभिन्न सकसज्जो विजिगीशुरिव त्रिपुरस्य, गुधारससिक्तपद्मसगृहपत्तिपाश्वुर-  
 प्रतिनिधिरिव चन्द्रसोकस्य मधुमदमत्तनाशिनीभूपणुरवभरितभुवनो नामाभिहार  
 इव कुबेरनगरस्य स्थाग्नीदवराज्यो जनपदविशेषः ।

इस प्रकार के उस जनपद में स्थाग्नीदवर नाम की राजधानी थी। जनक जयनों में  
 सुन्दर पुत्रों की जँमती हुई गण से ऐसा लगता या मार्गों संघार के योजन का धारम्भ होने  
 लगा हो। कुकुम की उबटन से हजारों सुखरिदाँ अपने पटीर की भी बृद्धि कपटी थी मार्गों  
 बहु बर्म का मन्त-पुर हो। पापु से कम्पित जमटी गाय के बामों से उसके समीप का नू मान  
 सफ़ेद या मार्गों बहु स्वर्ग का एक देश हो। जमती हुई हजारों धमिनियों से समस्त रिषाए  
 प्रकाशित थीं मार्गों बहु सतयुज का ऐतानिवेश हो। पद्यासन लगाकर बैठे हुए ब्रह्मर्षि सारे  
 पापराश्यों का क्षमन करते थे मार्गों बहु ब्रह्मसोक का प्रथम प्रवतार हो। बड़ी-बड़ी सफ़रों  
 नदियों अपनी कस-कस से उसे भर देती थीं मार्गों उत्तर कुब ही वहाँ था पए हो। राजा  
 के धन-पूर्वक कर लेने की बात तो वहाँ के लोग जानते ही नहीं थे मार्गों बहु त्रिपुर के भीतने  
 का इच्छुक है। मुपा के रस से पुते हुए उजसे-उजसे वहाँ भजन थे मार्गों बहु ब्रह्मसोक का  
 प्रतिनिधि हो। मधुपान से मत्तबानी कामनियों के गहनों की धावाज सारे मुपन में व्याप्त हो  
 जाती थी मार्गों बहु कुबेर की नगरी जनका का ही बरसा हुमा का हो।

मुनि लोग उसे तपोवन कहते वैद्याएं उसे कामायतन समझतीं सायक धर्मात् गर्तक  
 लोग समझते कि यह सगीतशाळा है। धनू समझते कि यमनवर है याचक समझते कि  
 विद्यामणि की भूमि है सस्त्रों की जीविका वाले लोग उसे भीर भूमि कहते विद्यार्षी उसे  
 बुदबुम कहते याने वाले उसे नन्दबनगर समझते वैज्ञानिक उसे विश्वकर्मा का धमिर  
 समझते बखिक लोग कहते कि प्राय की बगह है, बन्धी लोगों का निर्णय या कि पुधा खेतने  
 योग्य स्वान है सज्जन उसे सामु समागम कहते शररक्षार्थी लोग उसे बच्चनिमित्त विजड़ा  
 समझते चतुर लोग विरतोष्ठी की कल्पना करते पबिक लोग उसे अपने पुत्रों का परिणाम  
 स्वस्व मानते बातिक लोग साधना के धिए उसे धगुर-विबर समझते धियू लोग उसे बौद्ध  
 विहार मानते कामी लोग उसे धन्यराश्यों का नगर कहते पारणों के अनुधार बहु महोरसवों  
 का समाज या धीर उसे जन का प्रवाह ही समझते।

वहाँ की स्थियाँ मार्तबामिनी धर्मात् ह्याबी के समान बचने वाली धीर लीबवती  
 थी। वे पीरी धनवा धीर बर्ण जाती थीं। धीर ऐश्वर्य में अनुपम करती थीं। वे साँवली  
 थीं धीर सात मणियों के घामूपस पहनती थीं। उजसे शीतों से उनका मुख पबिक या  
 धीर परिपत की गंध जाती साँस सेठी थीं। बन्धमा के समान सुन्दर देह वाली थीं धिरीप  
 के पुत्र के सज्जन उनके धन्य कोमल थे बुधे उन्हें प्राप्त नहीं कर सकते थे वे  
 कम्पुक धारस करती थीं मोदे जनकों से सुखोभित थीं धनका कदिधाय पवता या।

वे सावध्य वाली और भयुर मापली थी। वे प्रयादशुष्य थीं और उनका बर्ण प्रसन्न एवं उज्ज्वल या प्रियसमायम के लिए उरगुक न थी और पूर्ण वीचन पर था पहुँची थी।

वहाँ मुम्बरियों की घाँसें ही फिर की सहज भूम-माता बन जातीं बुद्धलय क पुस्तों की माका भार प्रतीत होती। उनके गालों पर छिन्नराए हुए बालों क प्रतिबिम्ब ही स्तेय न देने वाले कर्णावतल बन जाते फिर कान में कर्णावतल के रूप में वयास पत्र का लगाना पुनर्बलिमात्र हो जाता। अपने प्रिय की कथा ही उनक लिए सुन्दर कान का प्राभूपण बन जाती, फिर भी उनका कुण्डल सपाना घाङ्गुवर यात्र या। उनक कपोस ही निरन्तर धालोक उत्पन्न करते वे मणियों के बीपक ठो कंबल बँधक के बिहू होने क कारण रहे जाते वे। उनकी सुपन्थित साँधों पर बलमठे हुए मोरों ही उनके मुख पर सुन्दर पूँवट पट का काम करते वे फिर भी प्रया के नाते वे अपने मुख पर बूवट की वाली डाल लेती थीं। उनकी वाली धत्यन्त मधुर की बाह्य कला के रूप में वे ठारों को झेड़कर बीया बजाती थीं। उनकी मुस्कान ही धरपन्त सुगन्धित पटबास का काम देती फिर कपूर की भूम निरपेक प्रतीत होती थी। उनके धरर की फेंतरी हुई काली ही उनके धंगराय का रूप धारण कर लेती, फिर बिना किसी साध के बुद्धुम लगाना उनके सावध्य का कर्मक बन जाता या। उनकी कोमल मुखाएँ ही परिहास के धरर में ठोके की बेजसता थीं फिर मूणालों का वहाँ प्रयोजन ही क्या? यौवन की मारकता से उनक स्तनों पर छूटते हुए पचीने ही सुन्दर हार के समान लगते फिर उनके धरीर पर हार बोध मात्र प्रतीत होते वे। उनके नितम्ब ही प्रेमी जनों के बियाम के लिए स्टाटिकमण्डि के बियाम रहे हुए शिवालय की बनी भवन बेरिका के समान थे। उनके धरणों को कमल समझकर बैठे हुए मोरों ही उनके धरणामरण वे वहाँ इन्द्रनील मणियों के धूपुर निष्पन्न थे। धूपुर की धावाज से लिख हुए भवन के कसहृष ही उनके धूपने के लिए मीष्य साधो बनते केवल ऐदर्य के धरसन क लिए उनके धाय परिजन रहा करते वे।

सम्मान प्रभाकर बर्धन की बधपरम्परा के विषय में बाण सिद्धता है कि 'उत्र च साक्षात्सहस्राक्ष इव सर्ववर्णधरं धनुर्दधान, मेरुमय इव कल्याणप्रवृत्तित्वे, मन्दर-मय इव सकृन्नीसमाकर्षणे, जलनिधिमय इव मयादायाम् धाकाधमय इव धरद प्रादुर्भवि धाधिमय इव कर्मासंप्रहे वेदमय इवाङ्गनिमासापत्वे, धरणिमय इव सोकभूतिकरणे, पवनमय इव सवपाविबरजोविकारहरणे गुरुबन्धसि, पृथुरसि, बिद्यासोमनसि, जनकस्तपसि, सुपात्रस्तेजसि, सुमन्त्रो रक्षसि, सुय-सदसि, धनु नो मशसि, भीष्मो धनुषि, निपथो ययुषि, धनुष्ण समरे, धूर धूरसेनाक्रमेण, ददा-प्रभाकमण्डि, सर्वादिराज तैजः पुञ्जनिमित्त इव राजा पुष्यभूतिरिति नाम्ना बभूव।'

स्वामीधर में पुष्यभूति नामक एक राजा हुआ। जैसे इन्द्र विविध प्रकार के बलों वाला धनुष धारण करता है उसी प्रकार अपने अपने धरस्त बाह्यय धादि बलों के निदमार्थ

(१) महाकवी बाबुलाल सर्वधरित दर्शनसङ्घटन इ. १२८-१२९।

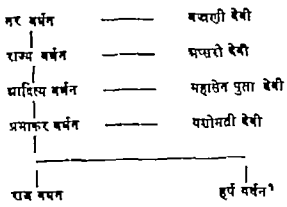
(२) महाकवी बाबुलाल: इव बरिष्णु दर्शन सङ्घटन व. १२९ १२९।

धनुष पारण किया। कस्माल प्रकृति के कारण वह मानों कस्याण के मुनेय से निर्मित था। वह लक्ष्मी के प्राकर्षण करने में मन्वराज्य के समान यथाया में समुद्र के समान सम्यक् रूप यद्य को उत्पन्न करने में प्राकाण के समान सारे मोरु के बारण करने में पृथिवी के समान घोर पाथिव राजाओं का रजोविकार दूर करने में वायु के समान कक्षाओं के संघर्ष में यज्ञ के समान स्वाभाविक बात थीत करने में वेद के समान था। वह बाली में गृहस्थादि या ब्रह्म के सम्बन्ध में पृथु राजा के समान था यज्ञ में विद्याय या उपस्था करने से बनक या तेज में मुवाच नामक राजा के समान था रक्ष्य के सम्बन्ध में मुमग्ग या सबा र्म विद्याय ब्रह्म में अर्जुन, धनुष में भीष्म, धरीर में अर्जुनीय सगर में अर्जुन धुरों की सेवा पर प्राक्रमण करने बालों में धुर और प्रजा के कार्य करने में दक्ष प्रजापति के समान। इस प्रकार वह मानों पूर्वकाल के समस्त राजाओं की वैजराधि से निर्मित हुआ था।

राजा पुष्यभूति धैर्य मत्त के चलने वाले थे। स्वप्न में भी वह बिना छिद की पूजा किए कुछ भी छाता पीठा न था। वह मानता था कि छिद के अतिरिक्त इस संसार में कोई अन्य देवता नहीं 'अधुपतिप्रपम्भोऽन्यदेवता सुग्यमम्यत नैनीययम्' उक्तरी प्रजा भी छिद की उपासना करती थी "बड़े बड़े भगवान्पुष्पत अण्डपरसु" राजा पुष्यभूति बलिष्ठ से थाए एक धैर्य महात्मा के प्रभाव में था यथा था। उन महात्मा का नाम भैरवाचार्य था। राजा पुष्यभूति को भैरवाचार्य ने ब्रह्मरासत से छिनी गई एक अष्टहास नामक कृपाय दी और प्रार्थना की कि वे वेताल छावना में मग्न सिद्धि के लिए उसकी सहायता करें। महाकवि बाण ने भैरवाचार्य और उनके शिष्य परिव्राजक सम्पाठी का बड़ी मूलमता से चित्रण किया है। अनातिकल्पेऽप्यहःमु प्राप्तायां च तस्मादेव कृष्णचतुर्दशैः विविधा वीक्षित' श्रितियो नियमवाजम्।

कई दिना के पश्चात् कृष्ण चतुर्दशी के दिन राजा धैर्य विधि से वीक्षित होकर रात को अकेला मंत्री लज्जवार लेकर सरस्वती तट पर बहाँ पहुँचा जहाँ भैरवाचार्य वेताल सिद्धि कर रहा था। राजा ने देखा कि छावना भूमि में कुमार के पदय के समान अस्म से पुरे नए महामण्डल में भैरवाचार्य छतान पड़े हुए सब की छाती पर बैठकर उसके मुख में धमनि बसाकर हवन कर रहा था। वह काली पपड़ी कासा य पपय काली राखी, कासा बरन पहने हुए था धीर आये ठिबों की प्राकृति से रहा था। राजा ने बलिष्ठ रिधा में बड़े होकर पहला देवा झुक किया। धाधी रात को बरती अड़ कर एक बसोय बर्ष का पुस्य बाहर थावा। वसाम बर्ष पुस्य ने कहा कि वह श्रीकंठ नाम है धीर उती के माव से यह देव श्रीकंठ कहलाता है अतः बिना उसके बलि दिए भैरवाचार्य सिद्धि प्राप्त नहीं कर सकता। श्रीकंठ माय ने तीन पहरेदारों पाताल स्वामी कर्लताल धीर टीटिथ को मार भयाया परन्तु राजा पुष्यभूति ने उसको परब्रिथ कर दिया। उनी एक रानी प्रयत हुई जो लक्ष्मी थी। लक्ष्मी ने राजा की प्रार्थना पर भैरवाचार्य की सिद्धि का कर दिया धीर राजा को बरवाज दिया उसके बंधव प्रतापी धीर वैजस्वी हूनि। सम्राट प्रभाकर बर्षन राजा पुष्यभूति के बंधव ही थे। कुमार हर्ष बर्षन के पूर्ववर्ती राजाओं धीर जनकी राधियों के

म ह्य प्रकार से ।



रज्य समस्त वर्धन कुल में सम्राट प्रभाकर वर्धन ने भविक बनाति प्राप्त की । उन्होंने परम महारक महाराजाधिराज की उपाधियाँ धारण की थी । उन्होंने पड़ोसी राजाओं के साथ बहुत युद्ध किए । बाण ने उसका वर्धन धर्मकार पूर्ण गाथा में यू किया है । ह्य (हिए) केसरी विभु राज बबरो मुजर प्रजागरः गांधारधि पमर द्वीपकूट हस्ति बबरो लाट गटवपाटबरो भासवसकमी परधु ।<sup>१</sup> प्रभाकर बजन ने बहुत से यज्ञ किए, 'पठसमभिकाध्वर भूमिसर धूसरि बामन बयसि' ।<sup>२</sup>

### सम्राट हर्ष वर्धन और कुरुक्षेत्र

ईसा की मृत्यु के ६०२ वर्ष परचात् सम्राट प्रभाकर बजन का स्वर्गवास हो गया । उस समय राज वर्धन २२ वर्ष की आयु का था और हर्ष वर्धन की आयु सोसह वर्ष की थी । सम्राट की मृत्यु के समय राज वर्धन उत्तर से हूँ लो से युद्ध करने गया हुआ था । सम्राट की मृत्यु का समाचार पाते ही वह स्वानेश्वर कापिठ धाकर हर्ष वर्धन से मिसा । राज वर्धन स्वानेश्वर के राजसिंहासन पर बैठा परन्तु उही समय यह मूचना मिलने पर कि उसके बहनोई को मालव नरेस कर्ण सुकर्ण ने मार दिया है वह कर्णोड की घोर सेना लेकर गया परन्तु बोके से मारा गया । राज वर्धन की मृत्यु के परचात् हर्ष वर्धन ने राज-काय संभाला । छ. बयों तक स्वानेश्वर की सेनाएँ सम्राट हर्ष वर्धन के सेनापतिरक में पूर्व से पदिबम तक हुसरे राज्यों को पराजित करती हुई घोर स्वानेश्वर राज्य की सीमाओं को बढ़ाती हुई बूमती रहीं । उस समय के दार्शनिक न तो हानियों के हीरे उठारे गए और न ही संतियों के धरक उठरे । सम्राट हर्ष वर्धन ने भी विभाम नहीं किया । हर्ष विजय धनि यान में उसके पास २००० हाथी २०००० बुइसवार २००० पैदल सेना थी । छ. वर्ष के परचात् अपने ही स्वानेश्वर में राजगुप यज्ञ किया और सम्राट की परवी ग्रहण की ।

(१) ह्य सलय २२ के संज्ञेय के राज लेख परिपाकिना इंडिया मिशर ४ ह्य २ = संलय २२ के मकुन बने कर्णक परिपाकिना इंडिया मिशर १ ह्य २० मासम्य से प्राय मुजर-वर्धन मिशर बौध्म रिक्त संज्ञेयवरी १६ २ ह्य ३ २ तथा १६२० ह्य १२१ १२२ । (२) ह्य खरिप मकम कर्णकाय ह्य १०० । (३) ह्य खरिप लेखक बाधुरेय शरण ।

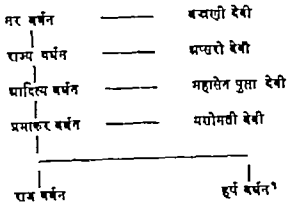


पशुपत शरण किया। कस्याए प्रकृति के कारण वह मानों कस्याए के मुनेश से निमित्त था। वह सखी के धारकण करने में मन्वराजस के समान मर्यादा में समुद्र के समान शम्भु तन मघ को उत्पन्न करने में धाकाए के समान सारे मोक्ष के कारण करने में पृथिवी के समान और पानिब राजाओं का रमोधिकार दूर करने में वायु के समान, कनाओं के संघर्ष में अम्भ के समान स्वामाधिक बाठ-बीठ करने में वैर के समान था। वह बाणी में वृहस्पति वा बल के सम्बन्ध में पृथु राजा के समान था मन में विद्याल वा तपस्या करने से बनक वा ऐश में सुवान नामक राजा के समान था रहस्य के सम्बन्ध में सुमन्त्र वा समान विद्याल मघ में धनुर्न पशुपत में भीष्म, धरीर में धर्षणीय, समर में धनुष्म सुर्षों की सेवा पर साहमण करने वालों में सुर और प्रजा के काज करने में बरा प्रजापति के समान। इस प्रकार वह मानों पूर्वकाज के समस्त राजाओं की वैजराधि से निमित्त हुआ था।

राजा पुष्यभूति शैव मत के मानने वाले थे। स्वप्न में भी वह बिना शिव की पूजा किए कुछ भी खाता पीता न था। वह मानता था कि शिव के धरिच्छि इत संसार में कोई धर्म शैवता नहीं। 'अपुपतिप्रपम्नोऽप्यदेवता सुष्यममस्यत रंशोवमम्' उसकी प्रजा भी शिव की उपासना करती थी "इहे इहे भववानुष्यत शम्भपरमु" राजा पुष्यभूति दक्षिण से माए एक शैव महात्मा के प्रभाव में धा बना था। उन महात्मा का नाम भैरवाचार्य था। राजा पुष्यभूति को भैरवाचार्य ने बहाराजस से छीनी गई एक महृहास नामक कृपाए की धीर प्रार्थना की कि वे बेताल साधना में मग्न सिद्धि के लिए उसकी सहायता करें। महाकवि बाळ ने भैरवाचार्य और उनके शिष्य परिव्राजक सन्यासी का बड़ी मूल्यमता से चित्रण किया है। महाकविने पुष्यभूतु प्राप्तावा न तत्त्वायेन कृष्णवपुर्बर्वा शैवेन विविना शीकित' शिविपो नियमवानुत्। -- --

कई दिनों के पश्चात् कृष्ण वपुर्बर्वा के दिन राजा शैव शिव से शीकित होकर रात को धकेसा ननी तलवार लेकर सरस्वती तट पर बड़ी पहुँचा जहाँ भैरवाचार्य बेताल सिद्धि कर रहा था। राजा ने देखा कि साधना भूमि में कुमार के परण के समान अत्यंत पुरे मए महामण्डल में भैरवाचार्य उठान पड़े हुए धन की छाती पर बैठकर उसके मुख में धनि लजाकर हवन कर रहा था। वह काली पयड़ी अज्ञता पयण काली राजी काला बस्त्र पहने हुए था और काले तिलों की धातुति बै रहा था। राजा ने दक्षिण दिसा में जाड़े होकर पहरा देना शुरू किया। धानी रात को बली खड़ कर एक स्वोम बर्ष का पुष्य बाहर भाबा। स्वाम बर्ष पुष्य ने कहा कि वह भीकठ नाम है धीर उली के नाम से वह देव भीकठ कहलाता है धत बिना उसकी बलि दिए भैरवाचार्य सिद्धि प्राप्त नहीं कर सकता। भीकठ नाम ने तीन पहरेदारों पाताल स्वामी कर्णताम धीर टीटिम को धार मजामा परन्तु राजा पुष्यभूति ने उसको पयकित कर दिया। धनी एक स्त्री प्रगट हुई जो सन्नी थी। सन्नी ने राजा की प्रार्थना पर भैरवाचार्य की सिद्धि का बर दिया धीर राजा को बरदान दिया उसके बंधन प्रतापी धीर ठेकस्वी होंगे। सम्राट प्रमाकर बर्षन राजा पुष्यभूति के बंधन ही थे। कुमार हर्ष बर्षन के पूर्ववर्ती राजाओं धीर धनकी पानियों के

नाम इस प्रकार थे ।



परन्तु समस्त बर्धन कुल में सम्राट प्रभाकर बर्धन ने अधिक शक्ति प्राप्त की। उन्होंने 'परम भट्टारक महापद्मभिराम की उपाधियाँ धारण की थी। उन्होंने पड़ोसी राजाओं के साथ बहुत युद्ध किए। बाण ने उसका बर्तन धनंकार पूर्ण माया में यूँ किया है। हुए हूरिस केसरी सिपुराज ज्वरो युद्ध प्रजागदः, पांभाराधि पंगव डीपडूट हस्ति ज्वरो साट पाटवपाटज्वरो मासवसदमी परधु'।<sup>१</sup> प्रभाकर बर्धन ने बहुत से यज्ञ किए, 'राजसमिषिणाध्वर धूमधिसर ब्रुसरिड वासव बयमि'।<sup>२</sup>

### सम्राट हर्षवर्धन और कुरुक्षेत्र

ईसा की मृत्यु के ६०१ वर्ष पश्चात् सम्राट प्रभाकर बर्धन का स्वर्गवास हो गया। उस समय राज बर्धन २२ वर्ष की आयु का था और हर्ष बर्धन की आयु सोलह वर्ष की थी। सम्राट की मृत्यु के समय राज बर्धन उत्तर से हूणों से युद्ध करने गया हुआ था। सम्राट की मृत्यु का समाचार पाते ही वह स्वानेश्वर नामिस धाकर हर्ष बर्धन से मिला। राज बर्धन स्वानेश्वर के राजसिंहासन पर बैठा परन्तु उही समय यह सूचना मिलने पर कि उसके बहनोई को मालव मरेण कर्णें मुबर्ण ने मार दिया है वह कन्वीज की घोर सेना लेकर गया परन्तु बोधे से मारा गया। राज बर्धन की मृत्यु के पश्चात् हर्ष बर्धन ने राज-काय संभाला। छ. वर्षों तक स्वानेश्वर की सेनाएँ सम्राट हर्ष बर्धन के सेनापतित्व में पूर्व से पश्चिम तक दूसरे राज्यों को पराजित करती हुई और स्वानेश्वर राज्य की सीमाओं को बढ़ाती हुई धूमती रहीं। उस समय के पन्तगड न तो हाथियों के हौर उतारे गए और न ही सैनिकों के घस उतारे। सम्राट हर्ष बर्धन ने भी विधाम नहीं किया। हर्ष विजय अभिमान में उसके पास १००० हाथी २०००० बुद्धवार १००० पैदल सेना थी। छ. वर्ष के पश्चात् उसने ही स्वानेश्वर में राजसूय यज्ञ किया और सम्राट की पत्नी ग्रहण की।

(१) इन सप्त २२ के बन्धुवृत्त के लक्ष लेख एपिग्राफिका इंडिका विल् ४ एड १०२ सप्त २१ के मनुष्य वाले एपिग्राफिका इंडिका विल् १ एड ६० आठवा से मात्र मुद्र बन्धु विहार इंडिया रिसेर्च सोसायटी १९१६ एड १ २ एड १६९ एड १५१ १५२। (२) इन परित प्रथम कर्णकण एड १०४। (३) इन परित लेखक बल्लुवैर राय।

बर्बन बंध की राजधानी रहने के कारण कुद्वेदन प्रवेश और उसके नागरिकों में जीवन के विविध क्षेत्रों में उन्नति की जैसे बाणिज्य, व्यवसाय, उद्योगधर्म्ये विद्य, निर्माण कला कौशल राजनीति समाजनीति, सामन्य व्यवस्था साहित्यकला, विद्या और सांस्कृतिक प्रगति जितनी बर्बन राज्य नाम में स्वानेखर में हुई फिर कभी नहीं हो पाई। समस्त कुद्वेदन प्रवेश वगुदिक उन्नति की परकाष्ठा पर पहुँच गया। राज्य का विज्ञान विस्तार होने के कारण स्वानेखर हर्ष बर्बन के राज्य के एक कोने में हो गया। इसने विद्यात पात्राय का मुखाव रूप से प्रकल्प करने से लिए हर्ष बर्बन ने स्वानेखर से राजधानी हटा कर कन्नौज की जो राज्य के केन्द्र में था, राजधानी बना लिया। प्रविष्ट चीनी यात्री ह्वेनत्सांग प्रकवा यात्रे विष्टे कि इतिहासकार भ्रमलुकरताओं का राजकुमार कहते हैं ह्वेनत्सांग के पावन काल में भारतवर्ष में था। उसने ६२६ ईस्वी से ६४५ ईस्वी तक भारतवर्ष का भ्रमण किया। स्वानेखर के विषय में उसने लिखा है कि—स्वानेखर राज्य की परिधि ७०० मी और राजधानी की परिधि २० मी थी। यहाँ की भूमि उपजाऊ है और धान बहुत पैदा होता है। जलवायु गरम होते हुए भी सुखकर है। लोगों का व्यवहार धर्मन्त बजा है और उनमें एक दूसरे के प्रति कोई भगाव प्रकवा प्रणायन नहीं है। परिवार धनी है और धर्मन्त विद्याविद्या का जीवन व्यतीत करते हैं। वे बाहु-टीनों के बहुत धर्मन्त हैं और साधारणतया उन लोगों का सम्मान करते हैं जो किसी भी धर्म शोध में धराधारण योग्यता रखते हैं। धर्मिकास लोग मोह-मामा में लीते रहते हैं केवल बहुत थोड़े से लोग लेठी-बाड़ी का कार्य करते हैं। यहाँ देश के कोने-कोने से धर्मन्त तथा बहुमुख्य धर्मन्त बहुत बड़ी मात्रा में विकने धाती हैं। इस प्रदेश में तीन बुद्ध विहार हैं जिनमें ७०० के धर्मन्त धर्मन्त रहते हैं। वे सब धर्मन्तों का धर्मन्त करते हैं और उनका धर्मन्त भी करते हैं। यहाँ ही धर्मन्त-धर्मन्त हैं जिनमें कई प्रकार के साधु बहुधर्म्या में रहते हैं। राजधानी के चारों ओर २०० मी के धर्मन्त की यहाँ के लोग धर्मन्त स्थान कहते हैं।<sup>१</sup>

देखा जान पड़ता है कि ज्ञानधर्म को महाभारत युद्ध की कथा मात नहीं की और न ही उसने किसी से सुनी एवं नहीं की। महाभारत युद्ध का जो धर्मन्त उसने लिखा है वह धर्मन्त ही वे धर्मन्त का है। महाभारत युद्ध के विषय में वह लिखता है कि—'धुपने समय में पाँच नदियों के धर्मन्त में जो राजा थे। उन्होंने इस प्रदेश को दो भागों में बाँट लिया था। वह धर्मन्त एक दूसरे की सीमाओं पर धर्मन्त करते रहते थे। उनका युद्ध कथा धर्मन्त नहीं होता था। धर्मन्त में दोनों राजाओं का यह धर्मन्त हो गया कि वे युद्ध धर्मन्त धर्मन्त में जो सङ्कर धर्मन्त कर लें जिससे कि प्रजा को धर्मन्त दिसे। परन्तु धर्मन्त धर्मन्त संख्या इस धर्मन्त के धर्मन्त की उन्होंने धर्मन्त था वह धर्मन्त नहीं माना। एक इस धर्मन्त के राजा ने सोचा कि प्रजा को धर्मन्त करना बहुत धर्मन्त है। कोई धर्मन्त धर्मन्त प्रजा की धर्मन्तधारा मोड़ सकती है। धर्मन्तधर्मन्त कोई धर्मन्त धर्मन्त प्रजा को धर्मन्त धर्मन्त पर से धर्मन्त।

उस समय यहाँ एक विज्ञान और धर्मन्त धर्मन्त था। उसको धर्मन्त राजा ने कई धर्मन्त के धर्मन्त इस धर्मन्त के धर्मन्त धर्मन्त कि वह राजा के धर्मन्त धर्मन्त में धर्मन्त एक

धार्मिक पुस्तक लिये जो पर्वत की मुखा में छुटा दी जायगी। कुछ समय के परचात् जब पुस्तक पर कुछ रंग धाए जो राजा ने राजसिंहासन पर बैठकर माने मन्त्रियों को बुलाकर कहा कि मैं मानने धर्म ज्ञान पर मन्त्रित होता हुमा कि मैं इतने ऊँचे स्थान पर बैठा हूँ, कहता हूँ कि ईश्वर ने प्रसन्न होकर स्वप्न में यह मेरा मुझे बताया है कि एक ईश्वरीय ज्ञान की पुस्तक धमुक पर्वत पर धमुक मुखा में रखी है। राजा ने धामा दी कि पुस्तक धोजी जाए और मुखा में मन्त्रियों के लिये पुस्तक मिला गई। मन्त्रियों ने राजा को बधाई दी और प्रजा ने धुधिया मनाई। राजा ने दूर-दूर तक पुस्तक के मिलने की सूचना दी। राजा ने धामा दी कि पुस्तक में जो लिखा है उसे समझया जाए। संक्षेप में पुस्तक की बात इस प्रकार है—मृत्यु और जीवन धसीमित हैं धावागमन का धन्त नहीं। ब्रह्मज्ञान के बिना मिस्तार नहीं परन्तु एक विशेष धावना से मनुष्य इन दुःखों से बच सकता है। इस नगर के चारों ओर २०० की की परिधि को धार्मिक स्थान कहा है। पुराने समय के राजाओं ने भी इस बात को माना है। बहुत बड़े दीव जाने पर यह धिस्तु मिट गए। धार्मिक जीवन ध्यतीत न करने से मनुष्य धाचार होकर दुःखों के समुद्र में डूब गया। यह बात धव धाम में कि धाव में से जो धाव-सेना पर धाक्रमण करेधा और मुठ में मर जाएगा वह धिर मनुष्य स्व में धम्म सेना। जो बहुत से धनधों को धारेधा उसे स्वम मिलेधा। वह धामा काधि पुत्र न धीत्र जो धपने डूब माठा रिता की सहायता इस धूमि में धाधा करने में करेधा वह धसीम मुखा पाएधा। जो यह सुधनधर लो होंये वे मृत्यु के पश्चात् धन्वकार में डाले जायेंगे। धत धरयेक ध्यक्ति धुमकार्य करने को तैयार रहे।

यह सुनकर और मृत्यु को निर्बाध धार्य धधमकर लोग मुठ को तैयार हो गए। राजा ने धपने धोडाधों को बुधाधा। दोनों देधों में मुठ धारम्भ हो गया। मृतकों के डेर धधियों की मति धग गए। उस समय से धब तक यह मेदान हडिधियों से बधा हुआ है। यह इस देश का पुराना इतिहास है। धत यह धूमि धर्म-धूमि कहलाती है।

इसके पश्चात् ज्ञानधाय ने स्वानेधवर का यह बर्णन किया— नगर के उत्तर पश्चिम कोण पर ४ धपधा ५ की दूर ३०० कीट ऊँधा स्तूप है जिसे धधमट धधोक के धनधाधा धा। यह स्तूप धमकठी हुई धीमी और लाल ईंटों से धना हुआ है। स्तूप की धोटी पर महात्मा बुड के धबधेध रहे हैं। धधा-करा स्तूप से धमकठा हुआ प्रकाध धिफलता है और महात्मा धर्तन धेते हैं। नगर के दक्षिण में १०० की दूर ह्य एक धाधम में धिधका नाम धीकध है धाते है। यही बहुत से ऊँचे स्तूप हैं जिनमें धधधय मधान हैं उनके बीच में धूमने-धिरने के स्थान हैं। पुनारी लोय गुठी है उनका ध्यबधार मुधर और धीरधधूर्ण है। यही से उत्तर-धूर्ध में ४०० की दूर जाने पर ह्य धुर्यधना देश में धाते हैं।<sup>१</sup>

१ धी-को. पुत्र धिकार न धाक धेधन धर्धे पुनक. ४ इड १५२ से १५२ तक, इधम धीध की धीनी धीधक-कध (१९२ ई२१) का धेधुधर धीध धधुधर। धिधोरिकध धीधधरी धाध धधधेध धिधध धीधध धीधध धधध १ १।

## हर्ष वर्धन के पश्चात् का कुरूक्षेत्र

सम्राट हर्ष वर्धन के कोई पुत्र पैदा नहीं हुआ, यत उत्तरी मूल्य के परचात् भारतवर्ष पर एक बार फिर घम्बकार छा गया। कुत्सात्र प्रवेश पर इस घम्बकार का अर्थकर प्रमाण पड़ा। वक्ता साहित्य सम्यता और संस्कृति घम्बकार में नहीं पलते। जब इस घम्बकार का कामा परा उठा तो भारतवर्ष का विश्व बिलतुल्य बदल गया था। बौद्ध धर्म अमर रखा था वन चुका था। समस्त उत्तर भारत छोटे छोटे राज्यों में बंट गया था और इन राज्यों पर विविध प्रकार के राजा राज्य करते थे। इन राज्यों और भारतवर्ष की परम्परा और संस्कृति का दूर का भी नाता नहीं था। हर्ष वर्धन के शासन काम के नागरिकों और इस काम के नागरिकों और राज्यों में बरती और आकाश का अस्तर था। इस कामे पर के युग में मध्य एशिया से हूख पुर्नर और अन्य लड़ाकू जातियों ने आकर उत्तर भारत पर अपना अधिकार कर लिया। इन पंचमी लोगों के आगमन से कुत्सेत्र का सामाजिक, राजनीतिक आर्थिक और धिशा-बीधा का हाँका हवा में तूल के समान उड़ गया।

भारतवर्ष में चारों ओर युद्ध ही युद्ध हो रहे थे। और अशांति और अमानक अराजकता का युग था वह। कला और संस्कृति के अंकुर आश्रितमय नावावरण में फूटते हैं रक्तसिंचित बरातक पर कला और संस्कृति के पुण्य मुरम्भ कर मूल जाते हैं। इसनिर्ण कुत्सेत्र का गौरव अिस कला और संस्कृति से था वह इस युग में प्राण छोड़ गया और अतने ऐसे प्राण छोड़े कि फिर लाशों प्रयत्न भी इसमें जीवन-संचार नहीं कर सके। कुत्सेत्र की उन्नति में मीर्म युद्ध और वर्धन राज्यों का बड़ा हाथ था और ऐसे प्रतापी सम्राटों का आशय फिर कभी अविष्य में कुत्सेत्र को नहीं मिला। पूरी एक अताबी तक युद्ध और वर्धन पंच के राज्यों की कृपा और आशय पर कुत्सेत्र का गौरव मुका होवा रहा। इसकी स्वाति इन काम में देश वैशान्त्यों में फैली और यहाँ हुए अनेकानेक यद्धों के पुण्य की मुकम्भ से सारा उत्तर भारत सुगन्धित हुआ। इन राज्यों के मिटने के साथ-साथ कला और साहित्य कुत्सेत्र से अरब के लिए बिदा हो गए।

## कुमारिल भट्ट और शंकराचार्य का आगमन

इस अराजक काम में ही कुत्सेत्र का आर्थिक महत्त्व कम नहीं हुआ। अताबी अताबी के आरम्भिक काम में कुमारिल भट्ट अिन्होंने मीमांसा-अर्थन का प्रचार देश भर में फैलाकर बौद्ध धर्म की अर्द्धों को भारतवर्ष से अबाड़ फेंका था देशादन करते हुए कश्चेत्र पत्रारे थे। एक अताबी पश्चात् नहीं अताबी में अण्य मुस्लागी शंकराचार्य की से भारत यात्रा वैशान्त-अर्थन के प्रचारार्थ की और अमरमाण जाते हुए वह भी कुत्सेत्र आए थे और प्रचलन दिया था। उस स्थान पर उनकी स्मृति में पापाण्य प्रतिमा स्थापित है।

## सुलतान महमूद गज़नवी और कुरूक्षेत्र

अठवीं अताबी के अन्तिम अरख में उत्तर भारत के वह छोटे-छोटे राज्य जो अण्य तक अिरेबी आक्रमणों से अण्यभिन्न थे मुसलमानों के अतपी-अरिचमी आठियों से होने जाते

घाक्रमणों से बचत छडे। १०१४ ईस्वी में सुलतान महमूद गजनवी ने कुबसेब प्रदेश के धार्मिक और पनवान मगर स्वानेश्वर पर घाक्रमण किया। सुलतान की आज्ञा से समस्त मन्दिरों और नगर को रात और दिन से जलाकर भूमिसात कर दिया। यह हुआचै स्त्री पुरुषों को पकड़ कर गजनी से गया और उन्हें दो-दो बरम में बेच दिया। मन्दिरों को जसने मसजिदों में परिवर्णन कर दिया। महमूद ने जो हानि स्वानेश्वर को पहुँचाई उसका वर्णन विस्तार से खरिस्ता और उल्बी ने किया है। घमदकनी को कि गणितार्थ, ज्योतिषशास्त्र में प्रवीण और विद्वान था महमूद के साथ भारत में आया था। घमदकनी ने स्वानेश्वर को धार्मिक केन्द्र कहा है। महमूद गजनवी ने भारत पर १७ घाक्रमण किए। उसके यह घाक्रमण कुबसेब प्रदेश के लिए अत्यन्त घातक और दमदूत के क्योंकि उसके धार्मिक घाक्रमण कुबसेब के नार्न से ही हुए, इसलिए कुबसेब प्रदेश को भारी हानि उठानी पड़ी। महमूद भारतीय संस्कृति का सबसे बड़ा घमू था।” स्वानेश्वर हिन्दुओं का काबा है।<sup>१</sup>

कुबसेब मदीत से ही ब्राह्मण धर्म का केन्द्र रहा है। ब्राह्मण धर्मशास्त्रों के कूकने और बनने से कुबसेब के इतिहास को बहुत सति पहुँची स्वानेश्वर की महमूद गजनवी के हाथों बरबादी की घटना मुहम्मद कासिम खरिस्ता इस प्रकार लिखता है—“४०२ हिजरी १०१४ ईस्वी में सुलतान महमूद के दिन में फिर बहाब (धर्ममुद) की सहर छठी। क्योंकि महमूद सुन हुआ था कि खानेश्वर हिन्दुओं का काबा है और वहाँ एक प्राचीन मन्दिर है जिसमें बहुत सी मूर्तियाँ रखी हुई हैं और बड़ी मूर्ति का नाम जगसोम है। इस बड़ी मूर्ति के विषय में हिन्दुओं का विश्वास है कि इसका अस्तित्व संसारोत्पत्ति के साथ साथ ही हुआ है इसलिए महमूद ने सक्म किया कि इस बार खानेश्वर पर घाक्रमण करे, जब इस घाक्रमण के लिए महमूद ने पंजाब में प्रवेष्ट किया तो केवम इस विचार से कि जो सभिय महमूद और धानम्पास के बीच हुई है उसका खंडन न हो। सुलतान ने एक बूत धानम्पास के पास भेजकर उस पर अपने विचार प्रयष्ट किया और कहसा भेजा कि सब की बार हमारा खंडन खानेश्वर पर घाक्रमण करने का है और क्योंकि पंजाब से खानेश्वर तक मान की सब कठिनाइयाँ दूर करनी हैं इसलिए तुम अपने कुछ बिरबसनीय धारवी हमारे साथ कर दो जिससे कि जो परतना (धाम) तुम्हारा हो वह हपाटी सेना के विष्वघ और नूटमार से बचा रहे।

धामम्पास ने इस आज्ञा को अपने धम की रखा का कारण धमम्कर सुलतान के धान-धान और धाठिध्व की समस्त सामग्री का प्रबन्ध धीमातिधीम कर दिया और अपने राज्य के ध्यापरियों और बनियों को आज्ञा दी कि पंजाब की, ठेम और प्रत्येक प्रकार की सुविधा की सामग्री सुबतानी पिविर में पहुँचा दी जाए और सुलतान की सेना को किसी प्रकार का कष्ट न होने पाए। राजा धामम्पास ने अपने धाई को एक प्राचीना-धम लेकर दो हजार धरबाओहियों के नैतृत्व में सुलतान की सेना में भेजा। प्राचीना-धम का सायंय यह था कि मैं हर प्रकार धानी आज्ञा बानने के लिए प्रस्तुत हूँ और धाका सभ्या सेबक हूँ परन्तु

१ खजुरस्थीय इतिहास लेखक डा० खजुरं स्त्री सेनु इप १० प्रलेख।

## हर्ष वर्धन के पश्चात् का कुरुक्षेत्र

सम्राट् हर्ष वर्धन के कोई पुत्र पैदा नहीं हुआ, अतः उसकी मृत्यु के पश्चात् भारतवर्ष पर एक बार फिर अन्धकार छा गया। कुशलेश प्रदेश पर इस अन्धकार का सर्वप्रथम प्रभाव पड़ा। कला साहित्य सम्पत्ता और संस्कृति अन्धकार में नहीं पसते। जब इस अन्धकार का कामा पर्व उठा तो भारतवर्ष का विश्व बिसकुस बरस गया था। बौद्ध धर्म बस रैसा छा बन चुका था। समस्त उत्तर भारत छोटे छोटे राज्यों में बंट गया था और इन राज्यों पर विभिन्न प्रकार के राजा राज्य करते थे। इन राजाओं और भारतवर्ष की परम्परा और संस्कृति का दूर का भी नाता नहीं था। हर्ष वर्धन के शासन काल के नागरिकों और इस काल के नागरिकों और राजाओं में बरती और आकाश का अन्तर था। इस कामे पर्व के युग में मध्य एशिया से कुछ दुर्बल और अन्य लड़ाकू जातियों ने आकर उत्तर भारत पर धरना अधिकार कर लिया। इन अंगरी लोगों के आगमन से कुरुक्षेत्र का सामाजिक राजनीतिक धार्मिक और शिक्षा-दीक्षा का बाँचा हुआ में कुछ के समान छड़ गया।

भारतवर्ष में चारों ओर युद्ध ही युद्ध हो रहे थे। जोर अशांति और धरनाक अराजकता का युग था वह। कला और संस्कृति के अक्षर अन्धकार का तावण में फूटे हैं एकविधित अराजक पर कला और संस्कृति के पुण्य मुरम्भ कर मूस जाते हैं। इतनाए कुरुक्षेत्र का औरत बिस कला और संस्कृति से था वह इस युग में प्राण छोड़ गया और उसने ऐसे प्राण छोड़े कि फिर साबों प्रयत्न भी इसमें जीवन-अन्तार नहीं कर सके। कुरुक्षेत्र की अन्धता में मीर्य बुस और वर्धन राजाओं का बड़ा हाव था और ऐसे प्रतापी सम्राटों का धारम्य फिर कमी अविष्य में कुरुक्षेत्र को नहीं मिला। पूरी एक अराजकी तक गुत और वर्धन बरष के राजाओं की कृपा और धारम्य पर कुरुक्षेत्र का औरत युवा होता रहा। इसकी क्याति इ-उ काल में वेध देखातरों में फैली और यहाँ हुए अनेकानेक पत्रों के पुए की गुण्य से सारा उत्तर भारत सुगन्धित हुआ। इन राज्यों के मितने के साव-साव कला और साहित्य कुरुक्षेत्र से सर्वत्र के लिए बिना हो गए।

## कुमारिल मठ और शकराचार्य का आगमन

इस अराजक काल में भी कुरुक्षेत्र का धार्मिक महत्त्व कम नहीं हुआ। अराजकी के धारमिक काल में कुमारिल मठ अिन्होंने मीमांसा-वर्धन का प्रचार वेस अर में फैलाकर बौद्ध धर्म की अड़ों को भारतवर्ष से उखाड़ फेंका था वेराटन करते हुए कुरुक्षेत्र पचारे थे। एक अराजकी पश्चात् नहीं अराजकी में अगद् पुस्तकामी अकराचार्य भी ने भारत याबा वेदान्त-दर्शन के प्रचारार्थ की और धरनावाच जाते हुए वह भी कुरुक्षेत्र प्राए थे और प्रवचन दिया था। उस स्थान पर उनकी स्मृति में पापाण-प्रतिमा स्थापित है।

## सुलतान महमूद गज़नवी और कुरुक्षेत्र

इसकी अराजकी के अन्तिम अरण में उत्तर भारत के वह छोटे-छोटे राज्य जो अर तक बिदेसी आक्रमणों से अनाजिद थे मुसलमानों के उत्तरी-अरिचमी आिर्षों से होने वाले

शाक्यगणों से घबरा उठे। १०१४ ईस्वी में सुमरान महामुद्र यज्ञनी ने कुदोज प्रदेस के धार्मिक धीर यज्ञनी नगर स्मारेस्वर पर शाक्यगण किया। सुमरान की आज्ञा से समस्त मन्दिरों धीर नगर को रात धीर राति से जलाकर भूमिगत कर दिया। यह हजारों स्त्री पुस्तों को पकड़ कर यज्ञनी ने बसा धीर उन्हें दो-दो दरम में बेच दिया। मन्दिरों को जसने मखजिरी में परिणत कर दिया। महामुद्र ने जो हाति स्मारेस्वर को पहुँचाई उसका बर्णन विस्तार से करिस्ता धीर उन्ही ने किया है। प्रजबस्नी को कि पण्डिताभाय, ज्योतिषशास्त्र में प्रवीण धीर विद्वान या महामुद्र के साथ भारत में पाया था। प्रजबस्नी ने स्मारेस्वर को धार्मिक केन्द्र कहा है। महामुद्र यज्ञनी ने माण्ड पर १७ शाक्यगण किए। उसके यह शाक्यगण कुदोज प्रदेस के लिए अत्यन्त पाठक धीर समदुष्ट थे, क्योंकि उसके अधिकार शाक्यगण कुदोज के मार्ग से ही हुए, इसलिए कुदोज प्रदेस को भारी हाति उठानी पड़ी। महामुद्र भारतीय संस्कृति का सबसे बड़ा घानू था।<sup>१</sup> स्थानिस्वर हिन्दुओं का काबा है।<sup>१</sup>

कुदोज धर्मीय से ही आहारण बम का केन्द्र रहा है। आहारण बमगारणों के पुँरने धीर बनने से कुदोज के इतिहास की बहुत क्षति पहुँची स्मारेस्वर की महामुद्र यज्ञनी के हाथों बरजाती की घटना मुहम्मद कासिम करिस्ता इस प्रकार लिखता है— '४०२ हिजरी १०१४ ईस्वी में सुमरान महामुद्र के दिन में फिर आहार (बर्षकुद) की सहर उठी। क्योंकि महामुद्र सुन हुआ था कि बानेसर हिन्दुओं का काबा है धीर वही एक प्राचीन मन्दिर है जिसमें बहुत सी मूर्तियाँ रखी हुई हैं धीर बड़ी मूर्ति का नाम अणसोम है। इस बड़ी मूर्ति के विषय में हिन्दुओं का विस्वास है कि इसका अस्तित्व संसारोत्पत्ति के साथ साथ ही हुआ है इसलिए महामुद्र ने संकल्प किया कि इस बार बानेसर पर शाक्यगण करे। जब इस शाक्यगण के लिए महामुद्र ने पंजाब में प्रवेस किया तो केवल इस विचार से कि जो सभी महामुद्र धीर मानन्वपास के बीच हुई है उसका अन्त न हो। सुमरान ने एक बूत मानन्वपास के पास भेजकर उस पर अपना विचार प्रवृत्त किया धीर कहसा भेजा कि भव की बार हमारा संकल्प बानेसर पर शाक्यगण करने का है धीर क्योंकि पंजाब से बानेसर तक मार्ग की सब कठिनाइयाँ दूर करनी हैं इसलिए तुम अपने कुछ विश्वसनीय घाघमी हमारे साथ कर दो जिससे कि जो परतका (शाम) तुम्हारा हो वह हमारी सेवा के विध्वंस धीर सुदमार के बचा रहे।

मानन्वपास ने इस आज्ञा को अपने मन की सेवा का कारण समझकर सुमरान के आज्ञान-मान धीर धार्मिक की समस्त सामग्री का प्रवृत्त धीरधार्मिक कर दिया धीर अपने राज्य के व्यापारियों धीर बतियों को आज्ञा दी कि अज्ञान भी तैस धीर प्रत्येक प्रकार की सुविधा की सामग्री सुमरानी विद्विर में पहुँचा दी जाए धीर सुमरान की सेवा को किसी प्रकार का कष्ट न होने जाए। राजा मानन्वपास ने अपने माई को एक प्रार्थना-पत्र देकर दो हजार परमारोहियों के नेतृत्व में सुमरान की सेवा में भेजा। प्रार्थना-पत्र पर सार्वभ्य यह था कि मैं हर प्रकार आपकी आज्ञा मानने के लिए प्रस्तुत हूँ धीर भारतका अन्त लेवक हूँ परन्तु

१. प्रजबस्नीय इतिहास लेखक का० परतदे की० सेतु कृष्ण १३ प्रीति।



इस सेवकाई धीर धड़ा कि मरोसे जो मुझे सुसतान से है यह प्रार्थना करने का साहस करता है कि बानेसर का मन्दिर बहुत पूजनीय है, यह सत्य है कि प्रायः हम में मूर्तियाँ तोड़ना पापों से छुटकारा पाने का साधन और दुःखकर है परन्तु यह बात तो किता तपर कोट की मूर्ति तोड़ने से प्रायः प्राप्त हो गई है। बानेसर के मन्दिर के विषय में मेरी यह प्रार्थना है कि यदि प्रायः इसके विध्वंस की अपेक्षा कोई बहुरायी धन से भरे और बानेसर की जनता को बापिक करवाता बनाकर अपने बैस मोट जाने की कृपा करें तो प्रायः यह सेवक इस प्रार्थना के मानने के फलस्वरूप धन्यवाद सहित प्रतिषेध पचास हाथी और अन्य बहुसूक्ष्म अंत सुसतान की सेवा में भेजता रहेगा।

सुसतान ने उत्तर दिया कि हम मुसलमानों का यह घट्ट बिस्वास है कि ईसाय धर्म को फेंकाने और हिन्दुओं के मन्दिरों को गिराने में हम यहाँ जितना प्रयत्न करेंगे उतना ही परमेश्वर में हमें उरफा पुष्प मिलेगा। जब हमारा संकल्प मही है कि हम मूर्तिपूजा हिन्दुस्तान से मिटा दें तो यह कैसे सम्भव है कि हम बानेसर जैसे मूर्तिपूजा के केन्द्र महान को बरबाद न करें और मन्दिरों को तोड़ने का सुविचार छोड़ दें। जब राजा देहली ने यह समाचार सुना तो वह भी अपनी पूरी शक्ति सहित मुसलमानों का सामना करने को तैयार हुआ और हिन्दुस्तान के कोने कोने में वीरमतिशील यह समाचार फैलाया कि महमूद गजनवी परमेश्वर सेना लेकर मेरे राज्य के प्रसिद्ध मन्दिर पर आक्रमण करने जाता है। यदि हम पहले से ही इस मयानक बाढ़ को रोकने का प्रयत्न नहीं करेंगे तो यह विपत्ति देश के प्रत्येक कोने में फैलकर छोटे और बड़े सबको बरबाद कर लेगी। मेरी यह सम्मति है कि हम सब मिल जुम कर इस संकट को दूर करें। परन्तु इससे प्रथम कि हिन्दुओं की सेनाएं एक स्थान पर एकत्रित हों सुसतान महमूद बानेसर पहुँच गया। तमर को धरक्षित देखकर मुसलमानों ने दिन सोमकर सुटमार, बरबादी और विध्वंस किया। महमूद ने समस्त मूर्तियों को तोड़ जाला और बड़ी मूर्ति बगलम को गजनी भेज दिया और आज्ञा दी कि यह मूर्ति जनपद पर रख दी जाए जिससे कि पत्तने वालों के पाँवों के नीचे पिसकर बिलकुल धूल बन जाए। इतिहासकार कंधारि के कथनानुसार बानेसर के एक मन्दिर से एक टुकड़ा बाब पादुत का भी महमूद के हाथ गया जिसका बज्र साढ़े चार सौ मिसकाल था। इतिहासकार लिखते हैं कि इस प्रकार का जबाहर आज दिन तक देखने अपेक्षा सुनने में नहीं आया। इस विषय के पश्चात् महमूद ने इरादा किया कि देहली को भी विजय कर लिया जाए। परन्तु मंत्रियों ने प्राचना की कि देहली पर उस समय तक विजय प्राप्त नहीं हो सकती जब तक कि समस्त पंजाब मुसलमानों के अधिकार में नहीं आ जाता और धानखपास की ओर से कोई धम सेप न रहे। महमूद ने मंत्रियों के परामर्श को मानकर देहली के विजय करने का विचार छोड़ दिया और गजनी वापिस आया गया। महमूद लजजत हो लाख भारतीय स्त्री और पुरुषों को दास बनाकर अपने साथ ले गया। इतिहासकार लिखते हैं कि इन भारतीय दासों की बहु संख्या से बहाँ इतनी हिन्दुस्तानी घड़नों दिखाई देती थीं कि उस वर्ष गजनी भी हिन्दुस्तान का एक नगर समझा जाता था। सुसतानी सेना का प्रत्येक सैनिक कई-कई स्त्रियों और पुरुष दासों का स्वामी हो गया।<sup>१</sup>

प्रोफ़सर डी० सी० गगोबी के अनुसार महमूद गजनवी ने इस कारण बानेसर पर आक्रमण किया कि उसे यह सूचना मिली थी कि बानेसर में संका की तरफ के हाथी हैं जो सैनिक महमूद के लिए लाभदायक हैं। महमूद अपनी बानेसर आक्रमण यात्रा के बीच एक नदी पर पहुँचा जहाँ केरा के राजाचम ने उसका सामना किया। राजाचम भी भागिक मपर बानेसर को बरबादी से बचाना चाहता था। कुछ सोंवों का यह मत है कि घतमुन नदी पर राजाचम ने महमूद से मुठभेड़ की थी। नदी का बहाव घाटियों के बीच बहुत ठेक था। नदी के किनारे ठेकवाँ और ठसा परपों से भरा हुआ था। राजाचम अपने हाथियों बुझसवारों और पैदल सैनिकों के साथ नदी के पास मोर्चा लगा कर युद्ध के लिए तैयार हो गया। सुनतान की कमान के नीचे मुसलमानों की दो सैनिक टुकड़ियों ने नदी पार की और चतु पर दोनों ओर से आक्रमण कर दिया। जब युद्ध गर्म था तो महमूद की तीसरी सैनिक टुकड़ी ने बहाव की ओर घाये बढ़ कर नदी को पार किया और चतुर्थों पर दूट पड़े। आर्यक्रान्त तक पोर युद्ध पतता रहा अन्ततः हिन्दू राजाओं को छोड़कर माय निकने और उनके हाथी मैदान में रू मए। इस विजय के परचात् महमूद बानेसर की ओर प्रसर हुआ।<sup>१</sup>

जल्दी ने महमूद के बानेसर पर आक्रमण का विवरण बहुत प्रसूय दिया है। महमूद के नन्वोना पर आक्रमण के परचात् जो कि ५०५ हिजरी १०११ ईस्वी में हुआ बानेसर के आक्रमण का विवरण जल्दी ने किया। ईबतुन अठहर महमूद के बानेसर पर किए गए आक्रमण को ५०३ हिजरी १०१४ ईस्वी में लिखता है। परन्तु पारसिजी को जली समय का इतिहासकार था बानेसर के आक्रमण को ५०२ हिजरी १०११ ईस्वी में हुआ कहता है। गारसिज के अनुसार बानेसर पर महमूद का आक्रमण नन्वोना के आक्रमण से तीन वर्ष पहले हुआ। इस बात का समर्थन करिस्ता और गजामुदीन अहमद भी करते हैं। परन्तु ईसीयट डम्बू० हेप और एम० नाबीम यह तीन इतिहासकार जल्दी के विवरण को ठीक बताते हैं। डम्बू० हेप का कथन है कि घस जल्दी के बानेसर पर महमूद के आक्रमण के विवरण में कुछ त्रुटि प्रकथन है। ऐसा जान पड़ता है कि घस जल्दी ने किसी और स्थान पर किए गए आक्रमण को बानेसर के आक्रमण से मिसा दिया है। घस जल्दी के जमाने हुए मन का इस बात से भी पता चलता है कि वह अपने विवरण को अन्ततः उस समय समाप्त कर देता है जब बानेसर के आक्रमण से पहले मार्ग में महमूद का राजा चम से युद्ध हुआ। अतः बानेसर पर महमूद के आक्रमण की जो तिथि पारसिजी करिस्ता और गजामुदीन अहमद ने दी है वह ही सर्वमाननीय है।

५०३ हिजरी १०१३ ईस्वी में बेहली और संयस्त हिन्दुस्तान के हिन्दू राजाओं के संयोजन करके बानेसर पर फिर आधिकार कर मिया। उन्होंने महमूद के लड़के माहूर हाथ निरुक्त बानेसर के पवर्नर और गजनी के मुख्यमान सैनिकों को नमर से बाहर निकाल दिया। बेहली का तोमर राजा इस सैनिक संघठन का नेता था। राजा परमार

१ डी० सी० गगोबी, पन् ५ वी-बन् ३०, सेडेही मिस्टेरिफ मैमोरिबल हाथ, कलकत्ता, सूकन कोर हाथ, बरीधिय बार् एयर० सी० मन्वरा, पृ० १०।

भोज कमाकुटी कर्ण और बाबा माना घनाहिमा भी इस संगठन में सम्मिलित थे। हिन्दुओं ने बागेश्वर नगर को फिर मूर्ति-पूजा का तीर्थ बनाया और नगर में स्नान-स्नान पर मूर्तियाँ स्थापित करके मूर्ति-पूजा प्रारम्भ कर दी।”<sup>१</sup>

## पृथ्वीराज चौहान, मुहम्मद गौरी और कुरुक्षेत्र

सरस्वती नदी दिल्ली राज्य की सीमा बन गई और कुरुक्षेत्र प्रदेश दिल्ली राज्य का सीमावर्ती प्रांत बन गया। ११११ ईस्वी में कुरुक्षेत्र प्रदेश दिल्ली के राजा धनंजयास चौहान के अधीन हो गया। सरस्वती नदी के उत्तर का पंजाब प्रांत भिन्न-भिन्न मुसलमान नवमंत्रों के अधीन था। इतिहास में सीमावर्ती प्रदेश सर्वत्र अधान्ति का प्रदेश होता है और क्योंकि कुरुक्षेत्र न केवल दिल्ली राज्य की सीमा पर था, बल्कि स्वयं सीमा था इसलिए यहाँ कमा संस्कृति और नर्म का विकास होना असम्भव हो गया। राजा धनंजयास के कोई पुत्र न होने के कारण उनकी मृत्यु के पश्चात् दिल्ली का राज्य अंगर और धनमेर के चौहानों के हाथ आया। प्रसिद्ध पृथ्वीराज चौहान जिसे कि इतिहासकार राए विचोरा भी कहते हैं राजा धनंजयास का बौद्धिक भा जो धनंजयास के पश्चात् दिल्लीपति हुआ। पृथ्वीराज चौहान के शासनकाल में कुरुक्षेत्र में शांति रही। दलकषाधों के धनुषार मुहम्मद गोरी ने दिल्ली राज्य पर घनेक बार आक्रमण किए, परन्तु प्रत्येक बार हिन्दू राजाधों ने पृथ्वीराज के सेनापतित्व में कुरुक्षेत्र प्रदेश में सरस्वती तट पर मुहम्मद गोरी को पराजित किया।

१२०७ हिजरी ११११ ईस्वी में सहाबुद्दीन मुहम्मद गोरी ने बढ़िके पर आक्रमण करके उसे धनमेर के राजा से छीन लिया और वहाँ का राज्य सत्तक सहाबुद्दीन टोंकी के संरक्षण में छोड़कर जामीन हब्दार मुसलमान सैनिकों के साथ वापिस गोर जाने के लिए तैयार हुआ। जमीन उसने छोड़े की रक्षा में पाँव ही रखा था कि उसे सूचना मिली कि राय विचोरा (पृथ्वीराज) अपने भाई दिल्ली के राजा बाबेरए से मिल गया है और इन दोनों ने हिन्दुस्तान के अन्य हिन्दू राजाधों को भी अपने साथ सम्मिल कर लिया है कि मुहम्मद गोरी का सामना किया जाए। सब हिन्दू राजाधों को साथ लेकर विचोरा और बाबेरए को साथ बुद्धकारों और तीन सौ हाथियों की सारी सेना के साथ बढ़िके के किले पर प्रविष्ट करके के लिए पा रहे हैं। यह सूचना मिलने पर मुहम्मद गोरी ने अपने जान का इत्तहा छोड़ दिया और सेना लेकर विचोरा से लड़ने के लिए भागे बढ़ा। सरस्वती नदी के तट पर सरायन नाम के स्थान पर जो आजकल के सदाबद्धी नगर के पास-पास ही कहीं था दिल्ली से जामीन मीन के पत्थर पर दोनों सेनाधों में मुठभेड़ हुई। जब कुछ नर्म होकर अपनी पश्चात्पथ पर पहुँचा तो हिन्दू सेना के आक्रमण के खोर के भागे मुसलमान सैनिकों के पाँव सडक गये। सहाबुद्दीन की सेना के बाएँ और बाएँ बाजू समाप्त हो गए, केवल बीच में कुछ सैनिक बचे रह गए। मुसलमान सैनिकों की मस्त-मस्त बच्चा

देखकर सहायुद्दीन के एक धर्मोत्तर ने उससे कहा कि हमारी सेना के पाँच घोर बाए बाहु त्रिसमें तीर के सैनिक ५ घबराकर मुझ स्थल से भाग गए हैं। इराकन की सहायनी घोर सैनिकी सेना जो सर्वत्र विजय प्राप्त करती थीं रक्षापन में पाँच नहीं जमा पा रही हैं। मेरी सम्मति में सभाट भी अब मुझ-भूमि से किनाया करके साहोर की घोर दूध करें। सहायुद्दीन को इस धर्मोत्तर की राय पसन्द नहीं आई और उसने हिम्मत से काम लिया। बीच के सैनिकों को साथ लेकर सहायुद्दीन ने जोरदार आक्रमण किया। इस मुठ में सहायुद्दीन ऐसी हिम्मत दिखाता रहा कि निज घोर धनु बोलों उतकी प्रशंसा कर रहे थे। सहायुद्दीन मुठ में बलम्ब हुआ ही था कि अचानक दिल्ली के राजा जालंधर की हठि उस पर पड़ी। जालंधर ने अपना हाथी सहायुद्दीन की घोर बढ़ाया। सहायुद्दीन ने भी अपना नेजा (मात्ता) संभाला और जालंधर की घोर भयटा। जालंधर के हाथी के निकट पहुँचकर सहायुद्दीन ने पूरी शक्ति से हाथी के मुँह पर चोट लगाई। मात्ता हाथी के मुँह में घुस गया और चोट से हाथी के शीश टूट गए। जालंधर ने पूरे साहस से काम लिया और हाथी पर बैठे ही बैठे सहायुद्दीन के बाहु पर तमवार का भरपूर हार मारकर भाग कर दिया। इस मान से सहायुद्दीन चकरा गया और अनेक होकर मोड़ों से गिरने ही लगा था कि एक सैनिकी सैनिक बाघदाह की मूँ दया देखकर उसके मोड़ों के पीछे बैठ गया और सहायुद्दीन को अपनी कोद में बिठाकर मुझ-स्थल से भागा। सैनिक सहायुद्दीन को लेकर भागता हुआ उन भाग्य हुए मुसलमान सैनिकों के पास गया जो मुझ भूमि से भागकर बीच दौड़ पर डेरा डाले पड़े थे। सेना में पचानव घोर बाघदाह की टैरुहाबिरी से जो कोसाहस तथा हुमा या बहु कथ हो गया। सहायुद्दीन ने हिन्युस्तान का राज्य अपने निरबसनीय धर्मोत्तरों को सौंपा और स्वयं तीर चला गया।”

वेन अस्तमातर में सहायुद्दीन के मुझ भूमि से बीबित बच निकलने की घटना इस प्रकार लिखी है कि “जालंधर के हाथ से भाग्य होकर सहायुद्दीन पृथ्वी पर गिरा। क्योंकि हिन्दू सैनिक सहायुद्दीन को मनी प्रकार नहीं पहचानते थे इसलिए बीरिस्तान का घेर मुझ-स्थल पर दिन भर चामक पड़ा रहा और किसी ने उसकी घोर ध्यान नहीं किया। जब नूर्यास हो गया तो बोड़ी रात व्यतीत हो जाने पर सहायुद्दीन के मुस्ताम रक्षापण में अपने स्वामी को बुँदते हुए उस स्थान से निकले बाहुँ और तरेय भाग्य पड़ा था। उस समय सहायुद्दीन को कुछ होय था गया था। गुमानों की भावाय पहचान कर उठने उनको अपने पास बुलाया और अपने बचा उनसे कही। धुबिचिस्तक गुमान अपने स्वामी के बच जाने से बहुत प्रसन्न हुए और सहायुद्दीन को अपने कंधों पर चठाकर भाग्य हुए मुसलमान सैनिकों की घोर चले। मुस्ताम कंधे बसते हुए चले जा रहे थे और चामक सहायुद्दीन उनके कंधों पर सवार था। इस भाषा में समस्त रात बीत गई और प्रातः बाघदाह अपने भाग्य हुए सैनिकों से जा मिला।”

“दूसरे ही वर्ष एक लाख साठ हजार मुर्की सैनिकी घोर सहायुद्दीन की बड़ी

१. काठिनै-करीला पृ० २१० से २१२ तक प्रकथ किये।

२. वेन अस्तमातर काठिनै-करीला पृष्ठ २१२ प्रकथ किये।

सेना लेकर सहायुद्गीन हिन्दुस्तान की घोर जमा। पिबोय तीन सास राजपूतों की सेना लेकर सहायुद्गीन का धामना करने के लिए जाने बढ़ा। ३८८ हिजरी ११६२ ईस्वी में दोनों सेनाएँ सरस्वती नदी के किनारे घणघन के युद्ध-क्षेत्र में पहुँच गईं। सहायुद्गीन का मुकाबला होने ही १५० राजपूत राजाओं ने बीरता का ठिसक अपने मस्तक पर बढ़ाया और सभू के मुकाबले में साहस से कार्य सने और मुघलसामानों की बरबाद करने की घणघ उठाई। इन हिन्दू राजाओं ने मापस में मह प्रतिष्ठा की कि जब तक सभू को पराजित नहीं कर देंगे तब तक उसकारें म्यान में नहीं डालेंगे। क्योंकि हिन्दू सेना एक बार निजय प्राप्त कर चुकी थी इसलिए उनके होसले बढ़े हुए थे। सगहोंने एक सम्येस सहायुद्गीन के पास सेवा शिषमें लिखा था कि हम हिन्दू राजाओं की धनयिनत सेना का समाचार तो तुम्हें ज्ञात ही होगा। शिषती सेना इस समय हमारे पास है वह ही सभू को बरबाद करने के लिए पर्याप्त है परन्तु इस पर भी नई सेनाएँ प्रतिदिन या रही हैं जिनके प्राबमन से युद्धक्षेत्र काय रहा है। अतः यदि तुम्हें अपने प्राण प्यारे नहीं हैं तो ग सहीती अपने घटीय संशिकों पर, क्या करो। हमने अपने इष्ट देवताओं के सम्मुख प्रतीक्षा की है कि यदि तुम अपने विचारों पर सोच प्रबट करके बापिस और लौट जाओ तो हम तुम्हारे मार्ग में बाधा नहीं डालेंगे। हम तुम पर क्या करके तुम्हें अपने बैस बापिस जाने जाने की सम्मति देते हैं। नहीं तो स्मरण रखो कि कस प्राण-पीन ह्जार हाथियों और घसक्य सेना के साथ हम युद्ध-क्षेत्र को प्रसम क्षेत्र बना देंगे और तुम्हें पराजित होकर घणघान सहित युद्ध भूमि से भागना पड़गा। सहायुद्गीन ने हिन्दू राजाओं का पत्र पढ़कर उत्तर में उन्हें लिखा कि मुझे पूर्ण विश्वास है कि भापका पत्र सगहनभूति और प्रेम से भरा हुआ है। मैं यह पत्र पढ़कर बापिस और लौट जाने की तैयार हो जाता परन्तु मुझे विवसता यह है कि मैं अपने भाई का दास हूँ और उसकी ही आज्ञा से मैंने यह आक्रमण किया है। इसलिए यदि मुझे भाप इतना पत्र कास है कि मैं किसी निस्वसनीय हूत को अपने भाई के पास भेजकर भापकी शक्ति और अपनी कमबोरी का पूरा विवरण उस तक पहुँचा सभू तो मुझे विवसाव है कि इस बात पर हमारी सम्धि हो जाएगी कि सरहिन्द पंजाब और मुसतान पर यीपी का अधिकार रहे और सेप हिन्दुस्तानी नगर भापके अधिकार में छोड़ दिए जाएँगे। हिन्दू राजा सहायुद्गीन के उत्तर को इस्लामी सेना की दुर्बलता समझकर और अपनी शक्ति की मस्ती व भावकता में डूबकर नाशिल हो गये। जब सहायुद्गीन ने समझ लिखा कि हिन्दू राजा बाशिल और मीज में म्यस्त हैं तो उसने रात ही रात में अपनी सेना युद्धार्थ तैयार कर ली और प्राठ ही जब राजपूत सैनिक लौच इत्यादि के लिए बेमों से बाहर निकले तो सहायुद्गीन ने रणक्षेत्र में पहुँच कर सेना छोड़ी कर दी।

हिन्दू राजा इस पञ्चालक संकट से बहुत परेशान हुए, परन्तु शिष प्रकार भी उनके सम्भव हुआ बस्वी-बस्वी तैयार होकर युद्धक्षेत्र में भा डटे। सहायुद्गीन को हिन्दुओं की बीरता ज्ञात थी। उसने अपनी सेना को चार भागों में बाँटा और सब को आज्ञा दी कि जब हिन्दुओं के हाथी और पैदल सेना मुघलसामानों पर आक्रमण करें तो वे युद्ध से विमुख होकर भागने का प्रयत्न करें। इस मुक्ति से जब हिन्दू सैनिक पीछा करते हुए अपनी पीमा

ये बाहर या जायें तो यथामक पसट कर हिन्दुओं पर जोरदार धाकमण कर दें। सहायुरीन की सेना ने उसकी धामानुसार प्रातः से तीसरे पहर तक बमकर मुठ किया जब फिर लोड़ प्रयत्न करने पर भी हिन्दुओं के पाँव मुठस्थल से नहीं उखड़ घोर सहायुरीन ने देखा कि निन अर्ध काठा है तो उसल भगवान् पर भरोसा करके बाएँ हुआर सैनिकों के साथ सन्धु पर धाकमण किया। सहायुरीन घोर उसके अरमेत इत्यादि क्षमीरों क सगादार धाकमणों से सन्धु के पाँव रखावण से उखड़ने लये घोर हिन्दू सेना विठर बिठर होने लगी। देखते ही देखते बाब्येराय घोर धम्य राजपूठ ललवारों की सेंट हो गए। पिषीय अपनी धण सेना सेकर भागा, परसु बोड़ी दूर ही या पाया था कि सरस्वती नदी के किनारे सन्धु के हाथों पकड़ा गया। सहायुरीन ने राजा पिषीय को मार दिया।”<sup>१</sup>

उस समय के दूसरे लेखकों—आमुस हिकामत टारुसस मासिर, लककाते नासरी प्रबन्ध चिन्तामणि, हुमीर महाकाम्य घोर लककाते अरबदी ने भी बोड़-बहुत परिवर्तन सहित इस मुठ का यही बर्लन किया है। प्रबन्ध चिन्तामणि में लिखा है कि—“पृष्ठीराज चौहान का सेनापति स्कन्द बिलने कि ११११ ईस्वी के मुठ में सहायुरीन को पराजित किया था, कहीं घोर स्थान पर व्यस्त हुन के कारण दूसरे अन्तिम मुठ में सम्मिश्र नहीं हो सका था। पृष्ठीराज का एक घोर सेनापति जयराज भी राजधानी में रहने के कारण मुठ में सम्मिश्र नहीं था। जब पृष्ठीराज सेनाएँ सेकर सहायुरीन का सामना करने के लिए सरस्वती तट की घोर बड़ रहा था तो पिषीय के मनी सोमेदर ने पृष्ठीराज को पराजित किया घोर प्रयत्न किया कि बह मुठ करके न जाए। सोमेदर क इस परामस से पृष्ठीराज को सन्देह हुआ कि सोमेदर सम्भवतः मुसलमानों से निभ गया है। पृष्ठीराज ने कोष में आकर सोमेदर के नाम बटवा देके की बाबा की घोर काब कट जाने के पदबाए उठे अपनी सेना से निकाल दिया। रणामण में जब दोनों सेनाएँ एक दूसरे के सम्मुख मुठ की प्रतीया में पड़ी हुई थीं तो पृष्ठीराज मुठ की लँयाँ की अपेधा रण रंग में हुआ रहा था।”<sup>२</sup>

इस प्रकार अन्तिम हिन्दू लल्लाद् पृष्ठीराज चौहान की मृत्यु के पदबाद् कुबलक प्रदेश पर से हिन्दुओं का राज्य उठ गया घोर यह पुष्य प्रदेश मुसलमानों के अधीन हो गया। स्वभावतः मुसलमानों का न तो कुबलक में बिस्वास था घोर न ही तीर्थ-स्थानों में उनकी किसी प्रकार की अड्डा धमका आस्था थी। कुबलक के दुर्गिनों का भीमणोस हो गया घोर यह भूवा हुआ उपेणित प्रदेश बन गया।

१. टारुस-अरिस्तो इण्ड ११५ से ११७ तक, अकम किल्ल ।

२. अकम किल्लाकिय ।

## यवन और कुरुक्षेत्र

### बात बदा के समय कुरुक्षेत्र

बात बदा के सम्राट अस्तमय के शासन-काल में ताबुदीन यमदोज ने बानेसर पर आक्रमण किया। ६१२ हिजरी में ताबुदीन यमदोज ने आक्रमण करके पंजाब और बानेसर पर अधिकार कर लिया। हिन्दुस्तान के इस सीमांत प्रदेश पर अधिकार कर लेने के पश्चात् यमदोज ने अपने बूत सम्राट अस्तमय के पास भेजे। अस्तमय यमदोज के खलेस से कोष में भा गया और चीफ़ सेना लेकर बानेसर की ओर बढ़ा सरस्वती नदी के किनारे दोनों सेनाओं में युद्ध हुआ। अर्धरु रज्ज्यात के पश्चात् यमदोज की पराजय हुई। १ सम्राट अस्तमय की मृत्यु के पश्चात् उसकी पुत्री रजिया सुलताना दिल्ली के राज्य सिंहासन पर बैठी। परन्तु बानेसर में रजिया सुलताना का युद्ध उसके भाई बहुराम साह के साथ हुआ। ६१७ हिजरी १२१९ ईस्वी में बानेसर के निकट बहुराम साह की सेना के सेनापति अबाजददीन और रजिया सुलताना और अस्तोनिया की सेनाओं में युद्ध हुआ। इस युद्ध में बहुराम विजित हुआ। रजिया सुलताना खानाबदल से भाग निकली। जानकी हुई रजिया और अस्तोनिया को बगीचों में पकड़कर मार दिया।”<sup>१</sup>

### तुगलक बदा और कुरुक्षेत्र

तुगलक बदा के राज्य-काल में भी कुरुक्षेत्र प्रदेश ऐतिहासिक घटनाओं का केन्द्र रहा। “७८१ हिजरी में सम्राट अलीउद्दौला तुगलक समाने से सीटठा हुआ अम्बाला और साहवाब होकर बानेसर आया। वह कुछ दिनों बानेसर ठहरा और उसके पश्चात् छाहलपुर आया गया।”<sup>२</sup> कदाचित्त ई फि विपत्ति कभी अनेकी नहीं आती। ११९८ ईस्वी में मध्य एशिया का खूबार और अमानक सरदार तैमूर लंग दिल्ली पर आक्रमण करने आते हुए कुरुक्षेत्र प्रदेश से गुजरता। वह बानेसर का समस्त नौरत और अभिमान धूल में मिला गया और वहाँ की एही-सही सस्कृति भी गूँथ हो गई।

१ अलीउद्दौला ११७७ प्रथम भाग। २ अलीउद्दौला ११९० प्रथम भाग। ३ अलीउद्दौला ११९५ भाग १८८।

## सोधी वरा में कुस्सेज

सुस्तान शिकन्दर सोधी के राज्य-काल में कुस्सेज ने कुछ सभामा से लिया था । एक बार सुपे-गहूण के पर्व पर शिकन्दर सोधी ने यात्रियों की सूटने धीर मारने की योजना बनाई थी ।<sup>१</sup>

“एक बार उसने (शिकन्दर सोधी ने) कुस्सेज पर आक्रमण करना निश्चित किया । इस विषय पर प्राणियों का मत ज्ञात करने के लिए उसने उन्हें एकत्र किया । उस युग के सबसे बड़े प्राणित मिर्मा धनुस्साह भोजोगी भी उपस्थित थे । सभी ने उनकी धीर संकेत किया कि इनकी उपस्थिति में हम कुछ भी नहीं कह सकते । मिर्मा विजाम (शिकन्दर सोधी) ने मिर्मा धनुस्साह से इस विषय में । पूछा उन्होंने पूछा वही क्या होता है । सुस्तान ने कहा कि उस स्थान पर प्रत्येक प्रदेश से हिन्दू एकत्र होकर स्नान करते हैं । मिर्मा धनुस्साह ने पूछा कि यह प्रथा कम से कम खरी है । सुस्तान ने कहा कि यह बड़ी प्राचीन प्रथा है । मिर्मा धनुस्साह ने पूछा कि आपके पूर्व मुसलमान बापसाहों ने इस सम्बन्ध में क्या किया । सुस्तान ने कहा कि इसके पूर्व किसी बापसाह ने कुछ भी नहीं किया । मुस्सा ने कहा कि इसका उत्तरदायित्व उन लोगों पर है । प्राचीन मन्दिर को नष्ट करना उचित नहीं । सुस्तान ने बड़ होकर कटार निकाल ली और कहा कि सर्व प्रथम मैं तुम्हारी हत्या करूँगा तबपराप्त वहाँ आक्रमण करूँगा । मिर्मा धनुस्साह ने कहा कि सभी के लिए नरना धर्मिबाध है । बिना ईश्वर के धारण के कोई भी नहीं मरता । जब भी व्यक्ति किसी धारणाचारी के पास जाता है तो अपने लिए मृत्यु निश्चित करके जाता है । जो कुछ होना है वह होगा, किन्तु अपने मुझसे कृपण के विषय में प्रश्न किया तो मैंने उसका उत्तर दिया कि धारण को कुरान की विन्ता नहीं है तो पूछने की कोई धारणयकता नहीं । सुस्तान ने अपने क्रोध को रोका धीर कहा कि यदि धनुस्साह प्रदान कर देते तो कई हजार हिन्दुओं को नरक पहुँचा देता धीर अधिकांश मुसलमान उससे सामान्य होते । मिर्मा धनुस्साह ने कहा कि मुझे जो कुछ कहना था मैंने कह दिया अब आप जानें । वह बरबार से उठ खड़ा हुआ । अन्य प्राणित भी उससे साथ चल दिने । सुस्तान ने किसी धीर ध्यान न दिया धीर कहा मिर्मा धनुस्साह आप कभी-कभी मुझसे भेंट करते रहें ।”

उसकायै प्रकथनी में इस अटना का बर्लन इस प्रकार किया गया है । “उसने (शिकन्दर सोधी ने) सुना कि गानेश्वर में एक कुण्ड है वहाँ हिन्दू एकत्र होकर स्नान करते हैं । उसने प्राणियों से पूछा कि इसके विषय में धरत का क्या धारण्य है । उन्होंने उत्तर दिया कि प्राचीन मन्दिरों को नष्ट करने की धनुस्साह नहीं है जबकि उस कुण्ड में प्राचीन काल से स्नान करने की प्रथा बची धा रही है । उसमें स्नान का नियम आपके लिए धर्मित नहीं । सुस्तान ने कटार निकाल ली धीर उस प्राणित की हत्या का संकल्प करते हुए

१ धर्मिबाध बकरीबर आरु इतिवता पंचम अग प्रथम ।

दरिन्धे-दाकृति लेखक धनुस्सा ।

२. धारण्यते-मुसलमानी लेखक रोम शिकन्दर सुस्तान ।



कहा कि तु हिन्दुओं का पक्षपाती है। उस कुतुर्भ ने उत्तर दिया कि भी कुछ घरा में मिला है उसे मैं कहता हूँ और सरय बाव कहने में कोई भय नहीं। मुस्त्वान संगुष्ट हो गया।<sup>१</sup>

## मुगल काल में कुरुक्षेत्र

प्रथम मुगल सम्राट बाबर के राज्य काल १५२६ ईस्वी में बानेसर के मबार राजपूतों ने अपने नायक मोहन के नेतृत्व में बिरोह किया। पहले-पहले तो बिरोह का इतना प्रबल बिय था कि राजपूतों ने मुगल सेना को पछाड़ दिया। बाबर बानेसर के राजपूतों से बहुत परेपाम रहा। १५३६ ईस्वी में जब देरसाह मुरी और मुगल सम्राट हुमायूँ में संघर्ष धारम्भ हुआ तो बानेसर के राजपूतों ने एक बार फिर बिरोह किया और दक्षिण में पानीपत तक नगर का प्रवेश पीट कर दिया। देरसाह मुरी के सासन काल में कुरुक्षेत्र प्रदेश में फिर मुसल और धान्ति स्थापित हुए। देरसाह द्वारा निर्मित बड़ी सड़क को रोहतास से देसावर तक बनवाई गई थी बानेसर नगर के बीचों बीच होकर गई थी। नगर की महत्ता को दृष्टि में रखकर उसने बानेसर में यात्रियों की सुविधा के लिए जो बड़ी सड़क बनवाई थी। एक सड़क बानेसर नगर के दक्षिण में समिहित लीच के पूर्वी किनारे पर और दूसरी उत्तर में बनवाई गई थी। बानेसर नगर के दक्षिण में बनवाई गई सराय का बिहू तो विश्वस्त मिट गया केवल कुछ खण्डहर शेष हैं परन्तु उत्तर में बनवाई गई सड़क खण्डहर के रूप में धमी शेष है जो दिन प्रति दिन धिरती जा रही है। यहाँ एक बिद्यालय सड़क है जिसके बीच एक मस्जिद और कुर्मा या जो १६४७ ईस्वी में शेष-निर्माण के समय परिवर्तन में समाप्त हो गया। एक पुल जिसको देरसाह ने सड़क पर बनवाया था अब भी बानेसर के उत्तर में खण्डहर बना खड़ा है। यह पुल इतना सुरङ्ग है कि उसकी महाराजों पर बड़े-बड़े कुल पड़े हैं।

मुगल सम्राट हुमायूँ की मृत्यु के पश्चात् १५५९ ईस्वी की सरकार ने जबकि वह बैहली के राज्य के लिए हीनू बक़ास से युद्ध करने कलानौर से पानीपत की ओर बढ़ रहा था बानेसर में सेनाओं का पड़ाव डाला था। १५६७ ईस्वी में सूर्यप्रहल के महापर्व पर मुगल सम्राट अकबर कुरुक्षेत्र आया। जब सम्राट बानेसर पहुँचा तो बड़ी जोषियों और संस्थाधियों की एक जमात देखी। जिनमें किसी विषय पर कुछ झनड़ा हो रहा था। वह सब के सब सम्राट के पास आए और प्रार्थना की कि उनका झनड़ा समाप्त किया जाए। सम्राट की आज्ञा से कुछ सैनिकों ने अपने शरीर पर भभूत रमा ली और संस्थाधियों की सहायता के लिए जनमें शामिल हो गये क्योंकि उनकी जमात कमबोर थी। एक खबर बस्त सड़ाई शुरू हो गई और कई धारमी मारे गए। संस्थाधियों की भीठ हुई। सम्राट बहुत प्रसन्न हुए।<sup>२</sup> सम्राट अकबर के राज्य-काल में बानेसर सचिस्थ महत्ता का भाग था।

१ उपराने बकरी-लेखक विजयपुरीन अकबर बकरी।

२ उपराने अकबरी, लेखक विजयपुरीन अकबर बकरी, केओब बिशी अकबर बिषा।

‘‘बानेसर में एक ईंटों से बना किना है। पत्थी २२८१८८ बीघे १७ बिले है। राज्य कर ७८१०८०३ है। किले में पचास भुइसवार और १५०० सैनिक हैं। अधिक जनसंख्या चौगड़ों और मूजों की है।’’<sup>१</sup> प्राग्नि प्रकृष्टी में महाभारत युद्ध का भी विस्तारपूर्ण बयान है। प्रकृष्ट ने महाभारत को फारसी में सिद्धवाया था। सम्राट प्रकृष्ट ने हामी मुलतान बिले कि नकीव खान के साथ मिलकर महाभारत का अनुवाद किया था जो बानेसर में भी हत्या करने पर कड़ी सजा दी।<sup>२</sup> सम्राट जहांगीर के राज्य काल के सबसे बर्ष में बानेसर में भयंकर प्लेग फैल पड़ी। बुबके जहांगीरी के अनुसार इससे पूर्व भारतभर में कभी प्लेग नहीं पकी थी। यह प्लेग पदचात् में दिल्ली और काश्मीर तक फैल गई। १५७३ ईस्वी में मुगलत के नवाब प्रकृष्ट ने बड़ौदा के सुबेदार हसन मिर्जा को युद्ध में हरा दिया। हसन मिर्जा परास्त होकर पंजाब की ओर भागा। उसने समस्त कुश्नेज प्रदेश में उपद्रव मचाकर बानेसर को सूटा। सम्राट जहांगीर के सिंहासन धाँस होने क केबस पाँच मास पदचात् मई १६०६ ईस्वी में उसके बड़े पुत्र शहजादे सुसरो ने बाने पिता जहांगीर के विरुद्ध बिद्रोह कर दिया। उसने बेहली जाते हुए मार्ग में बानेसर को सूटा।

जनश्रुति है कि जहांगीर और सम्राट शाहजहाँ दोनों सूर्य-ग्रहणों क प्रबसर पर कुश्नेज प्राये से और इन्होंने तीर्थ-स्नानों की रक्षार्थ राजाजार्थ भी जारी की थीं। शाहजहाँ ने बानेसर नगर के उत्तर-पश्चिमी कोने पर सगभरमर का एक मुसल-निर्माणा कला के ङग का मकबरा बनवाया। इसे खेल् बेहली का मकबरा कहते हैं। खेल् बेहली ईरान का एक क़रीर था।

धौरंगदेश ने कुश्नेज तीर्थ के मध्य का एक मन्दिर गिरवा कर वहाँ एक किला बनवाया था जहाँ से उसके सैनिक स्नान करने के प्रयत्न करने वाले यात्रियों पर भोली बसाते थे।<sup>३</sup> कुश्नेज तीर्थ के बीच जहाँ धौरंगदेश ने किना निर्मित किया था उस स्थान को प्रायः भी मुसलपुत्र कहते हैं। धौरंगदेश के शासन-काल में सम्बत् १७१७ में जोधपुर नरेश राजा ज्योतिषिंह ने अपनी नवविवाहित भगपत्नी मुररानी क साथ कुश्नेज यात्रा की।

मुसल शासन-काल में कुश्नेज एक विस्मृत प्रदेश रहा। समय के ब्यार-भारों ने इस प्रदेश का ब्यापार समाप्त कर दिया। कला और सम्पत्ता के क्षेत्र मिट गए, फिर भी धार्मिक स्थान होने के कारण कुश्नेज का महत्व बना रहा। प्रजोन्मुखान के पुत्र सम्राट फरिखसिबर के शासन काल में चौथे बर्ष १७१७ ईस्वी में कुश्नेज प्रदेश सम्राट के निजो भय (घरले जाते) के लिए आवीर था। सबहरीं शताब्दी के अन्त में मुसल सम्राटों की लकिले छोड़ हो रही थी और पंजाब में सिक्ख बोर पकड़ने ला रहे थे। १७१० ईस्वी में मुसल मोहिन्द सिंह की यात्रा से वीर बारा बैराभी ने बानेसर के मुसल फ़ौजदार को मारकर नगर को लूट लिया और नागरिकों को मार दिया था। सम्राट फरिखसिबर ने बानेसर पर फिर अधिकार कर लिया और बानेसर नगर का नाम इस्तामाबाद रक्त दिया। प्राचीन सरकारी

१ प्राग्नि प्रकृष्टी, पृष्ठ १ ।

२. मुसलमान लघुलिख, लेखक मधुसूदन अग्निर बरारुभी भास्कर १ पृष्ठ १०२ ।

३ इन्डियन गवर्नर अफ़ इन्डिया पंजाब प्रबन्ध पाला ।

कागजात में तो इस्लामाबाद का नाम कुछ दिनों पता परगु जम साधारण में यह नाम प्रचलित नहीं हो सका। १७२१ ईस्वी मुहम्मदसाह के शासन काल में कुरराब प्रदेस दिलावर खाँ धीरवाहारी को बागीर में दे दिया गया। इस विषय पर नादिर नाम के सेवक धीर एक फाँसीसी यात्री सर बिलिवम जेन ने पूरा प्रकाश डाला है।<sup>१</sup> कुस्तोज प्रदेस को जो पहले ही मृत प्राय हो रहा था एक धीर दास्य कष्ट का सामना करना पड़ा। सम्राट मुहम्मदसाह के राज्य काल में १४ जनवरी १७३० ईस्वी को फारस का बादशाह नादिरसाह कुस्तोज प्रदेस को बरबाद करता हुमा करनाल की धोर गया।

फरवरी १७३१ ईस्वी में मराठा राज्य के सुप्रसिद्ध पेशवा बाजी राव की मत्ता उपाबाई ने कुस्तोज यात्रा की।<sup>२</sup>

मुगल सम्राट साह शाहमपीर खानी ने २१ फरवरी १७२४ ई० में एक क्रमगत (राज्य-यात्रा) द्वारा मराठा देवेण् थी द्विपक्ष को गया धीर कुस्तोज के तीर्थ स्वानों पर यात्रार्थ घाने वाले यात्रियों पर सजाया गया जजिया (कर) इकट्ठा करने की आज्ञा दी। इससे पूर्व जजिया कर मुसलमान अफसर इकट्ठा करते थे।<sup>३</sup>

१७२१ ईस्वी में दिल्ली के मुगल सम्राट साह शाहमपीर खानी ने कुस्तोजान की बागीर धीर कर मराठों को दे दी।

इस पर कुस्तोजान ने नाउज होकर दिल्ली सम्राट से मुकारमा करने का विचार किया। १७२१ ईस्वी में कुस्तोजान ने सरहिन्द के प्रदेस में सुत्मार धारम्भ कर बी। करनाल में बादशाही सेना को पराजित करके कुस्तोजान ने ११ मार्च १७२१ में बानेसर नगर चूना।<sup>४</sup> ११ अप्रैल १७२१ ईस्वी में धरना बीग ने कुस्तोजान को रोपड़ के खान पर पराजित करके बानेसर तक के प्रदेस पर अपना अधिकार कर लिया। धरना बीग ने दिल्ली सम्राट के बगीर को लिख भेजा कि 'इस प्रदेस के जमीदार मुस्ताख हैं धीर इनको अधिकार में करने के लिए शक्ति की आवश्यकता है। यदि धारकी इस धोर घाने की इच्छा है तो अपने साथ बड़ी सेना धीर धनुष युद्ध-सामग्री सामो नहीं तो भापका यहाँ घाना बेकार होना। भाप इस प्रदेस का प्रबन्ध मुझ पर छोड़ दें। बगीर ने अपनी सेना की निर्बलता धीर निर्बलता देखते हुए पञ्जाब भागा स्वगित कर दिया। इस प्रकार बानेसर का प्रदेस धरना बीग के अधिकार में आ गया। देहली सम्राट ने धरना बीग को अठर बंध बहादुर की उपाधि दी।'<sup>५</sup>

'धरना बीग खात धीर दुरानियों को बोधा देने के लिए शिकार का बहाना बनाकर साहबाबा अलीगौहर दिल्ली से सरहिन्द जाता हुमा १ जनवरी १७२१ ईस्वी को बानेसर से मुकद।<sup>६</sup> बानेसर का प्रदेस १७२७ ईस्वी में धरना बीगखान के हाथों से निकल कर

१ नादिर घाना। सर बिलिवम जेन के संस्मरण।

२ लू दिखी भाऊ मण्डाव कालून १ पृष्ठ ११ मार्च की पक्ष सखेधर।

३ लू दिखी भाऊ मण्डाव कालून २, पृष्ठ ११४ मार्च की पक्ष सखेधर।

४ धरने के जजमान की खानी

५ धरने के मुकदमे के पृष्ठ १८ की ११ व सेवक सुन्दर अनीलाल इन्सालि धरने के करना देग पृ २१ की १७ व धरने के बीज सेवक अरुण राव पृ ८८ ८८१ धरने के राव अरुण राव।

६ नादिराव राव अरुण राव पृ ११ धरने के रामस मसकिन पृ ११४

दुर्रानियों के अधिकार में आ गया। दुर्रानियों ने अगुस्त समदखान को सरहिन्द का गवर्नर बना दिया।<sup>१</sup> मराठा सरदार भग्नहार राव होमकर की स्वियाँ ६ जनवरी १७५८ ईस्वी को जब कुल्लू में स्नान करने के लिए आईं तो प्रबहुल समय खान की सेना की एक टुकड़ी से मराठों की मुठभेड़ हो गई। मराठे धीरे-धीरे सड़े घोर चतूनि भफगाओं को मारकर उनके बोड़े छीन लिए।<sup>२</sup> मराठों का पंजाब पर वास्तविक आक्रमण अन्तिम फरवरी १७५८ ईस्वी को आरम्भ हुआ।

## मराठे और कुल्लू

तीन मार्च १७५८ ईस्वी को पंजाब विजय यात्रा पर जाते हुए मराठा सरदार रघुनाथ राव ने अपनी बड़ी सेना सहित कुल्लू में पंजाब आया।<sup>३</sup> साहीर से बेहली बापिस लौटते हुए रघुनाथ राव ने फिर पाँच जून १७५८ ईस्वी को सोमावती प्रभावस्था के पुष्य पर्व पर कुल्लू में स्नान किया।<sup>४</sup> "७५ लाख रुपये बापिक के बदले रघुनाथ राव ने अपने विजित पंजाब को दिल्ली बापिस लौटते हुए अदना बँस के हवाले कर दिया। अदना बँस मराठों की ओर से पंजाब का गवर्नर नियुक्त हुआ। अग्रेष १७५८ ईस्वी से सितम्बर १७५८ ईस्वी तक अदना बँस खान रघुनाथ राव विजित प्रदेश सिन्ध नदी से अमना नदी तक का अधिकारक बन गया।"<sup>५</sup>

१२ सितम्बर १७५८ ईस्वी में मराठों द्वारा नियुक्त पंजाब के गवर्नर अदना बँस खान की मृत्यु हो गई। पंजाब में मराठा सरदार दादा भी सिंधिया को पंजाब का राज काज संभालने के लिए सेना सहित भेजा। अन्तिम मार्च १७५९ ईस्वी को मराठा सरकार दादाजी सिंधिया अपनी सेना सहित पंजाब की ओर जाता हुआ कुल्लू आया।<sup>६</sup>

१७५९ ईस्वी में मराठों से लंग घाकर मजीदुद्दौला रोहेले, हिन्दू राजा सवाई माधोसिंह महाराजा जयपुर और श्री विजयसिंह महाराजा मारवाड़ ने अहमदशाह अकबरी के पास अन्देज भेजा कि वह हिन्दुस्तान आकर मराठों से लड़की रक्षा करे। अतः मराठा १७५९ ई० में अहमदशाह अकबरी ने भारी अफदान सेना लेकर हिन्दुस्तान पर अपना

(१) दारिजे मुजफ्फरी। (२) मराठों या अहिंसा लेखक की के राज्यादे पृ० ८२  
किर २१। (३) कायबान यमकत राय अरमन्दि में पृ० २६५ से २६७ तक। (४) दारिजे  
अजयपुर खानी पृ० २६५ की खजानाय समय पृ० १०१। तबकरे इम्पादुल मुल्क पृ० ५६५  
५६९, अमरकमा पृ० ८४ व दारिजे मुजफ्फरी पृ० २४७ दारिजे मराठ व अन्धे पृ० १६३ अन्धे अजयपुरी  
पृ० २४७ दिल्ली अहिंसा लेखक पृ० ७५ अजयपुरी अन्धे राज पृ० १-२। (५) अजयपुरी राज  
अजयपुरी पृ० १६६। दारिजे अजयपुरी लेखक अन्धे अन्धे अजयपुरी पृ० २१ की अजयपुरी अजयपुरी  
अजयपुरी अजयपुरी पृ० १। अजयपुरी अजयपुरी लेखक अन्धे अजयपुरी अजयपुरी पृ० २६५ अजयपुरी अजयपुरी  
अजयपुरी अजयपुरी पृ० १। दारिजे अजयपुरी पृ० १८५ अजयपुरी अजयपुरी लेखक अजयपुरी पृ० २६५ की  
अजयपुरी अजयपुरी पृ० २६५-२६६। (६) अजयपुरी अजयपुरी पृ० ७८ अजयपुरी अजयपुरी।

रखी गयी सिद्ध है सतसुज नदी पार करके बानेसर के किले पर अधिकार कर लिया। २३ मई, १८०६ ईस्वी की साहौर सन्धि और ३ मई १८०६ ईस्वी की बोपलानुसार बानेसर फिर अंग्रेजों के पास आ गया। १८२७ ईस्वी में मार्चर सिद्धा है कि 'कुछ वर्ष बीते कि यह प्रदेश पंगनी पन्तुओं से अलग पड़ा था।' १८२७ ईस्वी में बानेसर के स्वतन्त्र अधिकार छीन लिए गए और इसे एक ज़ायीर बना दिया गया। १८३० ईस्वी में अन्तिम सिद्ध सरकार फ़तहसिद्ध की रानी की मृत्यु के पश्चात् बानेसर प्रदेश पर पूर्णतया अंग्रेजों का अधिकार हो गया। १८३७ ईस्वी तक कुदयेन प्रदेश मुंबा देहली में सम्मिलित था। पंजाब से इसका कोई सम्बन्ध नहीं था।

बानेसर के सिद्ध सरकारों का मुखिया मिर्जासिद्ध था। कॅप्टन कारकिन ने १८३० ईस्वी में बानेसर की सेंटममेंट रिपोर्ट में लिखा है कि 'मिर्जासिद्ध राजशाही का रहने वाला नीयबा राजपूत था।' परन्तु कॅप्टन ऐबट ने लिखा है कि 'मिर्जासिद्ध जाट सिद्ध था। वह अपने भतीजों बंगालसिद्ध और भागसिद्ध के साथ बानेसर आया था। बंगालसिद्ध और भागसिद्ध दो बानेसर के भाग-भाग भाग में रहे और मिर्जासिद्ध सिद्धों के एक बरके के साथ बैठ गया जहाँ कि वह मुद्र में मारा गया।' बंगालसिद्ध और भागसिद्ध ने साहबाद के सरकार करमसिद्ध निर्देश और राज्य के सरकार की सहायता से एक बार पराजित होकर दूसरी बार राजा को प्रहार करके बानेसर पर अधिकार कर लिया। दोनों भाइयों ने बानेसर प्रदेश को भाग में बाँट लिया। बंगालसिद्ध ने ३/५ और भागसिद्ध ने दो २/५ भाग पर अधिकार कर लिया।"

पंजाब सिद्ध इतिहास के लेखक कॅप्टन कनिंगहम ने बंगालसिद्ध के विषय में लिखा है कि 'बानेसर का राजा' जो १८०३ ईस्वी में अंग्रेजों के साथ मिल गया था सिद्ध सरकारों में सबसे बड़ा शासकी था। महाराजा रजसिद्ध केवल बंगालसिद्ध से अलग था। १८१६ ईस्वी में अंग्रेजों ने बोवा और सिमोई गाँव बंगालसिद्ध को दे दिए।" जनश्रुति है कि बंगालसिद्ध ने राजा साहबाद के कुछ बानेसर प्रदेश में जयबाए ले। इन राजा के भागों के नाम राजा की कम्पनी बाग बंगालसिद्ध का बाग और छोटी सरकार का बाग हैं। बंगालसिद्ध की राजा में दोनर शामिल थे जिनके साथ वह दूर-दूर के प्रदेशों को लूटा था। बंगालसिद्ध के एक लड़का फ़तहसिद्ध और एक लड़की करमसिद्ध थी। एक और लड़का साहबसिद्ध रहने से था। करमसिद्ध का विवाह पटियासा के राजा करमसिद्ध के साथ हुआ था। बंगालसिद्ध ने करमसिद्ध के बहू में छ. पाँच दिए थे। १८१५ ईस्वी में बंगालसिद्ध की मृत्यु हो गई। उसकी पत्नी समाधि राजा की सरकार की छट पर बीरबस्ता में लगी है। राजा के पुत्र साहबसिद्ध को छोड़ें तो पाँच शासकीयिका के लिए देकर छेप रियासत

(१) सिद्ध इतिहास लेखक कनिंगहम पृष्ठ ३४१।

(२) रिपोर्ट मार्कट इंडियन गवर्नमेंट सिद्धा करजाव।

(३) सेंटममेंट रिपोर्ट बाग बानेसर लेखक कॅप्टन कारकिन १८३१ ई।

( ) कैपल केव " " " " १८३४ ई

(५) इंडियन गवर्नमेंट सिद्धा करजाव दूसरा संस्करण।



या। भीमंत नामा साहिब जो १८२७ ईस्वी के स्वतन्त्रता सङ्ग्राम के मुख्य नायक थे की ऐसी दृष्टि बानेश्वर के सैनिक महत्त्व पर पड़ी। इसाहाबाद, बामनी मंत्री और दिल्ली से होते हुए भीमंत नामा साहिब अपने मुख्य परामर्शदाता मन्त्रीमुस्ता सहित तीर्थ यात्रा का बहाना करके १६ अगस्त १८२७ ईस्वी को कुस्त्रोच पधारे। भीमंत नामा साहिब की योजना थी कि जब दिल्ली में स्वतन्त्रता प्थक सहराए तो अम्बाला से अग्र भी घेना दिल्ली के अंग्रों की सहायताार्थ न जा सके। कुरतब की पंचायत ब्राह्मणान् ने भीमंत नामा साहिब के सम्मुख स्वतन्त्रता का सन्देश हरियाणा प्रान्त के गाँव-गाँव में पहुँचाने का बचन दिया। तत्पश्चात् पानीपत होते हुए नामा साहिब बापिस बिदूर जसे गए। पवित्र तीर्थ कुस्त्रोच का नाम बमस स्वतन्त्रता-युद्ध का संदेश बनकर हरियाणा प्रान्त के प्रत्येक घर में पहुँचा। १४ मई, १८२७ ईस्वी को दिल्ली पर अधिकार का समाचार बमानी की मति फँसता हुआ कुस्त्रोच पहुँचा। बानेश्वर में उस समय अंग्रेजों की पाँचवीं रेगिमें सेना का पड़ाव था। इस सेना ने बिद्रोह प्रारम्भ कर दिया। ऐसी हीनिकों ने अग्र ब्र अफसरों को मार कर नगर पर अधिकार कर लिया और दिल्ली-अम्बाला पथ को पीपली के स्थान पर बन्द कर दिया जिससे कि अम्बाला से अंग्रेजों की सेना दिल्ली न जा सके। २० मई १८२७ ईस्वी तक कुस्त्रोच प्रदेश पर विप्लवकारियों का अधिकार रहा। परन्तु २१ मई, १८२७ ईस्वी को महाराजा पटियाला की सेनाएं अंग्रों की सहायताार्थ बानेश्वर पहुँच गईं। बिद्रोह कुचल दिया गया। कुस्त्रोच प्रदेश पर अधिकार करके दिल्ली-अम्बाला पथ अंग्रों के लिए बंद दिया गया। हिवार के बिद्रोहियों को बानेश्वर लाकर जेल में बन्द कर दिया गया था और उन पर कड़ा पहच भगा दिया गया था। परन्तु उस समय यह अफवाह फैल गयी कि कैप्टन के राजपूत ३१ मई १८२७ ईस्वी को धाकमण करके बिद्रोहियों को छुड़ा देंगे। अतः बिद्रोहियों को चुपचाप अम्बाला जेल भेज दिया गया। १ जून १८२८ ईस्वी को महाराजा पटियाला अपनी राजधानी की रक्षाार्थ सेना सहित बानेश्वर से पटियाला चला गया। बानेश्वर पर फिर बिद्रोहियों ने अधिकार कर लिया। परन्तु महाराजा पटियाला की सेनाओं ने फिर धाकर बानेश्वर नगर को अपने अधिकार में ले लिया। बानेश्वर के चौहान राजपूतों ने अंग्रेजों की सहायता की। अंग्रेजों की रक्षाार्थ एक अस्वारोही सेना बनाई और २२० शीलीदार मेगबीन की रक्षा के लिए दिए।

परन्तु कुस्त्रोच प्रदेश के लोगों का विश्वास अंग्रेजों पर से उठ गया और सोच उस दिन की प्रतीक्षा करने लगे जबकि अंग्रेजों का साम्राज्य लुप्त होना। अतः फिर एक दिन अंग्रेजों सेनाएं महाराजा पटियाला की सेनाओं को कुस्त्रोच प्रदेश में छोड़कर देहली पर पुनः अधिकार करने के लिए धागे बड़ गईं। महाराजा पटियाला की सौजों ने बानेश्वर की जनता पर नित्य तवीन पुन्य छोड़े। नीरे नीरे स्वतन्त्रता युद्ध की विचारिका ठण्डी पड़ गईं। फिर भी पंचायत ब्राह्मणान् के सचस्य गाँव-गाँव में स्वतन्त्रता की प्रसन्न जपाते फिरे। १८२७ ईस्वी के स्वतन्त्रता-युद्ध के समय बानेश्वर जिता था। यहाँ का डिप्टी कमीस्सर् अफ्टिन मेकेनिस था।

(१) दीक्षित गम्भीर जिता करना दूसरा संस्करण; शिवबन म्यूजी लेखक चार्जस गार्ज; बाकिरात निदेश लेखक के ही विचार। केवल शिवबन म्यूजी; धर चार्ज शिवप्रेमेश लेखक की संस्करण; कोच लेखक की बाकी। पंचायत संस्करण की म्यूजी पर रिप्रेजेंट।

## ज़िला थानेसर

थानेसर का जिला १८४६ ईस्वी में प्रिंसेजों द्वारा बनाया गया था जो १८९२ ईस्वी में छोड़ दिया गया। १८६२ ईस्वी में पीपली को थानेसर की तहसील और जिला धम्बासा बना दिया। सम्भवतः सन् १८६८ ईस्वी में तहसील थानेसर और जिला करनाल बना दिया गया जो धारा दित तक है। सन् १८३७ ईस्वी से पूर्व कुच्छम सूबा देहली के राज्य प्रबन्ध में था परन्तु १८३७ ईस्वी के पश्चात् सूबा पंजाब के साथ मिला दिया गया। जिला थानेसर का प्रथम डिप्टी कमीश्नर कैप्टन लार्किन था। वे प्रसन्न प्राक्सिटर जिन्होंने थानेसर को जिला बनने से पूर्व थानेसर प्रदेश का राज्य प्रबंध किया था उसके नाम इस प्रकार हैं —

१८४३ ईस्वी	—	मेजर सार्वेण सी० बी०
१८४३ ईस्वी	—	मेजर सीच सी० बी०
१८४६ ईस्वी	—	मेजर ए० एस० ऐबट
१८४६ ईस्वी	—	जी० कैम्बल
१८४६ ईस्वी	—	मेजर एस० ए० ऐबट <sup>१</sup>

१८३० ईस्वी में थानेसर के सेंटमैन्ट के पश्चात् ब्रिटिश पञ्जीयर करनाल के अनुसार थानेसर के विषय में लिखा है कि 'थानेसर नगर को पानी हृष्टि से देखन जाने से यह बात सुनी हुई नहीं रह सकती कि इसको दया कुछ वर्ष पूर्व खली भी। नगर और ग्रामों के खण्डहरों से स्पष्ट बीजता है कि जितने लोग इनमें अब बसते हैं कभी इनसे कहीं अधिक बसते थे। चारों ओर कुम्हों की बहुतायत भी जिनमें से धाये से अधिक धाये भट पए हैं और उपजाऊ बरती छत्र समक की स्मृति दिखाती है जबकि यहाँ अधिक जनसंख्या और समृद्धि निवास करती थी। इस प्रदेश की समृद्धि का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि जितना भूमिकर धर हों बठिनता से मिसता है, उससे दो गुणा धिक्कों के राज्य में इकट्ठा होता था।' अब मैंने इस प्रदेश के इतिहास का अध्ययन किया तो मैं इस परिणाम पर पहुँचा कि इस प्रदेश के उन्नयन के कुछ कारण ये हैं कि कैबल के राजा माई उदयसिंह का प्रथम पंजी तुलसीराम प्रधानी दस्यदृष्टि बासा कैबल मनुष्य था। उसने माई कर सगाकर यहाँ के लोगों को पीत दिया। करों से बचने के लिए बहुसंख्या में लोग कबल से उन्नयन थानेसर में या बसे क्योंकि थानेसर में कर बहुत ही कम थे। १८४३ ईस्वी में माई उदयसिंह

(१) ब्रिटिश मन्टेनर जिला धम्बासा द्वारा १८६८। (२) ब्रिटिश मन्टेनर जिला करनाल द्वारा संस्करण



की मृत्यु के पश्चात् कैंबस भी संघों के अधिकार में आ गया। संघों ने कैंबस के कर्तव्य में भारी बर्बादी कर दी। परिणाम स्वरूप जो जोय कैंबस से आकर बानेश्वर में बसे थे वे सो बापिस जसे ही गए परन्तु उनके साथ बानेश्वर के लोग भी भारी सत्या में कैंबस जसे गए। बानेश्वर में कई बार हुआ कूटा सन् १८२५, १८२७ और १८६१ ईसवी में तो इतना हुआ फैसा कि अगर बिस्तुस खजाड़ हो गया। मौसम के परिवर्तन ने भी स्वरूप पारण किया सन् १८२१ १८२२ और १८२५ ईसवी में तो इतने घोसे पड़े कि साथ प्रद्वेष उजड़ गया और घमानक मुकमटी फेल गई। कुछ सड़ाऊ भ्रमड़ाऊ, जगती और बोपी करने वाली आसियों के धातक से जगता यह प्रदेस छोड़-छोड़ कर जमी गई।”

‘बानेश्वर में एक पुराना नष्टप्राय किमा है जो जोटी पर १२०० फीट है। पूर्व में एक जोटी पर धातुनिक नगर बसा हुआ है और पश्चिम में एक पर्यन्त मूमि है जो बाइपी कहलाती है। तीनों जोटी पहाड़ियाँ सम्बाई में पूरब से पश्चिम तक करीब एक मील हैं और जोड़ाई में करीब २ ०० हजार फीट। सम्बाई जोड़ाई १६०० फीट का वेरा बनाती है या २६ मील से कम जो कि ज्ञानसांग के ३५ मील के बराबर है। किन्तु मुसलमानों के प्राक्रमण से पहले यह निश्चित है धातुनिक नगर का माग होना। इस स्थान को इष्टि में रखने पर पुराना नगर प्रत्येक ओर एक बार्ग मील होगा जो कि चार मील का वेरा बनायेगा या बीसी यात्री ज्ञानसांग की माप से कुछ अधिक। यह कहा जाता है कि इसकी २२ मीलारों की जिनमें एक भी कुछ भवधिष्ट है। यह किमा राजा बिलीप ने बनवाया था जो कुब का बंधव था और पांडु की पाँच पीढ़ी पहले था। पश्चिम में मिट्टी के किसे की बीबारों सड़क से ६० फीट ऊँची है। किन्तु भीतरों घान ५० फीट से ऊँचा नहीं है। पूरी पहाड़ी टूटी हुई बड़ी बड़ी ईंटों से ढकी है। किन्तु तीन पुराने कुम्भों के अतिरिक्त प्राचीनता का कोई बिह्व भवधिष्ट नहीं है। ज्ञानसांग के समय यात्रा का वेरा २०० मी था जो भारतीय योजना के अनुसार २० कोस के बराबर था। किन्तु अकरर के समय में वेरा बढ़ कर ५० कोस हो गया। मिस्टर ब्राडविग ने यही माना है। टासेमी के द्वारा बानेश्वर को बटनकेश्वर के नाम से पुकारा गया है। बटन केश्वर के लिए सतानेश्वर या सस्कृत स्वासेस्वर का प्रयोग होता है।”

कुम्भोज ने मुसलमनों और सिक्खों के शासन काल में किसी भी इष्टिकोण से उन्नति नहीं की। यह एक ऐतिहासिक कड़वा परन्तु सत्य है कि सतसुज नदी से परे पंजाब केशरी महाराजा रसुबीतसिंह के सुप्रबन्ध के कारण सिक्ख राज्य पंजाब के लिए बरबात था। परन्तु कुम्भोज प्रदेस के लिए तो सिक्ख सरदारों का राज्य बीठा बामशा अभिप्राय था। मयासिंह और उसकी बिबवा राजियों के सुप्रबन्ध और उपयोगता ने कुम्भोज प्रदेस को जीवट करके रख दिया। बानेश्वर के सिक्ख सरदारों की बर्ब कता, विशा संस्कृति भवता निर्माण कार्यों में न तो कोई रुचि थी और न ही उनकी कोई रीत है। यह सिक्ख सरदार इतने निकम्मे थे कि तीर्थों का तो क्या ध्यान करते सिक्ख पुर साहित्यगत तक के बुझारे तक न तो बनवा सके और न ही उनकी मरम्मत करवा सके। बिच प्रकार मुसलमनों और संघों ने बामिक

तीर्थों की रक्षार्थ राग्याचार्यें निकालीं, विष्णु सरदारों की कोई ऐसी आज्ञा नहीं है। बानेसर नगर और कुश्लेश प्रदेश भर पर उनके शासन-काल में कंबासी और मुसमरी रही। विष्णुओं के शासन-काल में एक भी हबेसी या बर नगर भर में ऐसा नहीं बना जिसे सुन्दर कहा जा सके। एक क्षण में, 'बहु धाए, बुदभोग को बूटा और मृत्यु के प्राप्त बन गए'। उनके दरबार में बिद्वानों का स्थान नहीं था बल्कि सरावियों का बोलबाला था। इनकी अपेक्षा कि विष्णु सरदार अपने लिए नबीन सुन्दर और कलात्मक ङंग के किसे या महत्त उसी प्रकार बनवाते जिस प्रकार उनके पड़ोसी राजा कौशल मरेण भाई उदयसिंह ने कौशल और पहले में बनवाए, उन्होंने मुसमरानों की पुछनी लखनहर तुल्य बड़ी हबेसियों पर धमि कर कर लिया और उन्हीं टूटी हुई हबेसियों में जीवन काट कर मर गए। बहु बड़ी हबेसी जिसे पुछना जाना कहते हैं और बहु हबेसी जिसमें मर्यासिंह की रबेल का पुत्र साहबसिंह और उदयरा पुत्र बिगन सिंह रहता था राजर सुन्दर की परिभाषा में भी नहीं जाती।

कौशल नगर और उज्जैन प्रदेश के गाँवों के पुछन मकान बेबकर अनुमान लगाया जा सकता है कि वहाँ भी उदयसिंह के राज्य में समृद्धि का राज्य था। परन्तु बानेसर और उसके प्रदेश के गाँव उज्जैन-उज्जड़ हैं। इस वर्ष पहले बानेसर प्रदेश के गाँवों में एक भी मकान पक्का बना हुआ नहीं था। यहाँ तक कि बानेसर के विल सरदारों ने गाँवों के पक्के कुम्भों की ईंटें उखाड़कर कुएँ ढोड़ दिए। जगमें इतनी सामर्थ्य या मूर्ख बूझ भी नहीं थी कि बट्टे में ईंटें पकवाकर अपने मकान बना लेते।

बास्तर में बानेसर के विल सरदार देवेबर सुंदरे थे।

### मिस्टर सारकिम और कुश्लेश

सम्राट प्रभाकरवर्धन और हर्षवर्धन के पश्चात् सारकिम पहला व्यक्ति था जिसने पवित्र तीर्थों के बीछोडार के लिए विदेश कार्य किया। कुश्लेश भूमि में यज्ञा रखने वाले समस्त लोगों को सारकिम साहिब का आमाटी होना चाहिए। मिस्टर सारकिम १८३० ईस्वी में जब सिद्धों का राज्य समाप्त होकर अंग्रेजों का राज्यारम्भ हुआ बानेसर का पहला सिटी कमिश्नर और सैटलमेन्ट आफिसर था। जो महान् कार्य हिन्दू जनता परी और राजा-महाराजा नहीं कर सके वह कार्य सारकिम साहिब ने किया। सारकिम साहिब कुश्लेश के बीछोडार का जन्मदाता था। सारकिम से पूर्व पुष्प तीर्थों के पाटी की सोचनीय बना थी। बल्कि साथ ही यह है कि तीर्थों के बाट नहीं क समाप्त थे। सारकिम साहिब ने पक्कर जनरल राजा महापराओं और पनवानों को कुश्लेश के नव निर्मासार्थ करपा देने के लिए प्रोत्साहित किया और समस्त जिसे से भूमिकर के साथ एक-एक करपा बिलोप कर से हकटा दिया और तीर्थों के बाट पक्के बनवाये। उन्हें बाट बनवाये का इतना जान था कि स्वयं अपनी बर्नगली के साथ प्रतिदिन कार्य देखने जाया करते थे। सारकिम साहिब ने कुश्लेश तीर्थ के पश्चिमी और उत्तरी बाट धाने बन से बनवाये जो धारा थी सारकिम बाट कहलाते हैं। साथ अंग्रेजों ने भी समय समय पर आवश्यकतानुसार आजापन निकाल कर पवित्र तीर्थों की रक्षा की और इत

पावन भूमि का गौरव बढ़ाने के लिए विशेष ध्यान दिया। सारफिन साहिब का सहायक सेंटमैट फाकिबर चौबटी बानेराए वा। श्री कामेराए सुमठानपुर जिला छहारनपुर (उत्तर प्रदेश) के चौबटी कुड़ामस रईव का पुत्र वा। श्री कामेराए ने १८३४ ईस्वी में कुस्त्रोत्र दर्पण नाम की पुस्तक लिखकर कोहनूर प्रेस साहीर से छापवाई थी। कुस्त्रोत्र दर्पण का जिक्र डिस्ट्रिक्ट मजदीयर जिला करगाम में भी धाया है। 'यदि कुस्त्रोत्र के विषय में बिस्तार से जानना हो तो श्री कामेराए मरुस्ट्रा ऐसीसैन्ट सेंटमैट फाकिबर बानेराए की कोहनूर प्रेस साहीर से छपी पुस्तक कुस्त्रोत्र दर्पण में पढ़ो।'<sup>१</sup> इस पुस्तक में १८३४ ईस्वी के कनजेन घोर उसके प्राचीन धार्मिक इतिहास का वर्णन है।

यह पुस्तक श्री कामेराए ने भावों संकाति कन्या सम्बत् १९१२ चितम्बर १८३३ ईस्वी को समाप्त की। श्री कामेराए लिखते हैं— जब मैं बानेराए में सहायक सेंटमैट फाकिबर वा सो कुस्त्र न के विषय में कोई प्रमाणिष्ठ लिखित पुस्तक नहीं थी। मैंने जोकि ब्रूम के समान हूँ पण्डित हरप्रसन्न शैबल निवासी, पुण्डरि निवासी पण्डित क्यामलाम घोर सरसुव घाम के निवासी बाबा हरिमिर के बेटे केतनदास के साथ तीर्थों का वास्तविक स्थान जानने के लिये पेश कुस्त्रोत्र भूमि की यात्रा की। यात्रा के पश्चात् मैंने जोकि धार्मिकों से घनभिन्न हूँ ब्राह्मणों घोर लोगों से सुनकर यह पुस्तक प्रकटा की जानकारों घोर सुनिधा के लिये लिखी है। मैंने यह पुस्तक भावों संकाति कन्या सम्बत् १९१२ चितम्बर १८३३ ई. को समाप्त की। संकहाँ बर्ष पूर्व काशी के एक बड़ी स्वामी रामचन्द्र ने कुस्त्रोत्र भूमि की यात्रा करने के पश्चात् छ. हजार रसोफों की एक पुस्तक लिखी थी। स्वामीजी विद्वान भ उन्होंने प्रतिज्ञा की थी कि जो तीर्थ उनके स्वप्न में आकर प्रकटा माहात्म्य नाम घोर स्थान बतायेगा वह उसी तीर्थ को अपनी पुस्तक में लिखेगा घोर उसी में स्नान करेगा। कहते हैं कि ऐसा ही हुआ। रस्वी स्वामी जी के पश्चात् गोस्वामी हरिमिर ने सम्बत् १९५ म कुस्त्रोत्र भूमि की यात्रा करके तीर्थों का चित्र बनाया। सम्बत् १८९१ में सरदार गंगाविह की रानी माई जिजा ने भी कुस्त्रोत्र भूमि की यात्रा की। जो तीर्थ सुप्त हो गए थे उनको फिर प्रकाश में लाया गया। परन्तु दुर्भाग्यवश इन लोगों की यात्रा की कोई लिखित पुस्तक नहीं मिलती। कुस्त्रोत्र तीर्थ के चारों घोर पश्के घाट ने परन्तु अब उत्तर में कवल १९ घाट घोर पश्चिमी किनारे पर पाँच घाट शेष हैं। कुछ की बात है कि हिन्दू घोर सिख राजाओं राजा रणवीर सिंह राजा पटियाले इत्यादि ने इस घोर कोई ध्यान नहीं दिया। अब मिस्टर सारफिन डिप्टी कमिश्नर बानेराए घाटों के बनवाने में बड़ी दिलचस्पी से रहे हैं। इस उद्देश्य के लिए उन्होंने जुलाई १८३३ ईस्वी से रुपया भी इकट्ठा करना आरम्भ कर दिया है। मन्तर अजरस साहिब ने दो हजार रुपया दान दिया है। सारफिन साहिब ने अन्य राजा महाराजाओं घोर जनमानों को भी लिखा है। अब तक पन्ध्र हजार रुपया इकट्ठा हो चुका है। इस कार्य के लिए पण्डित कैरारनाथ की प्रयत्नता में घोर अन्य लोगों को मिलकर एक बर्मसभा भी बना दी गई है। यदि सारफिन साहिब कुछ समय यहाँ घोर रहे गए तो हममें सन्देह नहीं कि वे तीर्थों के समस्त घाटों को पक्का बनवा देंगे। उन्होंने कुस्त्रोत्र

तीर्ण में जल पहुँचाने के लिए एक नाला भी खुदवाया है। सार्वजनिक सार्वजनिक के सार्वजनिक बनाने में भी वे इस क्षेत्र पर एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है। जिसकी प्रमुख वस्तुओं से विधि भी निकल पायी है।

सार्वजनिक वस्तुओं में अथर्व वेद।

१२२६

वाच्य भाग्यदय्य भाग्यदय्य ॥<sup>१</sup>

१२७२ हिन्दू

कुरुक्षेत्र तीर्थ पर एक एक इन लोगों ने पाठ बनवाया है। महाराज करमविह पटियाला वृन्दावन ब्राह्मण भूना, मोरि बाई भाग्यद, मोठी ब्राह्मण वानेश्वर, सन्तल ब्राह्मण वानेश्वर, रानी ग्रेम कृष्ण मनी भाग्यद, वस्ती पुत्र सन्तो कृष्ण वानेश्वर, महाराज राणजीठ सिंह, मिथ सोबा रामा सुरभयाल महाराज पटियाला, बिहारीभास मन्तल, सिमता छट्टा, बभुरिया ब्राह्मण वानेश्वर, बाबा भाग्यद नाम साहबविह कानूनवी वानेश्वर, सिम्तबाबु महाराज मिर्जापुर बसन्त सिंह घरबा बेड़ी मुहर वानेश्वर, मनोहर दास दुर्ग महाराज पटियाला भीपरबन् ब्राह्मण वानेश्वर परमानन्द मिथ वानेश्वर छः पाठ सार्वजनिक सार्वजनिक।<sup>२</sup>

१८६७ ईस्वी में वानेश्वर में म्युनिसिपल कमेटी बनायी गई। पहले तो इसके सभ्य मनोनीत होते थे परन्तु अब निर्वाचित हैं। वानेश्वर नगर की जन संख्या हर्षबर्धन के शासन काल में एक लाख के समय रही होगी। १८२० ईस्वी में अंग्रेजी राज हुआ तो बाबू हजार भी। १८२१ ईस्वी देखी दरबार के समय ८७२८ रहे थे। वेध के विभाजन १८४७ ईस्वी में पाठ हुआ था। १८२२ ईस्वी में बाबू हजार। १८९० ईस्वी में १३ हजार। १८६१ ईस्वी की जनगणना के अनुसार साढ़े सोलह हजार हैं। और १८६३ ई० में कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के कारण भी हजार बनसंख्या है।

### सिद्ध गुप्त और कुरुक्षेत्र

उस में से कबल सात सिद्ध गुप्तों के कुरुक्षेत्र धाम का प्रमाण मिलता है। प्रथम गुप्त बाबा नामक देव जी सूर्य-गृहण पूर्व पर कुरुक्षेत्र पधारे थे। वह कुरुक्षेत्र तीर्थ के दक्षिणी तट पर बहरे थे। बाबा नामक ने कुरुक्षेत्र के एक विद्वान ब्राह्मण पण्डित भानुराम जी से उद्भव ज्ञान और वेदान्त पर विचार विमर्श किया था। त्रिषु स्थान पर बाबा नामक बहरे थे वहाँ एक विद्यालय था कुरुक्षेत्र की धर्म कुरुक्षेत्र वर्ष हुए दिन गया है। उनकी स्मृति में उस स्थान पर एक गुफा द्वारा निर्मित है जिसे जनसाधारण भाषा में गुफाया सिद्ध बटी कहते हैं। बाबा नामक कुरुक्षेत्र से पहुँचा और कुरुक्षेत्र होते हुए समाने की धोर गए थे। सम्बन्ध १६१३ सम्राट अकबर के शासन-काल में तीसरे गुप्त धर्मशास्त्री कुरुक्षेत्र धारे थे। सम्राट जहाँगीर के राज्य-काल में छठे गुप्त हरयोविन्द जी कुरुक्षेत्र के मार्ग से कुरुक्षेत्र धारे थे। त्रिषु तीर्थ पर जहाँनि विद्यालय किया था वहाँ वानेश्वर नगर धोर उन्निहित तीर्थ के बीच गुफाया बना

(१) कुरुक्षेत्र स्थल लेखक श्री वानेश्वर २० २१। (२) कुरुक्षेत्र स्थल लेखक श्री वानेश्वर ६ २६।

हुभा है जो सन् १९४० ईस्वी से पूर्व जीर्णोद्धार में था परन्तु अब उसका मूल निर्माण हो रहा है। छात्रों को हर राय भी पहले के मार्ग से क्लेश पपाये थे। उनकी स्मृति में विभिन्न भाषी हबेनी में गुट्टारा बना हुआ था। मार्च १७१४ ईस्वी विक्रमी १७२१ में छात्रों को हरिकृष्ण जी पं० साधन्य के साथ पंजोरसे से बेहनी जाते हुए पपाये। तब को हरिकृष्ण जी बराने के माग से होकर सूर्यग्रहण के वर्ष पर कृत्य न पाए थे। वह जानेवर नगर के उत्तर में स्वाणेश्वर तीर्थ के तट पर ठहरे थे। उनकी स्मृति में बहो गुट्टारा निर्मित है। सन् १७११ में सम्राट् श्रीरंगदेव क दासन-काम में बहो को विद्वान् सिद्ध जी के कृत्य में पशार्ण किया था। वे कृत्य तीर्थ के उत्तर-पश्चिमी तट पर ठहरे थे। उनके धारमन की स्मृति में बहो गुट्टारा बना हुआ है। योनी रामनाथ को विद्वान् सिद्ध जी से कृत्य में निमा था। गुट्टार विद्वान् ब्राह्मण पण्डित मनीराम जी से निमने उसके घर मुहस्ता श्रीशगरान में गए थे और पंडितजी को एक उत्तम टात्रपत्र पर लिखकर दिया था जो आज भी पंडित मनीरामजी के बंधुओं के पास सुरक्षित है। पंडित मनीराम जी के घर में भी गुट्टार विद्वान् जी की स्मृति में गुट्टारा निर्मित है।

सरस्वती नदी के पार तट पर निर्मिते साधुओं के तीन धाम थे जिनमें विद्वान् साधु निवास करते थे। एक धाम प्राचीकृत तीर्थ पर संत भाई मुलाबसिद्ध जी का था। भाई मुलाबसिद्धजी सोनह वर्ष की आयु में विद्याध्ययनार्थ काशी गए थे और पूर्ण विद्वान् होकर लौटे थे। उनके मुख का नाम मानसिद्ध था जो निमसा संप्रदाय के थे। भाई पुसाब सिद्ध जी को विद्यासत नामा के महाराज की ओर से बन्धान मिलता था। सरस्वती तट के प्राचीकृत तीर्थ पर बैठकर भाई मुलाबसिद्ध जी ने अनेक ग्रंथ लिखे। उनकी प्रथम रचना 'माकरसायुत है विद्यासेवा समय विक्रमी सन् १८३४ है। दूसरी रचना 'मोक्षबंध' का लेखन समय सन् १८३३ है। तीसरा ग्रन्थ 'अध्यात्म रामायण' है इसकी रचना संस्कृत के आधार पर हुई है। चौथी कृति 'कर्म विपाक' है। भाई मुलाबसिद्ध जी की अन्तिम रचना 'प्रबोध ज्योतिष माटक' है जो सन् १८४६ में लिखा गया था। यह भी संस्कृत माटक का भाव रचना है।

रस वेद श्री वसु चन्द्र समत साक भरित जान,  
नम मास भ्रम पुन वासरे दसमी वदी पहिधान।  
गुरु मानसिद्ध पवारविद भ्रमम्बना चरुठाम,  
कुक्षेत्र प्राचीकृत तट यहि कीन ग्रंथ बखान ॥

भाई मुलाबसिद्ध जी ने एक और ग्रंथ 'राम नाम प्रथम प्रकाश' भी लिखा है। इस ग्रंथ में श्री राम के गुणों का वर्णन है। गद्य का नमूना इस प्रकार है 'श्रीराम नाम में जो कुरंत करते हैं सो तरक बायेगे। श्री राम नाम प्रमूत की नाम है। श्रीन पुरख निबा करते हैं सो महा पापी हैं। सोई राखण है महा मोक्ष है।' भाई मुलाबसिद्ध जी की रचना के मनुके के लिए जो पद प्रस्तुत करता हूँ जिनमें से प्रथम संस्कृत पद्य के भाषानुवाच रूप में और दूसरा अध्यात्म रामायण में से नीलिक रूप में है।

मूत्र संस्कृत पद्य —

प्रभवति मनसि विवेको विदुषामपि दास्य सभयस्तावत् ।  
निपतन्ति दृष्टि विदित्वा यावन्मेदीव राक्षीणाम् ॥

भाव स्पन्दर —

तब सौ मन माहि विवेक रहै सुभ भागम ते उपजित इह जोई ।  
जब सौ माहि नीस सरोरुह में, द्विग नारि कटाक्ष सगे सर कोई ।  
निप जौसत जे मव खड मही, घर नारि भर्जे कर जोर सु दोई ।  
बतुरानत सौ जग माहि पिसे द्विग नारि प्रभोष नहीं भट कोई ।

दूररा मद्रा —

दूर रहो रघुवीर सर मम नावहि नाहि सु पाद छुहावो ।  
भापमे भरण को नाव सगाई, सु दीन ब्यास न काज गवावो ।  
राजकुमार पसार सयो पद, तो मम नावन की द्विग भावों ।  
पाइन साग पसान उठे, मम नाव उड़े कहते तुम पावो ।  
इह भाँत उचार पसार थोउ पद नाव बड़ाई के पार उठारे ।  
रघुनाथ महामुन भ्रात भसे मिथिसा पुर की पुनि घोर सिधारे ।  
पुर की द्विग प्राइ खरे अब ही मिथिसे सहि दूतन वाक उचारे ।  
भावत हैं रिसराज मुनी जुग वानक साथ हैं राज कुमारे ।

बाई पुनावतिह भी प्रभभापा घोर संस्कृत के पूर्ण विद्वान थे । भावा मीर छत्रों पर इनका पूरी प्रकार अधिकार था । इन्होंने मूत्र नामक वेद मूत्र मोक्षित्विह तथा राम घोर कृष्ण सभी की स्तुति की है ।<sup>१</sup>

बाई संतोषतिह भी ने सरस्वती तट पर बैठकर सम्बत् १८४८ में 'काम कोप जो घमर कोप का भापा अनुवाद है, सम्बत् १८५० में 'मूत्र नामक प्रकाश' सम्बत् १८५६ में 'अनुत्री गर्भ मंत्र नी टीका "रामावस" भी सम्बत् १८८८ में धारण्य करके सम्बत् १८९० में पूर्ण की । श्री मूत्र प्रकाश सूर्य' इसमें बसों मूत्रधर्मों का इतिहास बीबन घोर सुदाधि का वर्णन है । इसकी रचना का धारण्य सम्बत् १८९२ में हुआ घोर सम्बत् १९०० में समाप्त हुई । बाई संतोष तिह भी ने श्री काशी में विद्या पाई की । इनकी रचनाओं में संस्कृत प्रज्ञ प्यरसी घोर पंजाबी भाषाओं के बहुत सभ्य घाते हैं । भापा अनुवाद में वे कितने प्रवीण थे इसका उदाहरण देखिये । मूर्च्छहरि के नीति सतक के सतोक का भापा अनुवाद देखिये ।

मूत्र श्लोक —

समेत विकृतासु तैसमपि यस्ततः पीडयन्,  
पिवेक्ष्य मृमत्तृप्रिणकासु सलिसं पिपामाहितः ।  
कदापिदपि पर्यटन्त्य दाविपारण मासादये-  
न्न तु प्रति निबिष्ट मूर्खजन विस्तमाराधयेत् ॥

(१) मूत्र का द्विती लक्षित लेखक कल्पराज गुप्त पृ ७१ से ७४ तक ।

भाषा अनुवाद —

सिकता मर्हें से चतन कर तेस जु निकसावै ।  
कमठ पीठ पर भ्रान्त किहु बहु बास समावै ॥  
सिस पर रासम ससे के उगबाम बिलाना ।  
तो दुष्टनि के हृदय में गुन करह महाना ॥<sup>१</sup>

१८४३ ईस्वी में जब महाराज कैबल भाई चरमसिंह की मृत्यु के पश्चात् अंगरेजों ने कैबल को हस्तगत कर लिया और चारों ओर घातक फंसे गया तो इसका बर्खन भाई सतीचसिंह ने इस प्रकार किया है ।

परी मूट कयस बिछे मिसे थोर बटमार ।  
घाप घापको भजि जैसे तजि पुर सब इन्वार ॥

रामायण से काव्य का नमूना देखिए —

बाणी वाक सुबर्ण में बिपाद वण समचन्द्र ।  
वीन मंड मंडित करा वन्दो पद धरविन्द ॥  
पूजा धरविन्द की दीनिन्द की धरिन्द की ।  
परिदन के इन्द की सुकषा रामचन्द्र की ॥  
पुनि प्रीष्म श्रुतु कीनो ओरा ।  
तप्त मई प्रतिशय चहुँ ओरा ॥  
तपहि हृदय जिमि मस्तर धारी ।  
त्यो तप गई भूमिका सारी ।  
मूषे जल कर्दम विहरानी ।  
जस प्रेमी उर सखी सिखानी ॥  
सहृत् भूरि बहु प्रमत्त धमूरे ।  
ज्यो मति प्रमत्त बिना गुरु पूरे ॥<sup>२</sup>

सम्वत् १८६३ में पश्चिमी तट पर सम्वत् १८६३ में महात्मा सिबबिर जी ने श्री जयमीनारायण का एक सुन्दर मन्दिर बनवाया जो ब्रह्मिण निर्माण कला का प्रति सुन्दर नमूना है । सम्वत् १९३३ में महाराजा फरीदकोट बलीचसिंह ने कुश्मेज भूमि का प्रमण करके धरस्वती तट पर अपने प्राण त्यागे बहूँ समकी सुन्दर समाधि और फरीद कोट हावस बना हुआ है । अंग्रेजी राज्यकास में सन् १८३२ ईस्वी से यह प्रथा रही कि जब प्रथम बार गवर्नर जनरल कुश्मेज पधारे तो पंचायत ब्राह्मणान् को पाँच छौ रुपये और गवर्नर प्राए तो द्वाँ छौ रुपये भेंट देते थे । महाराजा पीबी विक्रम रमचसिंह ने कुश्मेज नव निर्मास्तार्थ एक लाख बस हजार रुपये दान किए थे । मई १९२४ ईस्वी में केन्द्रीय सरकार के ऐसवे विनाम द्वारा कुश्मेज घाने बाबों पर एक घाना दर चार्ज टैक्स बनाना या बिससे

कि इस प्रकार इकट्ठा होने वाले रुपये से पवित्र तीर्थों की मरम्मत हो सके। इस रुपये के व्यय करने के लिए एक सलाहकार कमेटी बनी हुई है जिसके सदस्य सरकार मनोनीत करती हैं।

कुरयोग की संकड़ों से प्राचीन पंचायत ब्राह्मणान् ही एकमात्र बड़े संस्था हैं जो कुरयोग की रक्षा में प्रयत्न करती रही हैं। तीर्थों की जम और धनस सम्पत्ति की रक्षा करना यात्रियों और संनानियों की सहायता करना तथा जनता के चारित्रिक सांस्कृतिक और सामाजिक विमर्श कार्यों में योग देना पंचायत ब्राह्मणान् के मुख्य उद्देश्य हैं।



## राग-रंग में डूबा हुआ कुरुक्षेत्र

मंत्र ज्यों का राज्य हो जाने पर बानेसर में छांति स्थापित हुई और कुछ समृद्धि आई। उम् १८१२ ईस्वी से १८२० ईस्वी तक बानेसर में राग-रंग का साम्राज्य था। इसमें सन्देह नहीं कि १८२१ ईस्वी और १८०० ईस्वी में कुश्नोर प्रदेश में भवानक बुद्धिमान पद्म या परशु बुद्धिमान के पदवात् भी स्वयं उभाये चलते ही रहे। उस समय नगर के किसी भी नाम में जाने जाये राग रंग की महफिल बनी हुई है। उत्तर में स्वालेखर महादेव के मन्दिर और कुबेर तीर्थ पर, दक्षिण में कुश्नोर तीर्थ के नारकित बाट पर, सम्निहित तीर्थ के उत्तर पूर्वी कोण कुम्भी पर नगर में मोघाला के पास और पुणनी मन्दी में महादेव के मन्दिर के निकट कवित्त स्यास बम्बोने संनौत मुर्य और छांम की महफिलें बमती थीं। नगर के ब्राह्मण और वैश्य सम्पन्न थे। कहते हैं कि भाद्रमन कबी ने प्राची बाबिठ तीर्थ पर समझान के लिए पद्यरक्षियाँ बिछाकर परती मोस भी थी। वहाँ अब भी भाद्रमन कबी का समाधि मन्दिर बना हुआ है। उस समय के कवि मोनीश्वर बालकण्ठ ने छांय प्रणामी पद्य में पूरण मत्त रामायण राजा योपीचन्द्र घोलादे और कुबड़ी पुस्तकें लिखीं— जिनमें से पूरण मत्त और योपीचन्द्र दो प्रकाशित हुई और मात्र भी उन्हें जन साधारण बड़े भाव से पढ़ते हैं। कवि कृष्ण मोस्वामी ने पद्य में छांय बिलवर, बुबायब विष्णो कावेमधुकरम्ब और मुक्तकान्धी सिद्धे जो प्रप्रकाशित हैं। मिथ गोबरधन सारस्वत ने पद्य में छांय महामारत कृष्णलीला बोबपुर नरेश राजा बसवन्तसिंह माबोनसकामकंठला और हुन्ना सिद्धे जो प्रप्रकाशित हैं। कवि पंडित संकरलाल मुक्त ने पद्य में छांय पचनी मूर्य बाबल राजा मोरम्ब मत्त प्रह्लाद और मत्त मास सिद्धे जो प्रप्रकाशित हैं। कवि सम्राई नाथ ने पद्य में छांय महाराणा प्रताप पुष्पीचन्द्र चौहान राजा राजसिंह और सरयवासी राजा हरिश्चन्द्र सिद्धे जो प्रप्रकाशित हैं। ज्योतिषी पंडित तुम्नीलाब भी ने पद्य में छांय राजा हरिश्चन्द्र सिद्धे जो प्रप्रकाशित हैं। श्री बाबा रामकरण सम्पासी स्यास प्रणामी की कविता के सम्प्रदाय थे। परशु मेरी दृष्टि में कविता और मिहता की कसौटी पर उस समय का कवि सम्प्रदाय एक मुसलमान प्रहमद बन्ध जो जाति से कंचन या पूरा चपला है। कवि प्रहमद की कविता भाव और भक्तिपूर्ण थी। कवि प्रहमद ने पद्य में छांय रामायण, बममल कता बुबा चौहान सोरठ पचनी बम्बकिरण, नबलदे और कंब लीला

लिखे। एक भी पुस्तक प्रकाशित नहीं हुई। रामायण लिखते-लिखते साठ वर्ष की आयु में कवि अहमद की मृत्यु हो गई थी। मुख्यतः होते हुए भी हिन्दू धर्म शास्त्रों और वेदशास्त्रों में अहमद की श्रद्धा और उसका हिन्दी भाषा और ज्योतिष शास्त्र का ज्ञान अपूर्व और पर्य की वस्तु है।

रामायण में अहमद की कविता का नमूना देखिए। रामायण के आरम्भ में अहमद स्तुति करता है—

“नमो मणेश नमो धारदा नमो हंस बाहनी देव  
नमो रामचन्द्र जी नमो सिया नमो शक्ति नमो शिव,  
नमो सङ्गण जी हनुमत के बल को,  
नमो भरत नमो शत्रुघन जी नमो माई कोसल्या पतको  
नमो श्रेय मुञ्ज नमो पुरजत नमो महिष्वर, नमो सूर्य रथ को,  
नमो बाल्मीक नमो तुमसी दास नमो सर्व कविजन की मत को,  
मेरि ढको मादानी, नमो भादर गुरु ज्ञानी,  
नमन सभन को करत रामसीता मन ठानी ॥

दूसरी स्तुति इस प्रकार है—

एकवन्त दयावन्त गुरु गौरी पुत्र मणेश,  
तुम्हें रटत मुनीजन गुणी सकल सत नामादेश,  
गुरु तुम बिन कोई कारण नहीं यपता,  
सत नामादेश भात धारद बिन कृपा ज्ञान घट में रापदा,  
सत नामादेश तपे सूरज जो पूरव पश्चिम तक तपता  
सत नामादेश दासतुमसी मुख बरनी रामायण जपता,  
सीता कथ गाता करो भिस देव उहाता  
भादरसिंह का दिव्य मोग अहमद प्रभु चाहता ॥

जो रामचन्द्र के जन्म को कवि अहमद ने पूरे बखिष किया है—

प्राज इक्ष्वाकु के रथ में दशरथ के घर बीच,  
श्री रामचन्द्रजी प्रगट भए शस्त्र धर्म का सीध,  
प्रगट भ्रमुरों का विघ्न विहारन को  
पृथ्वी का भार उतारन को भक्तों का कष्ट निवारन को,  
घतमुग के बधन सुधारन को कौशल्या लाइ सड़ारन को,  
दशरथ घर जाए गगन में शहर सुगाए  
बठत देव विमान धान हरि दर्शन पाए ॥

कवि ग्रहमन्त्र बरक भी रामचन्द्र की जन्म कुण्डली में ज्योतिष का ज्ञान इस प्रकार दिखाता है—

राजन् श्री रामचन्द्र के जन्म का हमसे सुनों बरतान,  
चन्द्र, बृहस्पति, बरक के पड़े सगन प्रस्थान,  
तृतीय घर राहु कन्या का प्राया,  
फिर भीये धनि तुसा का है सब सुख दायक बारब छाया,  
फिर पञ्चम मंगल मकर का है घर सप्तम में केरा पाया  
है शुक्र मीन के सहित केतू सूर्य मय का बतसाया,  
वृष का शुभ प्यारे ग्रह उच्च के बहे सारे  
रामचन्द्र से सास सुफल हैं जन्म तुम्हारे ॥

कवि ग्रहमन्त्र की भाव प्रकट करने पर बड़ा अधिकार था। उनका रचित इतिहास सांग जयमल फता बीररत्न प्रधान है। सांग जयमल फता के भारतम्भ में कवि ग्रहमन्त्र स्तुति करता है—

मेरि टेक दीन की राक्षसो सत पत गत के सग,  
प्रष्ट देव गरुपति प्रथम कहैं रजपूती जग,  
बिन्दों के पीघ घड़ों का है मलका,  
मुठ मेड़ा धूर राठीरों का भीगते मकर के दस का,  
बिलीङ्क टूट बिध्वंस हुई कहैं कारण मुगलों के छसरा  
दक प्रथम पावशाह का किस्ता उस नगर जोयपुर के घल का,  
बिगडेगा खेड़ा गंग कृत हो उसमेड़ा,  
राणा जयमल साध मासदे उठा बखेड़ा ॥

सांग जयमल फता में जयनाम की दूसरी स्तुति कवि ग्रहमन्त्र इस प्रकार करता है—

उस गुस छासा को मेरा पहले हा प्रणाम,  
रूम रूम में बस रहा नहरों में असहाम,  
मेरा आदाब हो उस धिनासो को  
द्वितीय प्रणाम थी रामचन्द्र भीर नील कण्ठ कैसाशी को,  
रघुनन्दन स्वामि को वन्दन धनस्याम पध बृजवासी को,  
तुम हे पूर्ण ब्रह्म पार करो ग्रहमन्त्र भररण के दासो को  
निर्भय धोकारे सदा हम दास तुम्हारे  
रजपूतों का सांग समा में बेलें सारे ॥

उस समय बानेश्वर नगर में साँप करने वालों के दो प्रसाढ़े थे। एक प्रसाढ़े का नाम भादर का प्रसाढ़ा था। भादर सिंह जाति से बड़ई था। उसके प्रसाढ़े का साँप पुणजी प्रनाम मन्त्री में जपता था। प्रनाम मन्त्री को भादरकल सब्जी मन्त्री कहलाती है। में मन्दिर महादेव धीर एक कुर्मी इसी प्रसाढ़े का बनवाया हुआ है। कवि महमद बख्श भादर के प्रसाढ़े का ही लिखाई था। भादर के प्रसाढ़े का विशेष गुण कबिता थी। दूसरे प्रसाढ़े का नाम मानक का प्रसाढ़ा था। मानक चन्द्र जाति का वैश्य का जो हाथी बाले भी कहलाते थे। मानक के प्रसाढ़े के साँप पोगाता के निकट होते थे। मानक के प्रसाढ़े के विशेष गुण संगीत, स्वर, ताल धीर धाब थे। दोनों प्रसाढ़ों में सापडाट की होइ चलती थी। दोनों प्रसाढ़ों के साँप एक ही समय में होते थे। होमी के दिनों में बानेश्वर का राम रंग, गस्ती धीर भादरकला पराकाष्ठ पर होती थी। सूर्यास्त हुआ अंधकार ने अपनी कामी भादर संसार पर फैलाती भादरक की, इसके-दुनके तारे मीसे भादरक पर निकसे कि बाटा बरल भादरके बालों के बुँदबुँदों की इन भुन धीर जनासम से मुबारिह हो उठा। मर्ष रात्रि तक भादरके बाले गाँठे धीर भादरके समस्त नगर की गलियों धीर बाजारों में महफिने जपाते धीर रक्षिक धोवाधों को प्रयत्न करते मृत्युते रहते। मर्ष रात्रि तक नगर पर भादरके बालों का अधिकार रहता था। प्राठ बाह्य भूर्त्त में मानक धीर भादर के प्रसाढ़े साँप दिखलाने कम बाते। प्रायः मह साँप दोपहर तक चलते परन्तु कमी-जमी साँपकाक तक भी साँप होते रहते थे। समस्त नगर सिघट कर मानक धीर भादर के प्रसाढ़े में इकट्ठा हो जाता था। दोनों प्रसाढ़े के बिसाड़ियों में बोक-बोक भी चलती रहती थी। प्रसाढ़ों के साँप-साँप नाचरिह भी दो दलों में बँट जाते थे। स्वाँगों का भी गलेस होने से पूर्व दोनों प्रसाढ़ों के बिसाड़ी बिसाड़ियों बहिन सरस्वती नदी-तट पर बने पाटरा के मन्दिर में जाते फिर बिसाड़ी साँप की वैधभूषा बढ़ने बाठ बजाते सुनगिब्रत रवों पर सवार होकर स्वालीरवर महादेव की भादरकला के लिए बाते थे। पबिन हीनों पर संगीत की महफिने प्रायः बाह्य माध तक जपती थी। स्वालीरवर महादेव के मन्दिर पर भी महमद संवत धिरि धीर उन्निहित तीर्थ पर भी बाबा रामकरल संग्याती धोवाधों को संगीत धीर क्माकों से मुग्ध करते थे बाँतों धीर धोवा बहुसख्या में बैठे हैं धीर मध्य में तम्बाकू का दर है धीर बंध पर क्याक धीर कबिता हो रही है।

सात पात के अटोरेपन में भी बानेश्वर के बातरिक कुल कम नहीं थे। ज्योनाँरें (बाबतों) छ. छ. मान तक चलती थीं। क्योंकि प्रायः बाह्यल जपने यजमानों के घर दूसरे प्राणों में नष्ट हुए होते थे और जब जब बहु भाते ज्योनाँरें में सम्मलित होते रहते थे। ज्योनाँर का भीगलेस होने से पूर्व ज्ञान पात की समस्त सामग्री एक कमरे में रख दी जाती थी। उस कमरे को भंडार कहते थे। धाना परोसने वाले जब भंडार में जाते तो सामे वाले धामन्निठ कोनों में से कुछ सोय डार रोक लेते थे। यह एक संघर्ष धारम्भ हो जाता था। परोसने वाले बलपूर्वक बाहर जाने का प्रयत्न करते धीर जाने वाले बलपूर्वक जनको बाहर न जाने देते थे। इन संघर्ष में मर्षो जाने की सामग्री खूरा हो जाती। यह या तो परोसने वाले जाने वालों पर विजय प्राप्त करके बाहर जा जाते जबका हार मानकर बाहर जाने। इन संघर्ष की बानेश्वर की भाषा में बरझा कहते थे।

कोई पर ही ऐसा होना होगा नहीं तो प्रायः समस्त परों में बादाय विस्ता घोर क्रियामिद बास कर ऋतु-भनुमार खान-गान भी सामग्री बनती भी घोर जो बाजार में इसबाइयों की दुकानों पर खाय जाता बहु पृथक् । नगर में कई घण्टाक नुस्ती यतका घोर ताठी बनाने के भी थे । मेसों पर बस कर कृशियों के दगंस होते । पुष्य पर्वों के अमूर्तों पर ताठी तसबाद, पटेबासी घोर गतके के हाथ दिखाए जाते थे । यह धरप है कि उन दिनों पानेसर नगर बास्तव में पानेसर नगर था । यद्यपि धामकृत नगर की जनसंख्या उच समय ही जनसंख्या से कहीं अधिक है परन्तु यह बात कहीं जो ठक थी ।

उच युग में पानेसर राग रंग में हुआ हुआ लयनऊ के साह बाबिदपत्नी के युग से कम न था । बैधिकरी के बनाने के घोर बैधिकरी का खान-गान था । न तो बीबिका की बिन्ता थी घोर न संसार का एम । मित्रता ऐसी कि भासु भर निमा दी घोर उन्तु ऐसी कि एक बार सड़ पड़े तो कमी घन् का भर तो प्रसंग मुहन्ने की घोर भी मुह न क्रिया । सखा शक्त बा घोर सन्ने सोम । उनकी मित्रता घोर उन्तुता दोनों में मर्यादा थी ।

उसी काल में एक घोर उन्तु-कवि घोर बिज्ञान मीर इनायतपत्नी साहित्य भी हो गए हैं । उन्होंने पाठ पुस्तकों उन्तु कविता में लिखी हैं । पुस्तकों क नाम हैं । मनवीनए हामी खधीरा इनायतपत्नी (हिन्दी भाषा में), बीबाने इनायत बाइमासा किस्सा साह इम ठारीख इबरतमभास पानेसर का कमान ब अबास हासाठ खपनाकाम घोर अपकसए । इन पुस्तकों में केवल हासाठ खपना काम प्राप्य है शेष नहीं मिलती ।

## कुरुक्षेत्र में मर्यकर दुर्मिक्ष और वाळ

२७ नवम्बर, १८८३ ईस्वी १९ मुहर्रम १३०३ हिजरी को शुक्रवार की राति में धाकाघ से प्रतयिगत टारे टूटे । ऐसा जान पड़ता था जैसे धाकाघ पर कुलम्बिर्मा छूट रही है । राति भर यही दृशा रही । पानेसर पर जहाँ मनुष्यों द्वारा संकट घाए जहाँ मीसम ने भी कुश्म ठोके । सीमागय से उच समय की दशा पर पानेसर के एक मुनसमान उन्तु कवि ने प्रकाश बताया है । इस कवि का नाम बा हाजी मीर साहित्य उईयब इनायतपत्नी पुत्र उईयब मरदानपत्नी साहित्य बुखारी पीसती काररि पानेसर । इस पुस्तक का नाम है 'ठारीखे खपना काम माए हासाठ खपना काम' । यह पुस्तक उन्तु कविता में है जो १९ १ ईस्वी में खधीरा बिना प्रख्याता में छपी थी । १८९९ ईस्वी घोर १९०० ईस्वी में पानेसर में प्रथम तो मर्यकर दुर्मिक्ष पड़ा घोर प्रगले बर्ष बाइ घाई की शिउके परिणाम स्वरूप न केवल पानेसर नगर यद्यपि कुरुक्षेत्र प्रवेश बिसकुस तिख पट हो गया था ।

"इम दुर्मिक्ष में बलवान बलहीन हो गए । मोटों के मुटापे भङ्ग गए । सर्बियों तर्ब धकड़ बाजों की प्रकड़ जाती रही । लोग बेस-ठमाडे भूम गए । फस-फूस सूख गए । तावों के दूब कम हो गए । जारों मीर केवल मूख का राज्य था ।

सौ उन्नोस छप्पन साल हुआ ।  
 अब नासल छप्पना कास हुआ ॥  
 इस साल से जग पामाल हुआ ।  
 ससार का खस्ता हास हुआ ॥  
 यह कोरा कास बस पड़ा ।  
 घर जगल सब नर बस पड़ा ॥  
 कुछ खलक पे पदमों सख पड़ा ।  
 ना उड़के मुँह में पख पड़ा ॥  
 यह कहत निहायत सख पड़ा ।  
 बरबग्यत बेघा पे बन्त पड़ा ॥  
 वनवन्त सजे बस खोर घटा ।  
 फल कुन्ती नाटक खेस हटा ॥  
 सब बकि भूले वांग पटा ।  
 जब कास ठाट से मान बटा ॥

पकान लो पढ़ने ली पढ़ के परलु छप्पना कास अधिक सकत है । इसमें न लो जगमों में पाम न जेठों में पनाम हुआ बिये खाकर मनुष्य या जानवर जीवित रह सकें । बिलकुम बर्षाकास में बर्षा बन्द होकर आरबी ने सजस्त पनाम पाख भूमा दिए । पृथ्वी की गुरली की यह बमा है कि कहीं हरियाली का नाम-निघाम नहीं । जैसे कि बरती है ऊपर भाग जमा कर ठाकी बना दिया है ।

सावन में बागिया माह हुई ।  
 यह मोहूह कुल छ माह हुई ॥  
 इतन में जनना ठबाह हुई ।  
 घर बतन छोड़ बर राह हुई ॥  
 बरसात में बादे छिडी पनी ।  
 हुई मुदक जरामत फूनी पनी ॥<sup>१</sup>

इस काम में पनाम घोर पाव की छोड़कर सब बस्तुओं की बन्दारी हो गई । जोनी बबर घोर परती तक किमी ने नहीं पूछे । सोपों के कारोबार बन्द हो गए । मारबाड़ी घोर पचापे बाति क सोप हवारों की सकना में पानेसर आकर भूबों मरने लगे क्योंकि यहीं लो पहने ही बहाम बड़ा हुआ था । सरकार ने कुछ जगश दख्खा किया कुछ घरने गजाने से दिया । नवम्बर १८६६ ईस्वी में तीन लाख बजर इकठ्ठ करके कुम्हलें तीर्थ की सुरवाई धारम्भ हुई बिघमे मूर्तों के देन पमने मन । पानेसर में बुनिध कैम्य हाजा गया । सरकार ने राग्य-कग छोड़ दिया । बीनों बीनों के लिए हवारों ग्याया दिया । बाजान से पानो की

(१) शरीर इन्धन का लैखल घोर दख्खान्ती १५७ \* \* १ २७ ।

प्रवेष्टा सास रंग की रेत बरखती थी। शोगों ने मकान, परती, नहने सड़कियाँ बहने घोर  
शक्तियाँ बेच दीं।<sup>१</sup>

जनवरी १९०० ईस्वी में बर्षा हुई। शोगों ने शेत जोतकर बो दिए।

प्रथम तल्ला रव ने बसाए दिया।  
जो माघ में मिह बरसाए दिया ॥  
धरती पर रंग लगाए दिया।  
पृथ्वी को सबर धंधाए दिया ॥  
इस मिह से साढ़ी पार हुई।  
मह सुदिमां घर घर वार हुई ॥

परन्तु ९ अप्रैल १९०० ईस्वी में जब खेती पक कर तैयार हुई तो बड़े जोर से बर्षा घोर  
घोसे पड़े। एक-एक घोसे का तार बो सेर का था। सावन घोर भारों की शक्ति बर्षा  
हुई। पचकी खेती भी घनात्र बेठ में ही बरबार हो गए।

जय पक खेती तैयार हुई।  
सब बारिध मूससभार हुई ॥  
घोर धौसों की बौछार हुई।  
सब गिर खेती मिस्मार हुई ॥  
गुण हुमा यह बारिध घबैती का।  
हुमा नादा मुँह भाई खेती का ॥<sup>२</sup>

एन प्रथमकर शार्तों को देखकर कवि इनायतप्रभी मनबान् से प्रार्थना करता है—

है तुझ से इनायत की दुभा।  
मेरा पतन घानेसर बसे सदा ॥

इस प्रकार सम्बत् क्षयने भीठ गया घोर सम्बत् सत्तावन का प्रारम्भ हुभा।

प्रथम सास सत्तावन चढ़ प्राया।  
नहीं मुँह भी मिह ने दिखलाया ॥  
अब सूख न बादल गज्जर प्राया।  
तव अनता का दिस धबराया ॥  
बैसाख, जेठ अब गुजर गए।  
उठने को रबी के उजर गए ॥  
तव हूम पे करम मौला का हुभा।  
सम्मत का नकशा विया जमा ॥

(१) शरीरिन्हे क्षयना बाल बेल्लक नीर इनायतप्रभी पृ १२, २४ २१।

(२) " " " " " " " ५४ ४०।

प्राक्षीर साढ़ से मिह भरसा ।  
 दुनिया का दुखड़ा दर्द गया ॥  
 फिर मिह ह। मिह नह मिह पढा ।  
 दिन रात वषा बारिश का कड़ा ॥  
 सब भरसी पानी पानी हुई ।  
 रो बड़े खूब तृणयानी हुई ॥  
 हो जस बल धब रवानी हुई ।  
 दुनिया को विपद पुरानी हुई ॥<sup>१</sup>

१६ जून १९०० ईस्वी को फिर वर्षा हुई। काली पटा ऐसी छाई कि दिन में रात हो गई।<sup>२</sup> १५ जीमाई १९०० ईस्वी को फिर जोरदार वर्षा हुई कि बाढ़ भा गई। बाढ़ का बल पानेसर को बस्ती तक धक गया। पानेसर एक टापू बन गया। जो सोए नहर से बाहर गए हुए वे वे पानी के कारण नगर से छूट गए और अपने प्राणों की रक्षा के लिए कुर्छों पर चढ़ गए। तीसरे दिन जब जल कम हुआ तो घर बापिस आए। बार मनुष्यों को, जिनमें हमारे बर्ष कला का सम्बरदार मोहम्मद भी था हूय स्वयं पानी से निरास कर जाए। पानी का घोर इतना बा कि काम पड़ी घाबाब मुनाई नहीं देती थी। पानेसर में दो क्यूव ऐसे बाढ़ के बल द्वारा खुदे कि बस्ती का बड़ागड फूट गया। प्रथम नहीं और दूसरी अगस्त १९०० ईस्वी को पुनः जोर-जोर से वर्षा हुई। वर्षा के परिणाम स्वरूप बीमारियों फूट पड़ीं। कोई परिवार और घर ऐसा देख न रहा जिस पर बीमारी का दुष्प्रभाव न पड़ा हो। घर के घर और खानदान के खानदान समाप्त हो गए।<sup>३</sup>

१

दुर्भाग्य भोगे वर्षा बीमारियों और बाढ़ के कारण पानेसर नगर उखाड़ हो गया। बनबसा में दिठनी कपी हुई उतका बर्लंग इस प्रकार है।

## ब्राह्मण

त्रिगुणादत्तों के तीस पर ये सब हम खानदान का एक भी व्यक्ति देख नहीं रहा। बड़हलों के सो घर ये सब एक मनुष्य भी बाकी नहीं है। छिद्रों के तीस पर ये सब कोई एक बंश से नहीं है। कचरोमियों के जातीय घर ये सब एक भी प्राणी देख नहीं। ठेकमान खानदान के पचास घर ये सबके सब साढ़ हो गए। मङ्गलियों के सत्तर घर ये जिनमें से केवल एक व्यक्ति देख है। मंसुर्छों के सत्तर घर ये सब साढ़ हो गए। घुरों के साठ घर ये सब दो घर रह गए हैं। इसी प्रकार बाकमान काठ बीसव, सोने और मोटे सब बाब बाब समाप्त हो गए।

(१) तारीख खानदान काठ के कला मीर दखलदखली पृ ५२ ।

(२) " " " " " " " ५५ ।



## महाजन खनिये

शोणियों के छ. पर से सब समाप्त हो गए । बाबत हथारियों के साठ पर से सब कोई रोप नहीं । सोनों के घाठ नर से सब कोई नहीं । मिरजापुरियों के दस परों में से केवल चार रोप हैं ।

## खत्री

सबस खत्रियों के चार ही पर से जो सब समाप्त हो गए । मोसड़ी खत्रियों के तीन ही पर से सब एक भी रोप नहीं ।

## राजपूत

राजपूत राजपूतों के दो ही परों में से कोई रोप नहीं ।

## खस

ही पर खसों के से बिनमें से केवल एक पर बाकी है ।

## कायस्थ

कायस्थों के ८० पर से सब केवल दो हैं ।

इसके अतिरिक्त और भी बहुत से खानदान के अंसे जमी खोड़ इत्यादि बिनमें से एक भी प्राणी जीवित नहीं है और बहुत से खानदान ऐसे हैं जो बहुत बड़-बड़े के परन्तु अब बहुत ही कम लोग उगमें से रोप हैं । बाँसहर नगर में एक भी खानदान किसी भी जाति का ऐसा नहीं है जिसकी जनसंख्या पर अपने काम का दुप्पमान न पड़ा हो ।<sup>१</sup>

(१) पण्डित राजाराम शरदाचल सुब्रह्मण्य शंकरलाल राममहाल कुवचैव भासु पर सर्व और पण्डित मैट्टेयच ज्योतिष इ वा के कहने के आधार पर ।

## कुरुक्षेत्र रक्षार्थं अग्रजों द्वारा दिए गए फ़रमान

कुरुक्षेत्र के ब्राह्मणों ने गवर्नर जनरल से प्रार्थना की कि कुरुक्षेत्र के तीर्थों से मछली न पकड़ी जाए, सींगदार पशु न मारे जाएँ और तीर्थों के वृक्ष न काटे जाएँ । हिन्दू एक्की मेंधी ने कुरुक्षेत्र की पवित्रता और उस भद्रा को जो कि हिन्दू मानेसर में रखते हैं पर विचार करते हुए प्रयत्न होकर यात्रियों को आवेष्ट किया कि ब्राह्मणों की इच्छा के सम्मान प्रति स्वरूप कोई ऐसा कार्य न करें जिससे कि इनका मन कुञ्चित हो ।

१० जनवरी १८३२ ईस्वी

हस्ताक्षर—जी० वसन्त

पोलिटिकल एजेंट अम्बाला

×

×

×

बाहिर दरमबाहे मानेसर तीर्थ हाए बस्मार परस्तिषमाह  
हुनुवान धन्व न हंभाम रीतक भण्डरोडी नबाव मुस्ताव  
मुषस्नी धनकाव घाट नवनेर बनरन बहादुर रामेइकबालह  
न मुकाम मानेसर न मुजीव मादका बहाएणान् न हुनुवान सकना  
मानबा बराए मुहाफजठ माहियान न जानबरात न हायम  
तयूर नवीरह धन पेसयाह साहिव महतधम धनया न  
नखर घासाईति रिघाया न पासे मकहव धनगत ममानठ कुस्नी धुवा  
भूर । के कसे माहि धन्व तालाव न बवाहव परिछत न दरखत न  
बवाहव तरा खीद न जानबरात तयूर न बवाव रा न बवाहव कुस्त ।  
मिहान्ना मुठावीक हुकम साहिव धामीघान मुषवरम धनया इस्तहार  
बादा नि धनव । के हिस्तुन हुकम साहिव बरि बाव प्रहृदि धन  
सावर न बारव धानबा न वा सकनाए धानबा के बरलमाछे हुनुवान  
बासद न तकलीक न इका रसानी हुनुवान न गरिछतन माहियान  
बर बिमाक मकहव धानहा न तरापीदन भनबाव मुकामाव तीर्थहाए  
न गरिछतन माहियान धन तालावहाए न कुस्तन जानबरात न  
तयूर न तमूस पाघोकवी नवीरह मुठकव न गरदव ।<sup>१</sup>

यकम धर्मन १८३३ ईस्वी

(१) कुरुक्षेत्र तीर्थों के बचनी छत्र पर फ़रमान पर संविष्ट फ़रमान ।

रहा जो बप की कोई बटना नहीं हुई थीर न ही मीने कभी वहाँ जो बप होते देखा । मुझे मसी प्रकार याद है कि इस बीच मसी का मौसम होने के कारण कोई सेना पिपसी में नहीं ठहरी । यह रिपोर्ट लिपटी कमिशनर धम्बासा को भेज दी जावे ।

हस्ताक्षर—सैयद मुहम्मद रशीद  
एलिस्टेट जिला सुपरिन्टेण्डेंट जिला देहली

×

×

×

घाठ दिसम्बर १८७७ ईस्वी को भेजे गए परवाने के अनुसार मैं घोषण पूर्वक बयान करता हूँ कि मीने पिपसी में कभी जो-बप होते नहीं देखा । सार्यकाल की चीर के समय मैं बहुत बार पिपसी को जाँचें थीर बूमठा या परगु मुझे जो-बप के कोई ठाँव दिख नहीं मिले । हाँ यह मुझे याद है कि पुरानी हडिबियाँ वहाँ पड़ी रखी थी । यह बार बीबारी देवीबाघपुर गाँव की थीर कच्चे पोखर के पास थी । जब मीने वहाँ जो-बप ही होते नहीं देखा तो वहाँ माँस विक्रते कैठे देखा । अब घपची सेना वहाँ ठहरी थी तो बानेशर क नहीं बरिफ यह कछाई को सेना के साथ होते थे पकाव के एक कोने में जो-बप करते थे । मैं पिपसी में प्रथम फरवरी १८६५ ईस्वी से १५ मई १८७३ ईस्वी तक रहा । इसलिए यह बयान बनने घाठ बप के अनुमान क बस पर दे रहा हूँ ।

हस्ताक्षर—बहादुर हसन तख्सीलवार

×

×

×

## धम्बासा

८२ १८७८

घाठ दिसम्बर १८७७ ईस्वी के परवाने द्वारा सी पर्य घाडानुसार जो मुझे सरफ घबाघत द्वारा प्राप्त हुपा के बिषय में मैं बयान करता हूँ कि मैं जो दिसम्बर १८७३ ईस्वी से फारम्भ फरवरी १८७५ ईस्वी तक पिपसी रहा । मैं घोषण पूर्वक कहता हूँ कि जहाँ तक मेरी स्मृति मेरा साथ देती है वहाँ तक मीने कभी बानेशर के कछाईयों को पिपसी में जो-बप करते नहीं देखा । प्राय को माँस बंधेय सेना प्रयोग कछी थी परगु उनके साथ घपने कछाई होते थे । सेना के जाने पर मीने न जानबर पारने की बार बीबारी देवी थीर न जो

मांस विक्रिते देखा । सर्रापे को निरुद्ध एक दुकान की बिस पर कगाई बकरे धीरे मेड़ का मांस बेचा करता था । इसके अतिरिक्त मैंने कुछ नहीं देखा ।

इस्ताधर—बुलबुलहीन मुनसिफ

×

×

×

## प्रार्थनापत्र

हसम बख्सा, इलाही बख्सा इत्यादि कि धानेसर और पिपली में जानवर मारने की आज्ञा बी जाए

धानेसर शहर में हिन्दुओं की बहुसंख्या है और पिपली के पास है । पिपली में जागड़ों को मारने की आज्ञा देना हिन्दुओं के मन को दुःख पहुँचाना और उनके धार्मिक विश्वासों के विरुद्ध जाना है । इसके अतिरिक्त वहाँ आबकल कोई बंधणामा भी नहीं है । प्रार्थना पत्र बख्तर दायित किया जाए ।

घाठ मार्च १८७८ ईसवी

इस्ताधर—मेजर ए० बी० गुडन  
ब्रिटी कनिश्जर अम्बाला

×

×

×

## कैम्प पिपली जिला अम्बाला—

विषय—प्रायमा पत्र इलाही बख्सा पुष और घरश, अकधर पुत्र लखी बख्सा इत्यादि कसाई धानेसर पिपली के पास गी अधार्थ अध-शासा बनाने की अनुमति बी जाए ।

अधालत ब्रिटी कनिश्जर अम्बाला

धानेसर के आइयाँ और कसाइयों के सामने मैंने यह स्वात देखा कि जहाँ क भिन् प्रार्थना की गई है । मैं तहसीलदार धानेसर की सम्मति से पूर्णतया सहमत हूँ और यहाँ बंधणामा खोलने की आज्ञा नहीं देता । प्रार्थना ना मन्कूर । यदि प्रार्थी किसी धीरे स्वात के के भिन् प्रार्थना करें तो कर सकते हैं ।

१३ × १८८७ ईसवी

इस्ताधर—जे सी० काउन  
ब्रिटी कनिश्जर अम्बाला  
कैम्प पिपली

से भी रोके गए हैं और इसलिए क्याल नहीं किया जा सकता कि वे बचते वाईरि मुकदमा किसी ठौर से उठ जायह पर कारीज के और दावा कर मूखे हास वारे बफा ४२ ऐक दावाएली छाम माना है क्योंकि मुहियान वावरली वानी कम्जा ना बाबा कर सकते है । सिबाए इसके मिस्तजात मुहस्ता बकीस मुहानयहम मुग्दरवा कँसभा साहिब किस्तिदुबट बज से बहिर होता है सिबाए पहली प्रयासत की इजाजत व मुजिव बफा १० जाम्बा बिकानी ली जाती ४७० मुहियान बतोर क्रायम मुकाम जुमसा मुसलमान के बाबा इस्तक्राक व इस्तेमाक ईबागाह का नहीं कर सकते । बस हम कँसभा बहाल रखते हैं और प्रपोल खारिज करते हैं । खर्चा-व बीमे प्रपासाट । प्रपासाटी की प्रसासजनत समाप्त हुई । साहजाबायम रिस्वोबाध की तरफ से हाजिर हुआ ।

× × ×

१७ दिसम्बर १८८८ ईस्वी को साहिब डिप्टी कमिश्नर ने हुजब किया कि मुसलमान पढ़ाव पिपसी से माँघ जाए और प्राम ठौर पर बानेघर में माँघ करेबात करने की मुमानत हुई ।

× × ×

२३ मई १८८९ ईसवी को मुसलमानान की तरफ से मोस्त की दुकान के लिए इजाजत उलव होने पर मिस्टर कनकटव साहिब डिप्टी कमिश्नर प्रम्बाला ने नामपूर करमाई ।

× × ×

हिब ऐक्सीमेंसी पत्राव के गवर्नर साहिब अपने बर्षा ऋतु के बीरे पर ३ अगस्त १८२१ ईस्वी को बानेघर पबारे । यह हिन्दुओं के प्रति प्राचीन ऐतिहासिक पवित्र तीर्थों और मन्दिरोँ को बैसकर बहुत प्रसन्न हुए । उन्होंने बीर्छोंद्वार समिति की प्रार्थना पर कुर्सेन पुस्तकाधय की भाचारधिभा रखी । इस सुभावघर पर बहुत स बाह्यण पुरोहित पवित्र और सनाठन धर्म महामण्डल के नेताओं ने गवर्नर साहिब का स्वागत किया । अपने भावमत की स्मृति में सर ऐडवर्ड मैकमेवन के सी ए० घाई० के० पी० घाई० ने २३० रुपए बाह्यण पंचायत में उरी प्रकार बाँटने को लिए जिस प्रकार गवर्नर बनरल इच्छिया के २०० रुपये १८५१ ईस्वी में बाँटे गए थे । गवर्नर साहिब की प्राथा है कि सरकारी बज्जर जो इस

स्वान पर धार्य इसकी पवित्रता का भली प्रकार ध्यान रखें और  
यानेदार तथा उसके पास पास के ऐतिहासिक और प्राचीन मंदिरों  
इत्यादि की रक्षा कच्चे में सहायता दें ।

पब्लिक हाउस साहौर

१४११ १९२१

हस्ताक्षर

जे० सी० एस० बलेक मेजर  
प्राइविट सेक्रेट्री पब्लिक पन्ना

×

×

×

डिप्टी कमिश्नर बिना करनाम की ओर से सा० बेनीप्रसाव उप-  
प्रधान म्युनिमिपस कमेटी और दूसरे प्रार्थना-पत्र पर हस्ताक्षर करने  
वालों के नाम हिन ऐक्सीसेंसी पब्लिक पन्ना का आज्ञा-पत्र नम्बर  
७३६/बी० जारी करनाम २६ मई १९२५ ईस्वी ।

आपके प्रथम मार्च १९२४ ईस्वी के प्रार्थना-पत्र पर मुझे आज्ञा की  
गई है कि पब्लिक साहित्य कौंसिल सहित यह आज्ञा देते हैं कि डिप्टी  
कमिश्नर को धारण दिया गया है कि ईव पर बलि दिए गए बकरे का  
मांस पिपनी से धबेरा हो जाने के परचात् एक विशेष मास से नगर  
में लाया जाए, जिससे कि दूसरे लोगों का मन हुआ न हो । आज्ञा-  
पत्र की एक प्रति जो मैंने कमिश्नर धम्बासा डिबीजन की सम्मति  
से पब्लिक की धारण-युक्ति के लिए प्रकाशित की है आपको भेजी  
जा रही है ।

२४४-२५

×

×

×

हस्ताक्षर— डिप्टी कमिश्नर

## कुरुक्षेत्र : एक सामान्य परिचय

कुरुक्षेत्र देहली व उत्तर में १९ मील और मम्बामा के दक्षिण में २४ मील देहली-वानी पथ मम्बामा रेलवे साइन पर जंक्शन स्टेसन है। कुरुक्षेत्र स्टेसन पर पैसिजर एक्सप्रेस और मेस गाड़ी टहरती है। बी० टी० राड के मार्ग पिपली से कुरुक्षेत्र तीन मील पक्की सड़क पर पश्चिम में है। कार और बस हाग भी कुरुक्षेत्र आया जा सकता है। कुरुक्षेत्र से पीर को रेलवे साइन जाती है। कुरुक्षेत्र से पक्की सड़कें पेहवा झंसा और पिपली साइबा यमुना तगर होकर सडारनपुर और हरिद्वार जाती है। कुरुक्षेत्र स्टेसन पर तांगा बस और सार्ड क्रिम रिक्शा मिल जाते है। कुरुक्षेत्र स्टेसन से निकलते ही यस्ती आरम्भ हो जाती है।

### यात्रियों के ठहरने के स्थान

कुरुक्षेत्र में यात्रियों के ठहरने का कोई सुव्यवस्था नहीं है। जिस प्रकार धर्म धर्मस्थानों पर सुन्दर धर्मघासाएँ बनवा होतम हैं और उन धर्मघासाओं का सुचारु रूप से प्रबन्ध हाता है उस प्रकार का कोई प्रबन्ध सरकार बनवा जनता द्वारा कुरुक्षेत्र में प्राय नहीं ही है। ऐसा जान पड़ता है कि भारतवर्ष के धर्मियों एवं सरकार का ध्यान न ता इस ओर कमी गया है और न किसी ने ध्यानित ही करपा है। यथाकथा थी पथामत ब्राह्मखान्द रजिस्टर्ड कुरुक्षेत्र जो कि कुरुक्षेत्र के धार्मिक स्थानों एवं तीर्थों का संरक्षण व प्रबन्ध करती है, सरकार और जनता का ध्यान इस कमी की ओर दिसवाती रहती है परन्तु अभी वह अपने प्रयास में सफल नहीं हुई। वास्तव में कुरुक्षेत्र में एक नही धर्मिणु काफी सुन्दर धर्मघासाओं और होटलों की धारव्यकता है।

कुरुक्षेत्र में एक बड़ी घनाब मण्डी सुभाप मण्डी राग डाक और टेलीफोन-बद, स्टेट बैंक और सेन्ट्रल कोषापरेटिव बैंक पुसिस स्टेसन घहसीस एच० बी एम० कोर् बी० डी को धार्मिक बर्ज के दो धार्मिकाले घाठ खैमर, एक प्राथमिक स्कूल पंजाब सरकार हाय और वा प्राथमिक स्कूल तीन हाई स्कूल एक सिनेमा हात और कई बाजार तथा कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय है। प्रायः रात-दिन बहस-पहस रहती है। कुरुक्षेत्र में ही बसों का मड्डा है।

### धानेसर शहर

कुरुक्षेत्र रेलवे स्टेसन से सबा मील पश्चिम में धानेसर शहर है। एक पक्की सड़क कुरुक्षेत्र और धानेसर का मिलाती है। वास्तव में धानेसर का नाम महादेव के नाम पर स्थाप्रीरवर वा जो विगड़ते-विगड़ते धानेसर बन गया। कायबात मात में धाब भी धानेसर

शहर का नाम नहीं है बल्कि मौजूद बरतें कभी बरा खुरद और बरा बेड़ा हैं। इन तीनों बरतों को मिलाकर पानेसर शहर है। पानेसर शहर छत्री घटाम्बी में सन्नाद् हर्षवर्धन के पूर्वज राजा पुष्यमूति ने बसाकर अपनी राजधानी बनाया था। राजा पुष्यमूति शंख्य थे। उन्होंने राजधानी का नाम भयवानशहर के नाम पर स्वाणीस्वर और जनपद का नाम श्रीकण्ठ रखा था। सन्नाद् हर्षवर्धन ने भी अपने पुस्तकारों की भाँति पानेसर को अपनी राजधानी बनाया परन्तु छः वर्ष के पश्चात् राज्य का विस्तार होने के कारण उसने कन्नौज को अपनी राजधानी बना लिया। सन् १०१४ ईसवी में महमूद गजनवी ने पानेसर को सूटकर धाम सगा दी और बहुसंख्या में मायिकों को पकड़कर ले गया। पानेसर शहर तीन चौटियों पर बसा हुआ है। बीच की चौटी पर कभी किमा या बही प्राज खण्डहर खेखेहमी का मञ्जरा और हज्जत कुतुब जनामुद्दीन का मञ्जरा है। पूर्वी चौटी पर शहर बसा हुआ है और पश्चिमी चौटी पर कभी मुहम्मद और प्राज बाहरी प्राज बसा हुआ है। मुगल सन्नादों के बाद मयासिह और मयासिह ने पानेसर शहर पर अधिकार कर लिया और शहर को दो भागों में बाँटकर राज्य किया। शहर का पूर्वी भाग मयासिह के अधिकार में था और पश्चिमी भागसिह के अधिकार में था। सन् १८१६ ई० में मयासिह के पुत्र फ्यहसिह की मृत्यु के पश्चात् सन् १८२० ई० तक बिजया रानियों ने राज्य किया। १८२० ई० में पश्चिम सिख रानी की मृत्यु के पश्चात् पानेसर पर ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने अधिकार कर लिया। मयासिह और मयासिह पानेसर के स्वयंज सरदार नहीं थे बल्कि वे ईस्ट इण्डिया कम्पनी का कर देते थे। मुगल सन्नाद् फ़र्रुख़सिपर ने पानेसर का नाम इसलामाबाद रक़ दिया था परन्तु वह प्रचलित न हो सका। सन् १८३० ई० व १२ अगस्त सन् १९४७ ई० तक अंग्रेजों का राज्य रहा। क्रुद्धेज बीर रेमब बाँध सार्नि पर पानेसर शहर का स्टेसन है। परन्तु यह स्टेसन भी शहर से दो फ़ीसद के अन्तर पर है। इस स्टेसन पर गिच्छा और ठपि नहीं मिलते। क्रुद्धेज पानेसर शहर पर दोनों भोग नई इमारतें बन रही हैं। गीता हार्ड स्मून् की इमारत प्रायः बन चुकी है। इस प्रकार बीरे-बीरे क्रुद्धेज और पानेसर एड बनते जा रहे हैं। पानेसर की नगरपालिका बहुत पुगनी है। नगरपालिका स्वास्थ्य सञ्चार और प्रकाश का प्रबन्ध करती है। नगरपालिका की श्रेणी की है जिसमें १३ निर्बाधित सदस्य हैं। नगर के पूर्वी भाग में टाउन हाम डिस्पेन्सरी जैना अस्पताल और बमदासा है। बर्मदाना की राज्ज बर्मदाना जैसी तो नहीं है परन्तु यात्रियों के ठहरने का प्रबन्ध है। तीरमात्रा के लिए धाप हुए बहुत कम यात्री बमदाना में ठहरते हैं। अधिकतर यह बर्मदाना शहरों के लिए है। नगर में चार ठंठ बाजार हैं जिनमें प्रातःकाल की प्रत्येक मायघो मिल जाती है। पहले नगर के प्रत्येक मुहस्ते में बमदाना की परन्तु प्राज नहीं है। स्पेन-विमानन से पहले नगर की जन-संख्या प्राज हजार के लगभग थी विमानन के पश्चात् मुसलमानों के जन जात पर जनसंख्या रक़ हजार हो गई। १९३७ में क्रुद्धेज विद्यालय के बनने पर नगर में समृद्धि घाई और जनसंख्या १८ हजार हो गई।



## सन्निहित तीर्थ

कुरदोब स्टेशन से एक मील पदिपम में पक्की पहेबा रोड़ है। तयि बस रिक्शा इत्यादि कुस्सभ स्ेशन से मिल जाते हैं। धर्मशास्त्रों के अनुसार रन्तुक से घोबस तक पावन तीर्थ से अनुमुख तक बिबेदर मे हस्तिपुर तक तथा कुडन्या से घाबती मवी तक सन्निहित तीर्थ की सीमा है। प्रत्येक मास की समावस्था को ब्रह्मादि देव ऋषियग तथा समस्त विषय के तीर्थ यहाँ पर इकट्ठे होते हैं। स्वयं भगवान् विष्णु यहाँ सबैव निवास करते हैं। इसी कारण इसका नाम सन्निहित तीर्थ है। इसमें स्नान कर भयवान् विष्णु को नमस्कार करने से भस्वमेध यम का फल प्राप्त होता है तथा बिकृष्ट-भोक्त की प्राप्ति होती है। सूर्य-ग्रहण व चन्द्र-ग्रहण के समय सन्निहित तीर्थ में स्नान और वान-पुष्य करने से वान का पुष्य प्रसय होता है। सन्निहित तीर्थ पाँच ही गज सम्बा घोर डेड़ ही गज पीड़ा है। पूर्वी और पश्चिमी तट बोड़े कच्चे हैं और इभिली तट बिस्तुम कच्चा है। तीर्थ में बर्षा का जल आता है। तीर्थ पर सूर्य-ग्रहण चन्द्र-ग्रहण सोमधि समावस्था दसहरा और बावन द्वावपी के मेले लगते हैं। प्रायः कुस्सेन का पंडा सम्प्रदाय इसी तीर्थ पर मिल जाता है। सन्निहित तीर्थ के पश्चिमी तट पर दर्शन योग्य स्थान यह है। मन्दिर की श्रुत नारायण—श्री पंचायत ब्राह्मणन् रक्षिन्त्रं द्वारा निर्मित है। मन्दिर में एक और नारायण की बहुत सुन्दर मूर्तियाँ हैं। मन्दिर का गूगार श्लोकिक है। यहाँ माधियाँ को प्रत्येक प्रकार की मुषिया मिल सकती है। श्री लदमीनारायण का मन्दिर दक्षिण चौम निर्माणकामा मे बाबा सिब निर द्वारा सम्बन् १८९३ मे निर्मित हुआ। माधियों के ठहरन का प्रबन्ध है। कुछ बर्ष से यह मन्दिर उपशित वा परम्पु वर्तमान महत्त्व के परिधम से अब सुम्भवस्था है।

### गुरुद्वारा क्षेत्री पावशाही

यह गुरुद्वारा क्षेत्रों के छठे गुरु हरयोबिन्धी की स्मृति में एक टीले पर निर्मित किया गया है। गहेबा रोड़ के बिमकुम साय और सन्निहित तीर्थ व बानेवर नगर के मध्य बना हुआ है। गुरु हरयोबिन्ध कराह ग्राम से होते हुए अब कुस्सेन यात्रा के लिए पचारे हो उम्हाने यहाँ विधाम किया था। सन् १९४७ से प्रथम इस गुरुद्वारे का छोटा सा रूप था परन्तु सन् १९४७ में कुस्सेन में पाँच लाख धरखाधियों का बिसाम कर्म पड़ने से गुरुद्वारे का रूप बिसाध और नए भवन निर्मित हुए। कुस्कारे में मित्य कथा और कीर्तन होता है। गुस्पर्षों पर विशेष समारोह होते हैं। माधियों के ठहरने और भोजन का प्रबन्ध है।

## ग्रह सरोवर-कुरुक्षेत्र तीर्थ

कुरुक्षेत्र तीर्थ को ही बड़ा सरोवर कहते हैं। यह तीर्थ सन्निहित तीर्थ से घाभा फर्काने परिसर-दक्षिणी काण पर है। एक पक्की सड़क दोनों तीर्थों को मिलाती है। इस तीर्थ की सम्झाई पाँच हज़ार फुट और चौड़ाई दो हज़ार दो सौ फुट है। उत्तर और पश्चिम के घाट पक्के बने हुए हैं। पूर्वी और दक्षिण से अधिक घाट पक्के हैं। शेष बच्चे हैं। दक्षिणी किनारे कच्चा है। दो पंचायत ब्राह्मणों रविस्टम्भ कुरुक्षेत्र ने प्यारह सौ फुट सम्झा घाट बनवाया है। पश्चिमी किनारे के घाट मिस्टर सारकेन उत्तरी किनारे के घाट मिस्टर सारकेन और कसकतों के मोरबाड़ियों पूर्वी किनारे के घाट भी खारी की मोदी व भी गच्छरि विष्णु पाड़गिल भूतपूज गहनर (राज्यपाल) पंजाब द्वारा बनाए गए हैं। तीर्थ प्रायः मिट्टी से भरता जा रहा है और छः मास केबन उत्तरी किनारे पर बोज़ा बम रहता है जोप सय मूख जाता है। तीर्थ में बम बर्षा द्वारा घाटा है। मिस्टर सारकेन ने सन् १८३१ में शीतंग नदी से एक नामा तीर्थ में बम बाने के लिए बुरबाया था। परन्तु भय सरकार की योजनानुसार नामा बन्द किया जा रहा है। इससे अधिक में बम की समस्या बनी रहेगी। सारा तीर्थ कमल पुष्पों से भर हुआ है। कुरुक्षेत्र तीर्थ के मध्य में दो पुल हैं। एक बाबा भबगनाथ जी के मन्दिर में जाता है दूसरा पुल मुगल सम्राट अकबर का बनवाया हुआ है जो चन्द्रकूप और काण गंगा को जाता है। पर्यटकों के अनुसार बहाजी ने यहाँ सतयुग के घाट में श्रियों तथा मुनियों सहित उत्तर वेदी नाम का बम किया था। यहाँ सूर्यग्रहण और सोमती भमाबस्या के पर्व पर स्नान करने से प्रदाय पुण्य प्राप्त होता है।

कुरुक्षेत्र तीर्थ के पूर्वी कोण पर बाबा कासी कमसी बाने का मन्दिर, बमघाटा व घन क्षेत्र हैं जहाँ यात्रियों के ठहरने और साधु-महाराष्ट्रों के भोजन घाट का प्रबन्ध है। तीर्थ के उत्तरी छत पर बाबा गुण्ड का बेटा है। बेटे से मिलता हुआ गीर्ण्य मठ है जहाँ शैतन्य महाप्रभु द्वारा सत्वाचित सम्प्रदाय में बंगाली साधु रहते हैं। प्रागे बमकर महाराजा सीमागा द्वारा निर्मित श्री कृष्ण मन्दिर है। श्री कृष्ण मन्दिर के निकट श्री कुरुक्षेत्र पुस्तकालय और पर्यटनघाटा है। यह पुस्तकालय बहमी के सेठ रामचन्द्र सोहिया ने कुरुक्षेत्र जीर्ण-कार समिति की प्रेरणा पर बनवाया था। इसने साथ ही बाबा भबगनाथ की बड़ी हजेरी है, जिसके पूर्वी कना में पाँच पाँचक और चार-अय्या पर भेटे हुए मीप्य विद्यामह की सगमरमर की मूर्तियाँ हैं। बाबा भबगनाथ सिद्ध पुण्य से। तीर्थ के मध्य में टापू है जिसकी मुगलपुरा कहते हैं। इस टापू में किमा बमकर मुगल सैनिकों की एक टुकड़ी रहती थी जो तीर्थ में यात्रियों का स्नान नही करने देती थी। पानीपत के तृतीय युद्ध के सनातामक मराठा उत्तराचलदाशिव राव माऊ ने किसे का विद्याकर मुगल सैनिकों को भगा दिया। तीर्थ के पश्चिमी कोण पर बसने सिद्ध गुरु गोविन्दसिंहजी का गुफाघाटा है।

## गीता मन्दिर

पहेबा रोड़ पर और कुरुक्षेत्र तीर्थ के बीच सेठ कुमलकिशोरजी बिरला द्वारा निर्मित गीता मन्दिर है जो राजपूत जैन शैली निर्माण-कला में बना हुआ है मन्दिर के चारों धार उपबन्ध है। मन्दिर मुबारक रूप में प्रबन्धित है। मन्दिर के अन्दर शीवार्थ पर हिन्दू और सिख

## सन्निहित तीर्थ

कुस्तीन स्टेसन से एक मील पश्चिम में पक्की पहेबा रोड़ है। तमि कस रिक्सा इत्यादि कुस्तीन स्टेसन से मिल जाते हैं। धर्मशास्त्रों के अनुसार रम्बुक से घोसल तक पावन तीर्थ से अनुसुय तक बिबेदवर से हस्तिपुर तक तथा वृद्धकन्या से घोसवती नदी तक सन्निहित तीर्थ की सीमा है। प्रत्येक मास की समावस्था का ब्रह्मादि देव श्राद्धिगण तथा समस्त बिस्व के तीर्थ यहाँ पर इलट्ट होते हैं। स्वयं भगवान् बिष्णु यहाँ सदैव निवास करते हैं, इसी कारण इसका नाम सन्निहित तीर्थ है। इसमें स्नान कर भगवान् बिष्णु को नमस्कार करने से अस्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है तथा ब्रह्म-माक की प्राप्ति होती है। सूर्य-ग्रहण व चन्द्र-ग्रहण के समय सन्निहित तीर्थ में स्नान और दान-पुण्य करने से दान का पुण्य प्रदत्त होता है। सन्निहित तीर्थ पाँच सी पञ्च सम्पा और डेढ़ सी पञ्च बीड़ा है। पूर्वी और पश्चिमी तट थोड़े कच्चे हैं और बसिखी तट विस्तृत कच्चा है। तीर्थ में बर्षा का जल आता है। तीर्थ पर सूर्य-ग्रहण चन्द्र-ग्रहण सोमति समावस्था वरहुरा और वाहन द्वादशी के मेले मगठ हैं। प्रायः कुस्तीन का पञ्च सम्प्रदाय इसी तीर्थ पर मिल जाता है। सन्निहित तीर्थ के पश्चिमी तट पर वराम मोम्म स्नान यह है। मन्दिर भी प्रबु नारायण—श्री पञ्चायत ब्राह्मणन् रबिस्टल द्वारा निर्मित हैं। मन्दिर में प्रबु भक्त और नारायण की बहुत सुन्दर मूर्तियाँ हैं। मन्दिर का शृंगार प्रसौकिक है। यहाँ यात्रियों को प्रत्येक प्रकार की सुविधा मिल सकती है। श्री सरुमीनारायण का मन्दिर बक्षिण बीस निर्माणकला में बाबा सिब गिर द्वारा सम्बत् १८९३ में निर्मित हुआ। यात्रियों के ठहरान का प्रबन्ध है। कुछ वर्षों से यह मन्दिर उपेक्षित था परन्तु वर्तमान महत्त्व के परिधम से प्रबु सुध्दयत्वा है।

### गुरुद्वारा क्षेत्री पाबक्षानी

यह गुरुद्वारा सिखों के छठे गुरु हरगोबिन्दजी की स्मृति में एक टीसे पर निर्मित किया गया है। पहेबा रोड़ के बिलकुल साप और सन्निहित तीर्थ व बाबेसर नगर के मध्य बना हुआ है। गुरु हरगोबिन्द कराह ग्राम से होते हुए जब कुस्तीन यात्रा के लिए प्यारे तो उन्होंने यहाँ बिधाम किया था। सन् १९४७ से प्रथम इस गुरुद्वारे का क्षेत्र सा रूप था परन्तु सन् १९४७ में कुस्तीन में पाँच मास घण्टाबिर्षों का विधाम कौम पड़ने से गुरुद्वारे का रूप निबधर और नए मध्य निर्मित हुए। गुरुद्वारे में नित्य कला और कीर्तन होता है। दुस्पर्षों पर बिधेय समारोह होते हैं। यात्रियों के ठहरने और भोजन का प्रबन्ध है।

## ब्रह्म सरोवर-कुशक्षेत्र तीर्थ

कुशक्षेत्र तीर्थ को ही ब्रह्म सरोवर कहते हैं। यह तीर्थ सन्निहित तीर्थ से आधा पर्याय पश्चिम-दक्षिणी काण पर है। एक पक्की सड़क दोनों तीर्थों का मिलाती है। इस तीर्थ की लम्बाई पाँच हजार फुट और चौड़ाई दो हजार या सो फुट है। उत्तर और पश्चिम के भाग पक्के बने हुए हैं। पूर्वी ओर प्रायः से अधिक भाग पक्के हैं, खेप कच्चे हैं। दक्षिणी किनारा कच्चा है। श्री पंचायत बाह्यणन् रजिस्टर्ड कुशक्षेत्र न म्यारुड सो फुट लम्बा घाट बनवाया है। पश्चिमी किनारे के भाग मिस्टर आरकेन उत्तरी किनारे के भाग मिस्टर आरकेन और कमकत्ते के मोरवाकियों पूर्वी किनारे के भाग श्री खारी को मोदी व श्री गच्छरि विष्णु गाड़मिल भूगण्ड गबनर (राज्यपाम) पंजाब द्वारा बनाए गए हैं। तीर्थ प्रायः मिट्टी से भरता जा रहा है और छः मास केवल उत्तरी किनारे पर थोड़ा बल रहता है खेप सब सूख जाता है। तीर्थ में जल सर्पा द्वारा आता है। मिस्टर आरकेन ने सन् १८३१ में चौतर्प नदी से एक नाला तीर्थ में जल लाने के लिए खुदवाया था। परन्तु प्रब सरकार की योजनानुसार नाला बन्द किया जा रहा है। इससे भविष्य में जल की समस्या बनी रहेगी। सारा तीर्थ कमल पुष्पों से मरा हुआ है। कुशक्षेत्र तीर्थ के मध्य में दो पुस हैं। एक बाबा शबणनाथ जी के मन्दिर में जाता है दूसरा पुस मुगल सम्राट अकबर का बनवाया हुआ है जो अश्वमेध और बाण गंगा को जाता है। बमशास्त्रों के अनुसार ब्रह्माजी ने यहाँ सतयुग के आदि में ऋषियों तथा मुनियों सहित उत्तर वेदी नाम का यज्ञ किया था। यहाँ सूर्यग्रहण और सोमती घमावस्या के पक्षों पर स्नान करने से प्रथम पुष्प प्राप्त होता है।

कुशक्षेत्र तीर्थ के पूर्वी कोण पर बाबा काली कमसी बाले का मन्दिर, बमशास्त्रा व धन क्षेत्र हैं जहाँ यात्रियों के ठहरने और साकु-महात्मियों के मोक्षन धारि का प्रवण है। तीर्थ के उत्तरी छेद पर बाबा मुन्दर का डेर है। डेरे से मिसठा हुआ गौड़ीय मठ है जहाँ शैव्य महाप्रभु द्वारा संवर्धित सम्प्रदाय में बनानी साकु रहते हैं। प्रायः अमर महापञ्चा सीमाया द्वारा निर्मित श्री कृष्ण मन्दिर है। श्री कृष्ण मन्दिर के निकट श्री कुशक्षेत्र पुस्तकालय और बमशास्त्रा है। यह पुस्तकालय बेहनी के सेठ रामबन्ध सोहिवा ने कुशक्षेत्र जीर्णोद्धार समिति की प्रेरणा पर बनवाया था। इसके साथ ही बाबा शबणनाथ की बडी हबेसी है जिसके पूर्वी छेद में पाँच पाँच और छार चम्पा पर सेटे हुए शीष्य विज्ञानज्ञ की संगमरमर की मूर्तियाँ हैं। बाबा शबणनाथ सिद्ध पुरुष से। तीर्थ के मध्य में टापू है जिसको मुगलपुरा कहते हैं। इस टापू में जिम्मा बनाकर मुगल सैनिकों की एक टुकड़ी रहती थी जो तीर्थ में यात्रियों को स्नान नहीं करने देती थी। पानीपत के दृष्टीय युद्ध के सनानामक मरठा सरदार महापिब राय भाऊ ने जिम्मे को गिराकर मुगल सैनिकों को घमा लिया। तीर्थ के पश्चिमी कोण पर दक्षिण सिद्ध गुरु मोक्षिन्दसिद्धजी का गुह्यार है।

### गौता मन्दिर

पहला रोड़ पर और कुशक्षेत्र तीर्थ के बीच सेठ पुपसकिशारजी बिरला द्वारा निर्मित गौता मन्दिर है जो राजपूत जैन संनो निर्माण-कला में बना हुआ है मन्दिर के चारों ओर जलबन्ध है। मन्दिर मुषाव रूप से प्रवर्धित है। मन्दिर के अन्दर दीवारों पर दिव्य और सिद्ध

सन्तों के समग्रपर पर संकित बिज और उनही बाणिजो है। गीता के समग्र प्रथम्य भी समग्रपर पर संकित है। भी कृष्ण और अर्जुन की सुग्र प्रथिमार्द मन्दिर में स्थापित है। उपरान्त में बड़ा समग्रपर का बार भोक्तों से जुटा हुआ एक एक है। एक सुन्दर प्रथम्यता और संस्कृत विद्यालय है। बास्तव में यदि कुरुक्षेत्र में कोई मन्दिर है तो यही है।

### बाण गंगा तीर्थ

कुरुक्षेत्र तीर्थ के दक्षिण में तीन मील दक्षिण मार्ग पर बाण गंगा तीर्थ है। इसी मार्ग पर तीर्थ कुरुक्षेत्र से एक फसल की दूरी पर बाण गंगा का मुखात्त सिद्धमटी है। बाण गंगा तीर्थ छोटा पक्का सरोवर है। यहाँ बैलानी का मेला लगता है। महामारत बुद्ध में अवश्य की मारने की प्रतिज्ञा किए हुए अर्जुन ने दो पहर की यहाँ कुछ देर धारण किया और बाण मार कर पृथ्वी से गंगा निकाली। अर्जुन के भोक्तों ने जल पिया और मन्वान कृष्ण ने बाक्तों को जल में स्नान करवाया।

### भापगा तीर्थ

पुराणों में भापगा कुरुक्षेत्र की एक नदी का नाम है। परन्तु इस समय कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के दक्षिण में यह एक छोटा सा सुन्दर पक्का और प्राचीन तीर्थ है। श्री कृष्णपदा अर्जुनकी को मध्याह्न में पिण्डदान करने से मोक्ष प्राप्त होता है। पुराणों में लिखा है कि इस स्थान पर भी में बनाए हुए सामकों का श्राद्ध भोजन करने से पितर सदा के लिए तृप्त हो जाते हैं। जो सोय नयाजी नहीं जा सकते वे पितरों को तृप्त करने के लिए इस तीर्थ पर पिण्डदान करते हैं।

### गुरुकुल कुरुक्षेत्र

बैदिक संस्कृति के प्रचारार्थ—संस्कृत के माध्यम से विद्यार्थियों को पढ़ाने के लिए स्वर्गीय स्वामी महात्म्यजी ने इस गुरुकुल की नींव रखी। पर्याप्त भूमि और धन बानेश्वर के रहने वाला ज्योतिषशास्त्री ने दान किया। इस क्षेत्र में प्राचीन संस्कृति और संस्कृत और हिन्दी भाषा के लिए इस संस्था ने सहाय्यीय कार्य किया है।

### नरकासारी (श्रीधम कुण्ड बाण गंगा)

पक्की पहना रोड़ पर रेलवे स्टेशन कुरुक्षेत्र से तीन मील के अन्तर बाएँ हाथ प्रायः नरकासारी में श्रीधम कुण्ड बाण गंगा नाम का तीर्थ है। तीर्थ बहुत छोटा है परन्तु इसमें जल वर्ष भर रहता है। महामारत बुद्ध के चतुर्थ दिन साह्य होकर पितामह श्रीधम ने तीर्थों की प्रथम्य पर छ. माघ तक सूर्य की प्रदीक्षा की थी और कहते हैं कि इसी स्थान पर जहाँने धर्मराज मुनिष्ठा को धाम्ति पर्व का उपदेश किया था।

### ज्योतिसर तीर्थ

पहना जाने वाली पक्की सड़क पर रेलवे स्टेशन कुरुक्षेत्र से पाँच मील की दूरी पर यह तीर्थ है। यह स्थान ज्योतिसर महादेव का है परन्तु कुछ लोग कहते हैं कि यहाँ मन्वान

कृष्ण ने प्रभु को भीषण किया था। इस तीर्थ में सरस्वती का जल प्राण है। इस तीर्थ का भीष्मोद्धार स्वर्गीय स्वामी सरयान्त सरस्वती ने किया। वह वृद्ध का बबूतय और एक मन्दिर महाराज दरमया न निर्मित किया। एक मन्दिर महाराजा पत्नियाना और काश्मीर नरेश ने बनवाया था।

### कमल नाम तीर्थ

भानसर शहर के पश्चिम में एक प्राचीन मन्दिर और तीर्थ है। कहते हैं कि यहाँ सृष्टि की उत्पत्ति हुई थी। हृष्य-ब्रह्माष्टमी के शुभाशुभ पर यहाँ मना समता है।

### मन्त्रबरा शोख चेहली

रेसवे स्टेशन कृदञ्ज से कोई तीन से मील पश्चिम में भानसर नगर के उत्तर पश्चिमी कोण पर, अन्तिम हिन्दू चक्रवर्ती सम्राट् हर्षवर्धन के कर्म के लण्डहरा के पुत्र में समरमर का एक सुन्दर मन्त्रबरा है, जोकि इतना ऊँचा है कि पाँच-पाँच मील की दूरी से दिखाई देता है। यहाँ बुजियाँ के मध्य बस एकड़ बरती पर यह मन्त्रबरा बीच की चोटी पर निर्मित है। मन्त्रबरे की पश्चिम की धार की चोटी पर ग्राम बाहरी और पूर्व की धार की चोटी पर भानसर नगर की बागरी का क्रम दूर तक बना गया है। मन्त्रबरे के दक्षिण पूर्व में भानसर नगर है। पश्चिम में सम्राट् हर्षवर्धन के कर्म के लण्डहरा और कुतुब-जमानुद्दीन साहब का मन्त्रबरा और उत्तर में सम्राट् शेरशाह सूरी की लम्बी-चौड़ी टूटी सराएँ हैं। यह मन्त्रबरा मुगल निर्माण-शैली का सुन्दर प्रतिनिधि है जो कि भटिया समरमर के प्राठ कोपी टैंक पर बना हुआ है। कोई-कौई पत्थर छाऊँ और अन्धे समरमर का भी है परन्तु अधिक संख्या मटियाले और कानी पारियों वाले समरमर की है। मन्त्रबरे के गुम्बद के चारों ओर छोटी ईंटों से बनी किनारी है जिस पर छत्रद पमस्तर किया हुआ है। मन्त्रबरे के अन्दर दो द्वारे हैं—एक तो अलखहसी साहब की दूखण न जाने किसकी। मन्त्रबरे की बनावट देखन योग्य है। मन्त्रबरे से पन्द्रह-बीस पग पर पश्चिम की ओर कुरखरे मूरे पत्थर का मन्त्रबरा है जिसमें न जान किन पुरखियों की कबर है। दक्षिण की ओर एक बड़ी चाकोर खानकाह है, जिसकी छत्रों काट की हैं जो कुछ टूट गई हैं और कुछ ठीक दगा में हैं। खानकाह के मध्य में पानी का हौज है जिसके बीच का द्वारा समय की मरकरता पर रो-ध हुआ है। इस हौज को पानी से भरने के लिए खानकाह की दक्षिणी सीमा पर बाहर की ओर एक बहुत गहरा कुआँ है। खानकाह में अथ घाटी से राखकीर स्तूप बन रहा है। मन्त्रबरे पर जान के लिए खानकाह में से जाना पड़ना है जिसके दाहिने ओर पूर्व और पश्चिम में हैं। मन्त्रबरे के चारों ओर बनी बुजियाँ पर खीन विचकारी का काम हुआ है जो पीरे पीरे मुग हो रहा है और नीचे की काली मृत्ति उभरन लगी है। इजरायल शोख बेहली की वास्तविक कबर मन्त्रबरे के नीचे है जिसका नाम खानकाह के एक कमरे से मुगल द्वारा आया है। देहली से प्रभुतय तक पंजाब भर में इस मन्त्रबरे के प्रतिरिक्त और कोई समरमर की मुगल निर्माण का प्रतिनिधित्व करने वाली इमारत नहीं। मन्त्रबरे का गुम्बद देहली-स्थित सम्राट् हुमायूँ के मन्त्रबरे के गुम्बद से सुन्दर है।

इस मन्त्रबरे का उम शोख बेहली से कोई सम्बन्ध नहीं जिसकी कि मूलना की

कहानियाँ प्रचलित हैं। तबकरते-सोलिया के धनुवार हज्जत सेठ बेहसी एक इरानी साधु से जो मुगल सम्राट् शाहजहाँ के साठनकाम में भारत में हजरत कुतुब जसामुद्दीन से मिलने जानेसर आए थे। कहते हैं कि हजरत जसामुद्दीन कुतुब उस समय के सूफ़ी-सम्प्रदाय के सिद्ध साधु थे। उनकी तपस्या की ख्याति भारत की सीमाएँ पार कर गई थी।

एक बार सम्राट् शाहजहाँ ने साहीर से दहली जाते हुए बड़ी घेना के साधु जानेसर में पढ़ाव डाला। हजरत कुतुब-जसामुद्दीन साहब ने सम्राट् और उसकी सेना को भोजन का निमन्त्रण दिया। कहावत है कि कुतुब साहब ने एक प्यासा पानी और अभी रोटी से समस्त मुगल सेना को भोजन करवा दिया। सम्राट् इस चमत्कार को देखकर इतना प्रभावित हुआ कि उसने कुतुब साहब के लिए यह मक़बर बनवा दिया। उन्हीं दिनों हजरत सेठ बेहसी कुतुब साहब से मिलने प्राण और प्राणायाम करते हुए स्वर्ण सिंधारे। कुतुब जसामुद्दीन के परामर्श से सेठ बेहसी साहब को इस मक़बरे में समाधि दी गई और तब से यह मक़बर सेठ बेहसी कहलाने लगा। इस मक़बरे के नाम कोटी भरती नहीं है। हजरत कुतुब जसामुद्दीन का मक़बर जो निकट ही बना है के नाम छाक़ुर तसहेमी इत्यादि नामों की पड़ी है।

मराठों और अफगानों के संघर्ष और सिद्ध सतनुब स्टेटस के दिनों में इस मक़बरे की कोई बेमरक नहीं हुई। अंग्रेजों ने मक़बरे की मरम्मत करवाई। देश के विभाजन सन् १९४७ के दिनों में किसी ने मक़बरे के अन्दर का पत्थर उखाड़ लिया जिसको फिर किसी ने नहीं सगवाया।

### कालेश्वर तीर्थ

जानेसर शहर के पश्चिमी-उत्तरी कोस पर मह तीर्थ है। यहाँ माघ मास में स्नान का माहारम्य है।

### सम्राट् हर्षवर्धन के किले का खण्डहर

मक़बरा सेठ बेहसी के पश्चिम में यह विद्यालय खण्डहर कमल नाम तीर्थ से कालेश्वर तीर्थ तक फैला हुआ है। इस खण्डर की खुदाई होना आवश्यक है। ऐतिहासिक दृष्टिकोण से देखने वालों के लिए यह खण्डर बहुत महत्व रखता है।

### स्थानीश्वर महादेव मन्दिर व तीर्थ

जानेसर शहर से उत्तर में जो ऊँचाई की हूरी पर बड़े प्रसिद्ध मन्दिर व तीर्थ है। धार्मिक मन्दिर पानीपत के तृतीय युद्ध के सेनानी सदाशिवराज भाऊ द्वारा निर्मित है। इसी मन्दिर के नाम पर जानेसर अर्थात् स्थानीश्वर शहर का नाम है। इस तीर्थ पर कालिक के पूरे मास स्नान व पूजा होती है। प्रति सोमवार को बड़े संख्या में लोग मन्दिर के दर्शनार्थ जाते हैं। यहाँ शिवरात्रि का बड़ा मेला लगता है और एक बरसक व्योति जलती रहती है। बामन पुण्य के धनुवार राजा बेण का कुष्ठ इस तीर्थ में स्नान करने से दूर हो गया था।







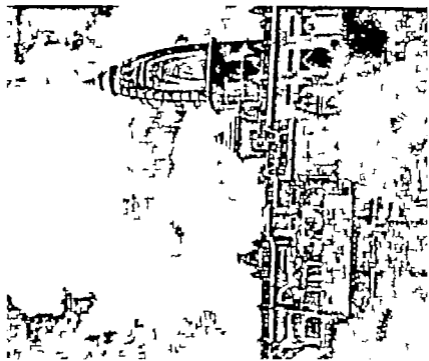
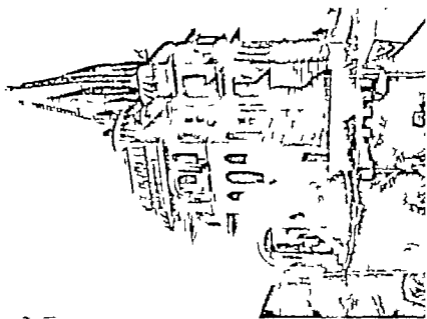
श्री दुर्ग मातामय का मंदिर, जो सल्लिहिट्ट टीर्थ पर बना है





महापद्मना पटियासा द्वारा निर्मित पीठा मंथिर-श्वोतिसर





## गुह्यारा नवीं पावशाही

स्वास्त तीर्थ के उत्तर-पूर्वी कोण पर नवें सिख गुरु तेगबहादुरजी का ऐतिहासिक गुह्यारा है।

### भद्रकाली-जुर्गाकूप

भद्रकाली जुर्गा के प्रसिद्ध स्वानों में से है। यहाँ सती का दाहिना पाँव मिला था। यह मित्र पीठ है। भानेसर शहर के उत्तर में पक्की सड़क भौंवा रोड़ पर है। महाभारत काल में अर्जुन ने रणकण्ठी के रूप में इसका प्राङ्गण किया था। कुछ व्यक्ति इसी कारण इसे रण कण्ठी का मन्दिर भी कहते हैं। यहाँ पर पहले षोडशे की बलि दी जाती थी। आज भी कुर्ण के चारों ओर मिट्टी के षोडशे रखे हुए हैं।

### प्राची-सरस्वती

कहते हैं कि पंगानी के पाप भी इस तीर्थ में स्नान करने से दूर होते हैं। तीर्थ बहुत छोटा है, जिनमें सरस्वती का जन्म प्राता है।

### कुबेर तीर्थ

सरस्वती नदी के तट पर छोटा-सा पक्का तीर्थ है। इस तीर्थ की कृदार्द्र में श्रीभीमसाम्बरी की मगवान विष्णु और शिव-यावती की मूर्तियाँ निकली थीं जो वहीं रखी हुई हैं। यहाँ मघराज कुबेर ने तप किया था।

### महाराजा फरीदकोट की समाधि

सिख निर्माण कला (घर्बाण् मुकन और राजपूत निर्माण कला का विपदा रूप) में बनी हुई समाधि है, जो सुन्दर बनी हुई है और सरस्वती नदी के तट पर है। इस मकन की चित्रकारी प्राचीन भारतीय चित्रकला का प्रत्यक्ष प्रमाण है। इस समाधि की देखरेख और प्रबन्ध अब भी महाराजा फरीदकोट की धार से होता है। समाधि के चारों ओर साज के बने वृक्ष हैं।

सन् १९११ में महाराजा फरीदकोट बजीरसिंह ने समस्त कुम्होव भूमि का भ्रमण करके सरस्वती तट पर अपने प्राण त्यागे थे।

संवेदी राज्यकाल में १८१२ ई० से यह प्रथा रही कि जब प्रथम बार गवर्नर जनरल (बाइसराय) कुस्तान पवारें तो श्री परामत बाहालान् रजिस्टर्ड कुम्होव को पाँच ही रूप में दे करे और जब प्रथम बार प्राण के गवर्नर कुम्होव प्राण तो यहाँ १८१२ ई० में दे करे।

# श्री कुरुक्षेत्र का परिक्रमा भ्रमण

## १ उत्तरमण

- १ रत्नकु मण २ कोटी तीर्थ ३ बुद्धकन्या तीर्थ ४ मंगारुह तीर्थ  
२ अमोम ग्राम

मुन्दरपुर, लड़ी गोवर्धनपुर, अमीन यह सब अग्निनी बन म है । १ मूय कुम्ह तीर्थ  
२ अविती कुम्ह ३ अफम्पुह तीर्थ ४ कामन कुम्ह तीर्थ ५ सीम कुम्ह तीर्थ ६ अस्विनी  
कुमार तीर्थ ।

## ३ सगा ग्राम

अदिती बन स अकर विष्णु स्थान एगा अकम से एंछका ग्राम १ बुद्ध तीर्थ  
२ विमल तीर्थ ३ विमसेस्वर तीर्थ ।

## ४ मसोसपुर ग्राम

पारासर ग्राम १ अवन तीर्थ २ अहस्थान तीर्थ ।

## ५ बासु ग्राम

१ क्रीडिकी-अगम तीर्थ २ पृथ्वी तीर्थ ३ बासु तीर्थ ।

## ६ अ गोप ग्राम

१ अचरप तीर्थ ।

## ७ अण्णर ग्राम

१ पुष्कर तीर्थ २ अगम तीर्थ ३ पुरन्धर तीर्थ ।

## ८ कुडिन्त्याणा ग्राम

१ कोटी तीर्थ

## ९ सारवणु ग्राम

१ पावन तीर्थ २ हंस तीर्थ

## १० सर्पदमन (सफीरों ग्राम)

रसाधु अण्ण तीर्थ सीमणु ग्राम अौर फिर अफीरों महीं पठीधत के पुन अतमेअय ने  
मागयन्न किया था ।

## ११ सीसग्राम (पाषी)

पाषी अ अहापुरपुर इसके अग्नेय कोण में पुन विद्या में अरन्तुक मण है इसके मण  
तीर्थ कहते हैं । महीं सारु तीर्थ भी है ।

## १२ घरास ग्राम

१ पंचनद तीर्थ २ कामिस्तता तीर्थ ३ नाटी तीर्थ ४ कोटेश्वर महादेव तीर्थ  
आदि स्थित हैं ।

## १३ सोयया ग्राम

घासन ग्राम जाते हुए मार्ग में कसीठी कामूग्राम । घासन में १ यमाति कुण्ड तीर्थ  
२ सूर्य कुण्ड तीर्थ ३ रूप तीर्थ, ४ प्रसवैती तीर्थ ।

## १४ पुलहड़ ग्राम

बराह खेड़ी में बराह तीर्थ ।

## १५ रसूमपुर ग्राम

यहाँ उत्तर की ओर ऋषियों के साठ कुण्ड हैं । इसके पश्चिम पूर्व में सूर्य कुण्ड और  
पश्चिम में ब्रह्मरूप तीर्थ है । इसी ग्राम के निकट भूतेश्वर महादेव का मन्दिर है । ज्योति  
शान के निकट ज्वालामासेस्वर तीर्थ है ।

## १६ बीर ग्राम

बीर नगर से ईसान कोण में १ अस्तिभारा तीर्थ है । बीर नगर के पूर्व में  
२ मिलमती तीर्थ है ३ सोम तीर्थ ४ ज्वालामासेस्वर तीर्थ ।

## १७ पुनपुना ग्राम

पुनपुना ग्राम से एक कोस पर बराहखेड़ी में कृतघ्नी तीर्थ है ।

## १८ पुष्कर खेड़ी

१ मुजबट तीर्थ ।

## १९ रामहूब ग्राम

यहाँ चार यज्ञ विद्यास करते हैं । महापधिखी रमारव कविम यज्ञ उद्घोषणा  
वसिष्ठी ।

१ हत्पाहरण तीर्थ २ सूर्य कुण्ड तीर्थ ३ परशुवाम तीर्थ

## २० विरसोसा ग्राम

१ बंधमूस तीर्थ

## २१ कसूर ग्राम

१ कायसोचन तीर्थ

## २२ सोहापार ग्राम

१ सोकोठार तीर्थ २ कुच तीर्थ ३ सूर्यकुण्ड

## २३ मङ्गौर ग्राम

१ भी तीर्थ २ विद्व लिंग तीर्थ ३ मुकुट तीर्थ

## २४ कलायत ग्राम

१ कपिलहूब तीर्थ २ कपिलेश्वर तीर्थ

## २५ जुहाणा ग्राम

१ मशामवन तीर्थ २ गणेश तीर्थ

## २६ सज्जमा ग्राम

१ भूप तीर्थ २ सूर्य कुण्ड

## २७ सांगिली ग्राम

१ सांगिनीदेवी तीर्थ २ सूर्य तीर्थ ३ ब्रह्म तीर्थ ४ देवी तीर्थ ।

## २८ धराहू ग्राम

१ धारपाम वागुकी यश २ यशतीर्थ ३ भ्रम कुण्ड ४ बँसुड तीर्थ ।

## २९ माणस ग्राम

१ प्रह्ला तीर्थ

## ३० पौलखी ग्राम

१ मृति तीर्थ २ भवनी तीर्थ ।

## ३१ सोवन ग्राम

१ धी तीर्थ २ डंडन तीर्थ ३ स्वानुमोग तीर्थ ४ मह्यपि तीर्थ ५ म्बुअण तीर्थ  
६ बसावमेध तीर्थ ।

## ३२ माणस ग्राम

१ मानुष तीर्थ ।

## ३३ शापडी ग्राम

१ शापया नदी तीर्थ २ सप्त ऋषि तीर्थ ऋषियों के नाम से हैं—ब्रह्मात्र बौद्ध  
जमदग्नि काशमप बिस्वामित्र बसिष्ठ प्रचय ।

## ३४ कैपल मयूर

१ कृदकेवार २ बिडी तीर्थ ३ लकुनी तीर्थ ४ कर्म तीर्थ ५ बिडी  
६ पुष्करिक ७ अंजनी मन्दिर ।

## ३५ पयोङ्क ग्राम

१ कोटीझूट तीर्थ ।

## ३६ बरौठ ग्राम

१ बटेबर तीर्थ २ विध्या तीर्थ ।

## ३७ नागरह घोस ग्राम

१ पुष्करिक तीर्थ ।

## ३८ ह्योठा ग्राम

१ बिबिष्टप २ बँतरणी नदी तीर्थ ३ धूलपाणिधि तीर्थ ।

## ३९ सकरा ग्राम

१ शक्रार्ज तीर्थ २ पदमाके तीर्थ ।

## ४० फरस ग्राम

१ सोमवटी तीर्थ २ सर्वालंकर तीर्थ ३ पानिजात तीर्थ ४ सूर्य कुण्ड ५ सुक  
तीर्थ ।

## ४१ निलग ग्राम

१ घबरी तीर्थ २ विष्णु तीर्थ ।

## ४२ बरास ग्राम

१ बनोकामना तीर्थ २ कोटि तीर्थ ३ पंचक तीर्थ ४ सूर्य कुण्ड, ५ विसोतमा तीर्थ ।

## ४३ रसीछा ग्राम

१ कल्याणोत्तम तीर्थ ।

## ४४ मोहिछा ग्राम

मोहिछा इच्छना और हावड़ी इन तीन ग्रामों में १ इच्छ तीर्थ २ काम्य तीर्थ ३ सूर्य कुण्ड तीर्थ ४ मधुवन तीर्थ ।

## ४५ बसतसो ग्राम

भक्त्या युक्त नाम व्यासस्वामी है । यहाँ व्यासस्वामी नाम का तीर्थ है ।

## ४६ सोतामठ ग्राम

१ बेदी तीर्थ है ।

## ४७ कोईट ग्राम

१ कौटिकी महारथ तीर्थ ।

## ४८ बिसईडू ग्राम

१ मुद्रिन तीर्थ २ बर्देन तीर्थ ३ हिरण्यवती तीर्थ ।

## ४९ निगपू ग्राम

१ मन्वाकिनी तीर्थ, २ रत्नपत्र तीर्थ ३ पय तीर्थ ।

## ५० बड़साम ग्राम

१ बिष्णु तीर्थ २ ज्येष्ठायम तीर्थ ३ कोटि तीर्थ ४ सूर्य तीर्थ ५ कुमोत्तारण तीर्थ ।

## ५१ किरमिच ग्राम

१ कुमोत्तारण तीर्थ २ महिकुण्ड तीर्थ ३ केगरी तीर्थ ।

## ५२ पबनाबा ग्राम

१ पबनरथ तीर्थ २ मयल तीर्थ ३ अमृतस्वामी तीर्थ ।

## ५३ अबसामा ग्राम और कोल ग्राम

१ कामबेदर तीर्थ २ भावातराज ।

## ५४ कारसा ग्राम

१ कारण्ड तीर्थ ।

## ५५ सारसा ग्राम

१ सालीहोत्र तीर्थ ।

## ५६ व्यासछेड़ी ग्राम

१ वैद्यप्यापन हृद ।



## ५७. मसकल खेड़ी ग्राम

१ सूर्य तीर्थ ।

५८ ककैवर ग्राम

१ श्रीकृष्ण तीर्थ ।

५९ नाऊध ग्राम

१ बिहार कुण्ड तीर्थ ।

६० बसोती ग्राम

१ बरबती तीर्थ ।

६१ भार्या ग्राम

१ ब्रह्मस्थानिक तीर्थ ।

६२ गुमयला ग्राम

१ घोम तीर्थ ।

६३ मयरा ग्राम

१ सप्त सारस्वती तीर्थ २ सुप्रभा ३ काँचवाडी ४ विद्या ५ सुमनोहर

६ मुनेयु ७ घोष नाम सारस्वती ८ विमलोदका ।

६४ सतोड़ा ग्राम

१ कपासमोचन तीर्थ २ धुक्र तीर्थ ।

६५ पहेबा ग्राम

१ ब्रह्मयोनि तीर्थ २ घमि तीर्थ ३ उर्तक तीर्थ ४ घतिघन तीर्थ ५ त्रिभु  
तीर्थ ६ मनोवती तीर्थ ७ विश्वामिष तीर्थ ८ घोम-काठिकेय मन्दिर ।

६६ उरणाय (हरखाय) ग्राम

१ यमिष्ठ प्राची तीर्थ २ भरुणाय घमन तीर्थ ३ समुद्र तीर्थ ।

६७ कमोडा ग्राम

१ कामेश्वर तीर्थ ।

## सम्बन्ध पुस्तक-सूची

- |   |                       |
|---|-----------------------|
| 1 Asura India Patna 1926                                    | by Banerji Sastri.    |
| 2 Aryan Immigration into Eastern India                      | by Bhandarkar D. R.   |
| 3 Lectures on the Ancient History of India                  | by                    |
| 4 Some aspects of Ancient Indian Culture                    | by                    |
| 5 Aryans in Eastern India in Rigvedic Age                   | by Chakladar H. C.    |
| 6 Eastern India and Aryavarta                               | by                    |
| 7 The Ancient Geography of India                            | by Cunningham A.      |
| 8 Rigvedic India Calcutta 1921                              | by Dass A. C.         |
| 9 The Geographical Dictionary of ancient-<br>Medieval India | by Dey N. L.          |
| 10 Anthro Geo Geography of Vedio India                      | by Dikshitar V. R. R. |
| 11 Aryanisation of Eastern India                            | by                    |
| 12 Aryanisation of India                                    | by Dutt, N. K.        |
| 13 Das purana Panchalakshana                                | by Kirfel W.          |
| 14 Rivers of India  | by Law B. C.          |
| 15 Tribes in ancient India                                  | by "                  |
| 16 Ancient Indian Historical Tradition                      | by Pargiter F. E.     |
| 17 Dynasties of Kaliage                                     | by ,                  |
| 18 Chronology of ancient India                              | by Prahan S. N.       |
| 19 Pro Muslim India   | by Rangacharya V.     |
| 20 Indo-Iranian Border lands                                | by Stein M. A.        |
| 21 On Some Rivers names in Rigveda                          | by "                  |
| 22 The Rigveda & The Punjab                                 | by Woolner A. C.      |



